पुण्य पुरुष

देवेन्द्र मुनि

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पुण्य-पुरुष

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पुण्य-पुरुष

[पौराणिक-रोचक-उपन्यास]

लेखक

अध्यात्मयोगी राजस्थानकेसरी उपाध्याय

श्री पुष्कर मुनि जी के सुशिष्य

श्री देवेन्द्र मुनि शास्त्री

श्री तारक गुरु जैन ग्रन्थालय : उदयपुर

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

श्री तारक गुरु जैन ग्रन्थालय का पुष्प : १३७

☐ पुण्य-पुरुष

☐ लेखक :
देवेन्द्र मुनि शास्त्री

☐ सम्पादक:
श्री ज्ञान भारिल्ल

☐ प्रकाशक:
तारक गुरु जैन ग्रन्थालय
ज्ञास्त्री सर्कल, उदयपुर (राज०)

☐ वि० सं० २०३७ श्रावणपूर्णिमा
ई० सन् १९८०, अगस्त

☐ श्रीचन्द सुराना के लिए
प्रिंट सेंटर (आगरा)

☐ मूल्य : पाँच रुपया मात्र

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

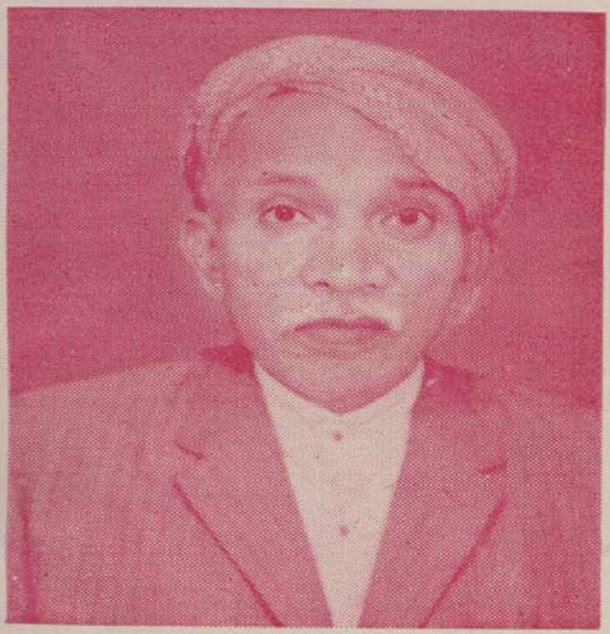

धर्मप्रेमी, गुरुभक्त, उदारचेता

श्रीमान सेठ घासीरामजी रिखबाजी बाफणा, सेमल

फर्म—नेमीचन्द ख्यालीलाल जैन

मनोहर रोड, पालघर (महाराष्ट्र)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

प्रकाशकीय

कथा की अकथ लोकप्रियता सर्व-विदित ही है। छोटे बड़े सभी की रुचि को तृप्त करनेवाली कथाशैली में यहाँ ऐसी अद्‌भुत आश्चर्यकारी घटनाएँ गुम्फित हैं जिनको पढ़-सुनकर हृदय भाव-विभोर हो जाता है।

प्रस्तुत-उपन्यास—'पुण्य-पुरुष' में जैन इतिहास व पुराण की एक अद्‌भुत रस-कथा है। श्रीपाल-मैनासुन्दरी की कथा संपूर्ण जैन जगत में बड़ी ही श्रद्धा भावना के साथ सुनी जाती है, पढ़ी जाती है। इस कथा में कुछ ऐसा अद्‌भुत रस और प्रेरणा छिपी है कि पाठक-श्रोता धन्य-धन्य कह उठते हैं।

आदरणीय श्री देवेन्द्र मुनिजी महाराज ने बहुत ही परिश्रम करके इस कथा को उपन्यास शैली में ढाला है। श्री ज्ञान भारिल्ल जी ने सम्पादन किया है। आशा है कि पाठक इसे प्रेम पूर्वक अपनायेंगे।

—मन्त्री

तारक गुरु जैन ग्रन्थालय

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

लेखकीय

भारतीय कथा साहित्य में जैन कथा साहित्य का अपना विशिष्ट स्थान रहा है। अतीत काल से ही जैनमनीषी कथाओं के माध्यम से धार्मिक, दार्शनिक और सांस्कृतिक उन गहन रहस्यों को उद्घाटित करते रहे हैं जो अत्यन्त गम्भीर थे। यही कारण है कि कथा साहित्य को भी वही गौरव मिला है जो द्रव्यानुयोग, गणितानुयोग और चरणकरणानुयोग को मिला है। आगम साहित्य में शताधिक कथाएँ हैं। आगमों की जो संक्षिप्त सूची प्राप्त होती है उससे स्पष्ट है कि आगमों में करोड़ों कथाएँ थीं। उनमें कुछ कथाओं के पात्र प्रागैतिहासिक काल के, कुछ कथाओं के पात्र ऐतिहासिक, पौराणिक और काल्पनिक भी रहे हैं। आगमों के पश्चात् उसके व्याख्या-साहित्य—निर्युक्ति, भाष्य, चूर्णी, टीकाओं में भी कथाओं का विकास मिलता है और शताधिक स्वतन्त्र कथा-ग्रन्थ भी उपलब्ध होते है। उस विराट् कथा-साहित्य को देखकर अनेक विचारकों को भी आश्चर्य होता है। भाषा की दृष्टि से जैन कथा साहित्य प्राकृत, संस्कृत, अपभ्रंश, पुरानी गुजराती व राजस्थानी, मराठी और दक्षिण की कन्नड, तेलगु, तमिल आदि में मिलता है। आधुनिक युग में हिन्दी में और गुजराती में विपुल कथा-साहित्य प्रकाशित हुआ है।

महामन्त्र नवपद के अद्भुत प्रभाव को बताने के लिए जैन मनीषियों ने श्रीपाल की कथा का उल्लेख किया हैं। श्रीपाल के

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पवित्र चरित्र को लेकर तीस से भी अधिक रचनाएँ संप्राप्त होती हैं। इस कथा की यह विशेषता रही है कि श्वेताम्बर और दिगम्बर दोनों ही परम्पराओं के विज्ञों ने इस पर जम कर लिखा है। परम्परा-भेद के कारण श्वेताम्बर और दिगम्बर लेखकों में कुछ परिवर्तन परिलक्षित होता है, पर मूल कथानक में कोई विशेष अन्तर नहीं है।

आधुनिक अनुसंधान से यह स्पष्ट यह है कि यह कथा आगम साहित्य में नहीं आई। सर्वप्रथम वज्रसेन गणधर के प्रमुख शिष्य हेमतिलकसूरि थे और उनके शिष्य रत्नशेखरसूरि थे, उन्होंने प्राकृत में "सिरिवालकहा" आख्यान की रचना की। उनके शिष्य हेमचन्द्र साधु ने वि० सं० १४२८ में इस ग्रंथ को लिपिबद्ध किया। रत्नशेखरसूरि सुलतान फिरोजशाह तुगलक के समकालीन थे। प्रस्तुत ग्रन्थ में १३४२ गाथाएँ हैं। कुछ गाथाएँ अपभ्रंश की भी हैं। ग्रन्थ में अरिहन्त, सिद्ध, आचार्य, उपाध्याय, साधु, ज्ञान, दर्शन, चारित्र, और तप इन नौ पदों की उपासना पर बल दिया है। इन नौ पदों के अपूर्व माहात्म्य को बताया है। पूर्व जन्म के संचित कर्म किसप्रकार दारुण वेदनाएँ प्रदान करते हैं, उन दारुण वेदनाओं को नौ पद की साधना से त्राण मिल सकता है। प्रस्तुत ग्रन्थ पर खतरगच्छ के क्षमाकल्याण जी ने सं० १८६९ में टीका भी लिखी है।

रत्नशेखरसूरी के शिष्य हेमचन्द्र ने बहुत ही संक्षेप में संस्कृत गद्य में श्रीपाल कथा लिखी है।

सत्यराजगणी जो पूर्णिमागच्छ के गुणसमुद्रसूरी के शिष्य थे, जिन्होंने वि० सं० १५१४ या १५५४ में गीर्वाण गिरा में

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

५०० श्लोकों में इस कथा की, 'श्रीपाल चरित्र' के नाम से रचना की। वृद्ध तपागच्छ के लब्धीसागर गणी ने ५०७ श्लोकों में "श्रीपाल कथा" का उट्टंकन किया है जिनका रचनाकाल सं० १५५७ है। वृद्ध तपागच्छ के धर्मधीर ने संस्कृत भाषा में "श्रीपाल चरित्र" को लिखा जिनका रचनाकाल सं० १५७३ है। तपागच्छीय ज्ञानविमलसूरी ने संस्कृत गद्य में सं० १७४५ में 'श्रीपाल चरित्र' का निर्माण किया। खरतरगच्छ के जयकीर्ति सूरि ने संस्कृत गद्य में जिसका ग्रन्थाग्र ११०० है, 'श्रीपाल चरित्र' की रचना की। रचनाकाल १८६८ है। इस पर एक टीका भी प्राप्त है, किन्तु उसका लेखक कौन है—यह अभी तक निर्णय नहीं हो पाया है। जीवराजगणी और सोमचन्द्रगणी ने संस्कृत गद्य में 'श्रीपालचरित्र' की रचना की है। विजयसिंहसूरि, वीरभद्र सूरि, प्रद्युम्नसूरि, सौभाग्यसूरि, हर्षसूरि, क्षेमलक, इन्द्रदेवरस, विनयविजयजी, लब्धिमुनि प्रभृति सन्तों ने श्रीपाल को अपने चरित्र का नायक बनाया। इनके अतिरिक्त 'श्रीपाल रास' भी अनेक मिलते हैं। विस्तार भय से उन सभी ग्रन्थों की लम्बी सूची यहाँ नहीं दी जा रही है।

दिगम्बर परम्परा में भट्टारक सकलकीर्ति का रचित 'श्रीपाल चरित्र' प्राप्त होता है। यह ग्रंथ ७ परिच्छेदों में विभक्त है। इनके साथ ही विद्यानन्दी, मल्लिभूषण, श्रुतसागर, ब्रह्मनेमिदत्त, शुभचन्द्र, पं० जगन्नाथ, और सोमकीर्ति ने भी 'श्रीपाल चरित्र' की रचनाएँ की हैं। सं० १५३१ में सिद्धसूरि ने श्रीपाल चरित्र पर एक नाटक का भी निर्माण किया।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अपभ्रंश भाषा में कवि रईधू और पं० नरसेन के 'सिरिपाल चरित्र' उपलब्ध होते हैं।

श्रीपाल चरित्र की कथा एक धार्मिक कथा है। इस कथा में पात्रों के चरित्र का उत्थान-पतन, कथा में प्रवाह समुत्पन्न करने के लिए यत्र-तत्र कथा में मोड़ दिया गया है जिससे कथा में सरसता, रोचकता और चित्ताकर्षकता बनी रहती है। कथा में प्रासंगिक कथाएँ भी बहुत ही कुशलता के साथ गुम्फित की गई है। राजा प्रजापाल एक निष्ठुर पिता है। वह अत्यन्त क्रुद्ध होकर अपनी फूल-सी सुकुमार कन्या को एक कोढ़ी को समर्पित कर देता है। वह एक प्रकार से आधुनिक युग का यथार्थवादी पिता के सदृश है। और इधर माँ का हृदय मक्खन से अधिक मुलायम है। माँ की ममता और पिता के हृदय की कठोरता इन दोनों विरोधी शक्तियों का सुन्दर समन्वय है। मैनासुन्दरी आधुनिक युग की नारी की तरह है जो अपने पिता को भी चुनौती देती है। उसके मिथ्यावाद को वह स्वीकार नहीं करती। उसके स्वर में सत्य है। उसका यह दृढ़ मन्तव्य है कि कुछ क्षणों के लिए भले ही सत्य का सूर्य धुँधला हो जाय, किन्तु लम्बे समय तक वे बादल जो उमड़-घुमड़ कर आते हैं, वे आच्छन्न नहीं रहते। उसका आत्मविश्वास और आत्मबल अपूर्व है।

प्राचीन युग में बहु विवाह की प्रथा गौरव के रूप में मानी जाती थी। इसलिए श्रीपाल भी अनेक विवाह कर उस परम्परा को निभाता है। धवल श्रेष्ठी जैसे निपट स्वार्थी व्यक्ति समाज के लिए कलंक रूप है। आज भी इस प्रकार के कृतघ्न व्यक्तियों की कहाँ कमी है। कथानक में श्रेष्ठ और कनिष्ठ ये दोनों ही पात्र आते हैं जो

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अपनी चारित्रक स्खलनाओं के द्वारा और चारित्रिक निर्मलताओं के द्वारा अपकर्ष और उत्कर्ष करते हैं। दूध-मूंहे श्रीपाल का अपने चाचा के क्रूर अत्याचार व आतंक से त्रस्त होकर करुणा मूर्ति माँ के साथ जंगलों में भटकना और भयंकर कुष्ठ रोग से ग्रसित व्यक्तियों के सम्पर्क में रहकर अपना रक्षण करना, यह प्रबुद्ध पाठक के हृदय को दहलाने वाला है। जब स्वार्थ शैतान की आन्त की तरह बढ़ जाता है तब परिवार विघटित हो जाता है और उन पर सदा सर्वदा के लिए दुःख के काले बादल मंडराने लगते हैं। सामाजिक जीवन तभी स्वर्गीय बनता है जब पारिवारिक जनों में धार्मिक चिन्तन हो, कषायों की न्यूनता हो, व्यापक दृष्टिकोण हो। कर्तव्य-पालन के लिए सदा कटिबद्ध हो। प्रेम, सेवा, सहयोग, सहिष्णुता, अनुशासन और कर्तव्यपालन की उदात्त भावनाएँ जब अंगडाइयाँ लेती हैं तब सामाजिक जीवन का कायाकल्प होता है। श्रीपाल अपने जीवन में कठोर श्रम करता है। उसके मन के अणु-अणु में नव-पद के प्रति गहरी निष्ठा है। दुःख के घनघोर बादल नव-पद-स्मरण के दक्षिणात्य पवन के चलते ही एक क्षण में विनष्ट हो जाते हैं।

मैनासुन्दरी साहस की व सहिष्णुता की एक जाज्वल्यमान प्रतीक है। वह अपनी अपूर्व धर्मनिष्ठा, त्याग और साहस से अपने पति को और अन्य ७०० सज्जनों को भी स्वस्थ बनाती है। मैंने उसी प्राचीन कथा के मूलस्रोत को ध्यान में रखकर उपन्यास विधा में "पुण्य-पुरुष" शीर्षक से इसे लिखा है। उपन्यास की दृष्टि से जहाँ कहीं भी कथा को आधुनिक रूप दिया है किन्तु मूल वही है।

आधुनिक युग में उपन्यासों की बाढ़-सी आ रही है। और

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

वे अत्यधिक लोक-प्रिय भी होते चले आ रहे हैं। कितने ही उपन्यास तो इतने निम्नस्तरीय हैं कि वे मानवता के लिए कलंक रूप है। उनमें सेक्स भावनाएँ इतने विकृत रूप से उभारी गई हैं कि पढ़ते-पढ़ते सिर लज्जा से नत हो जाता है। चोरी, डकैती बलात्कार, अनुशासनहीनता आदि तत्वों को प्रोत्साहन दिया गया है जिससे आज देशनिवासियों का चारित्रिक पतन हुआ है। साहित्यकारों का दायित्व है कि वे ऐसे साहित्य का निर्माण करें जो देश निवासियों के लिए वरदान रूप में हो।

प्रस्तुत उपन्यास चारित्रिक उत्कर्ष को लिये हुए है। सर्वत्र चारित्रक उत्कर्ष को उभारा गया है जिससे मानव पवित्र चरित्र से अपने जीवन का निर्माण करे। "शूली और सिंहासन" के पश्चात् यह दूसरा उपन्यास अपने प्रबुद्ध पाठकों को दे रहा हूँ। परम श्रद्धेय सद्गुरुवर्य उपाध्याय श्री पुष्करमुनि जी म० सा० की प्रबल प्रेरणा, आशीर्वाद से मैं साहित्यिक प्रगति कर रहा हूँ। उस असीम उपकार को ससीम शब्दों में व्यक्त करना कठिन है। साथ ही रमेशमुनि जी, राजेन्द्रमुनि जी, दिनेशमुनि आदि सन्त मण्डल की सेवा भी विस्मृत नहीं की जा सकती। उपन्यास की दृष्टि से स्नेहसौजन्यमूर्ति श्री ज्ञान जी भारिल्ल ने पांडुलिपि को निहारकर आवश्यक परिमार्जन किया है, इसलिए उनके स्नेह पूर्ण सद्व्यवहार को भी विस्मृत नहीं हो सकता। मुद्रण कला की दृष्टि से श्रीचन्द्र जी सुराना ने सहयोग दिया है वह भी सदा स्मरणीय रहेगा। मुझे आशा है प्रस्तुत उपन्यास जनप्रिय होगा और इस विधा में नये उपन्यास भी प्रदान किये जायेंगे।

आषाढ पूर्णिमा
उदयपुर (राजस्थान)

—देवेन्द्र मुनि

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पुण्यपुरुष

राजा हो या रंक, यह कामना इस संसार में सभी की होती है कि उनके घर-आँगन में फूलों जैसे कोमल प्यारे-प्यारे बच्चे खेलते रहें, उनकी नानाविध बाल-क्रीड़ाओं से वातावरण में चहल-पहल बनी रहे, उन्हें देख-देखकर आँखें और हृदय शीतल हों और वंश-परम्परा चलती रहे।

अपवाद तो सभी जगह हैं, किन्तु इस संसार में ऐसी कौन-सी नारी होगी जो एक दिन माता बनकर अपने जीवन की चरम सार्थकता को प्राप्त न करना चाहे ? और सभी कुछ हो—धन-वैभव हो, महल-अटारियाँ हों, नौकर-चाकर हों, संगी-स्वजन हों, किन्तु गोद खाली रह जाय तो फिर यह सभी कुछ धूल है। हमारे बाद कौन भोगेगा इस सारी सम्पत्ति को ? खून-पसीना बहाकर, दिन को दिन और रात को रात न समझकर, देश-विदेश की चिन्ता न कर, सर्दी-गर्मी, धूप-छाँह और सुख-दुख का विचार न कर जो यह सम्पत्ति एकत्रित की है उसका क्या होगा हमारे बाद ? एक दिन जब महाबली काल का बुलावा आयेगा

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

तब सभी को चले जाना है चुपचाप; किन्तु जाने के बाद कौन लेगा हमारा नाम ?—यह चिन्ता किस दम्पत्ति को नहीं सताती ?

चम्पानगरी के राजा सिंहरथ और रानी कमलप्रभा के पास सभी कुछ था। पुण्यकर्मों के प्रभाव से उन्हें किसी वस्तु का अभाव नहीं था, धन-वैभव की सरिताएँ बहती थीं, उनके एक इंगित मात्र पर सहस्रों लोग अपने प्राण न्यौछावर करने के लिए प्रतिक्षण प्रस्तुत रहते थे। किन्तु, बस, एक ही अभाव ऐसा था कि राजा-रानी को इतना सब कुछ होते हुए भी संसार सूना-सूना लगता था।

राजा-रानी को अपनी प्यारी-प्यारी, तोतली बोली में 'पिताजी' और 'माँ' कहने वाली कोई सन्तान नहीं थी। न कोई पुत्र और न कोई पुत्री।

सन्तान के अभाव का यह गहन दुख राजा सिंहरथ और रानी कमलप्रभा के हृदय में गहरा बसा हुआ था और धीरे-धीरे उनके शरीर को सुखाए जा रहा था।

राजा अपनी प्रिय रानी के मुरझाए हुए मुख-कमल को देखते तो उनका हृदय टूक-टूक हो जाया करता। कभी-कभी वे साहस करके कहते—

"रानी ! तुम इतनी दुखी क्यों होती हो ? धीरज धारण करो। प्रभु की कृपा हम पर कभी न कभी अवश्य होगी। तुम्हारी गोद.....।"

इतना सुनते ही वह पुत्र-विहीना नारी फफक-फफककर

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

रो उठती और अपने पति की गोद में सिर रखकर रुंधते जाते कण्ठ से कहती—

"नाथ ! मैं अभागिन हूँ। अपने साथ-साथ मैंने आपको भी मानव-जीवन के श्रेष्ठतम सुख से वंचित कर रखा है। जाने किस जन्म के किस दुष्कर्म का अभिशाप हम दोनों को घेरकर बैठा है कि सभी प्रकार के प्रयत्न करके हम हार गये, किन्तु आज तक सन्तान का मुख न देख सके।"

राजा सिंहरथ तब रानी के सिर को धीरे-धीरे सहलाते और उसे धैर्य बँधाने का यत्न करते हुए कहते—

"कमल ! शान्त हो जाओ। तुमसे मुझे कोई शिकायत नहीं है। यह तो हमारे कर्मों का ही फल है। किन्तु मुझे विश्वास है कि एक न एक दिन हमारे शुभकर्मों का उदय होगा, अवश्य होगा, और हम सन्तान का हँसता हुआ मुख अवश्य देखेंगे।"

रानी कमलप्रभा धीरे-धीरे शान्त हो जाती और बुझे हुए मन में भी आशा और विश्वास की कोई किरण सहेजे हुए अपने दैनिक कार्यों में लग जाती।

यह क्रम चलता रहता।

और उस क्रम में एक दिन सहसा ही एक शुभ परिवर्तन आया।

पुण्योदय से रानी कमलप्रभा गर्भवती हुई। गर्भ के

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

लक्षण जब प्रकट हुए तो रानी कमलप्रभा और राजा सिंहरथ के हर्ष की कोई सीमा न रही। उन्हें ऐसा लगा जैसे त्रैलोक्य की सकल सम्पदा सहसा ही उन्हें प्राप्त हो गई हो। उनका सूना-सूना जीवन धन्य हो गया हो।

राजमहल के दास-दासियों और कर्मचारियों को जब यह सूचना कानोंकान मिली तो वे हर्ष से पागल ही हो गए। वे इधर-उधर दौड़ने-भागने और उड़ने-से लगे। एक-दूसरे से टकराते और प्रेम से गले मिलते। वे कहते—

"सुना तुमने? अरे सुना कुछ तुमने? महारानी जी.....।"

"सुन लिया, सुन लिया, परे हट! मुझे बहुत काम हैं। रास्ता तो छोड़ भले आदमी, महारानी जी.....।"

सबने सुन लिया था और सब पागल-से हो गये थे। किसी को कुछ पता नहीं था कि वह कहाँ जा रहा है और उसे क्या काम है। किन्तु दौड़े-भागे सभी फिर रहे थे। हर्ष-विभोर होकर पुकारते जाते थे—सुना तुमने? अरे भाई रास्ता तो छोड़ो। महारानी गर्भवती हुई हैं? वे अब शीघ्र ही एक सुन्दर-सुन्दर, प्यारे-प्यारे राजकुमार को जन्म देने वाली हैं। हाँ, हमारा राजकुमार आने वाला है। हटो-हटो, मुझे बहुत काम हैं।

यह प्रसन्नता का पारावार राजमहल तक ही सीमित कैसे रहता? देखते-देखते सारी चम्पानगरी में यह शुभ समाचार फैल गया और नगरी का प्रत्येक निवासी अपने

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

प्रिय राजा-रानी की जय-जयकार करता हुआ नाचने लगा। किसी के हृदय पर कोई बन्धन न रहा। हर्ष की कोई सीमा न रही। उल्लास और आनन्द का सागर दसों दिशाओं में उमड़ने लगा। उत्सव मनाये जाने लगे। भावी राजकुमार की मंगल-कामना हेतु धार्मिक अनुष्ठान होने लगे। कल तक जो चम्पानगरी श्मशान जैसी उदास शान्ति में डूबी रहती थी वह आज एकाएक चैतन्य होकर हर्ष-मुखर हो उठी।

चम्पानगरी की गगनचुम्बी अट्टालिकाएँ अब रात्रि के समय दीपावलि से जगमग-जगमग करने लगीं और आकाश के तारों को चुनौती देने लगीं। दिन के प्रकाश में नगर-निवासियों के विशाल आवासों में बड़ी सुरुचिपूर्वक लगाये गये छोटे-बड़े उद्यान देवताओं के नन्दनवन को भी लजाने लगे। फूल खिल उठे। उनकी रंग-बिरंगी शोभा इन्द्र-धनुषों की सृष्टि करने लगी। उनकी कोमल पंखुड़ियों से उठकर पवन में एकाकार होती सुरभि वातावरण को मधु-सिक्त करने लगी।

देखते-देखते कैसा परिवर्तन आ गया!

और कैसा था वह युग? कैसे थे वे लोग जो एक दूसरे के सुख में ही अपने सुख का अनुभव करते थे? राजा अपनी प्रजा के लिए प्राण देता था। प्रजा अपने राजा को प्यार करती थी, उसकी पूजा करती थी।

चम्पानगरी का राजा सिंहरथ ऐसा ही राजा था।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

उसने अपनी प्रजा का पालन सदैव प्रेमपूर्वक पुत्रवत् ही किया था। व्यक्तिगत विलास से कोसों दूर रहकर वह निष्ठापूर्वक अपनी समस्त प्रजा का हित-चिन्तन किया करता था और किसी भी व्यक्ति, किसी भी वर्ग को यदि कभी कोई कष्ट होता था तो उसके कष्ट को वह अपना ही कष्ट मानकर उस कष्ट के निवारण हेतु पुरुषार्थ किया करता था।

यही कारण था कि चम्पानगरी की प्रजा भी अपने राजा को हृदय से प्यार करती थी। वह जानती थी कि हमारा राजा निजी स्वार्थ से परे है। वह हमारे सुख को ही अपना सुख समझता है। हमारे दुख से दुखी होता है।

ऐसे राजा को कौन प्यार नहीं करेगा? ऐसे राजा के एक इंगित पर कौन अपने प्राण भी न्योछावर करने से पीछे हटेगा?

अपने प्राणों से भी अधिक प्रिय राजा-रानी के सुख की उस पुण्य वेला में प्रजा सुख से यदि उन्मत्त-सी हो गयी तो यह सहज और स्वाभाविक ही था।

× × × ×

किन्तु विधि का विधान भी विचित्र ही तो है। जिस प्रकार सुन्दर, सुकोमल, सुरभित पुष्पों से भरे हुए किसी उद्यान के किन्हीं अँधेरे, शीतल कोनों में कोई भयंकर विषधर भी रेंगते रहते हैं, उसी प्रकार उस पवित्र चम्पा-नगरी के पुण्य प्रांगण में भी कुछ ऐसे अधम व्यक्ति थे जो

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

भयानक भुजंगों से भी अधिक कुटिल और घातक थे। स्वार्थ और ईर्ष्या के मारे वे तुच्छ मानव-जन्तु अपनी जहरीली दाढ़ों में भीषण कालकूट धारण किये बैठे थे।

उन हत्यारे मानव-पशुओं का नेता था अजितसेन। अजितसेन राजा सिंहरथ का चचेरा भाई था। वह कुटिल था, स्वार्थी था, तुच्छ था, घोर अधार्मिक था। अपने चचेरे भाई, राजा सिंहरथ के सूने सिंहासन को हड़प लेने के लिए वह काक-दृष्टि लगाये बैठा था।

उसने जब सुना कि रानी गर्भवती हुई है तो वह ईर्ष्या, निराशा और क्रोध से सर्प की भाँति ऐंठ गया। उसे अपनी आशाओं पर पानी फिरता प्रतीत हुआ। सिंहरथ की मृत्यु के बाद वह सिंहासन सरलतापूर्वक हथिया लेगा, ऐसी उसको आशा थी। किन्तु अब जब राज्य का उत्तराधिकारी आ रहा था तब उसकी इस कुटिल कामना की पूर्ति कैसे होगी? चम्पानगरी की राजभक्त प्रजा यह कैसे सहन करेगी कि उनके राजकुमार के रहते कोई अन्य व्यक्ति राज्य पर अधिकार कर ले?

अपनी लम्बी-लम्बी, काली मूछों को बार-बार ऐंठता, दाहिने हाथ की मुट्ठी को बायें हाथ की हथेली पर ठोकता हुआ वह अपने आवास के एक विशाल कक्ष में तेज-तेज कदमों से इधर-उधर चक्कर काट रहा था और कोई क्रूर उपाय सोच रहा था।

सारी चम्पानगरी आनन्द और उल्लास में मग्न थी।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

राजा-रानी का जयघोष स्थान-स्थान पर उठ रहा था। गीतों के स्वर वातावरण में गूंज रहे थे। इन मधुर गीतों में इतना निश्छल आनन्द छलक रहा था कि कोई जड़ से जड़ व्यक्ति भी उनके सुख-स्पर्श से अछूता नहीं रह सकता था।

किन्तु एक था अजितसेन।

वह अजितसेन अपने आवास में चक्कर काट रहा था और इन आनन्ददायक ध्वनियों को सुन-सुनकर निराशा और क्रोध से जला-भुना जा रहा था।

कुछ समय इसी प्रकार व्यतीत हुआ और फिर उसने अपने एक सेवक को पुकारा--

"अबे धूमल ! कहाँ मर गया तू ?"

"हाजिर हूँ मालिक ! अभी मरा नहीं हूँ। लेकिन अब मरने में अधिक कसर भी नहीं है अन्नदाता !"

"क्या मतलब ? क्या बक रहा है ?"

"बक नहीं रहा हूँ मालिक ! ठीक ही कह रहा हूँ। और जो कुछ कह रहा हूँ उसे आप भी अच्छी तरह जानते हैं। वरना आपके चेहरे पर ये जो चिन्ता की काली बदली घिरी हुई है वह क्यों होती ?"

धूमल अजितसेन का मुँहलगा सेवक था। सभी प्रकार के कुटिल कर्मों में अजितसेन का वह दाहिना हाथ था। अपने मालिक की रग-रग से वह परिचित था। किस

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

समय, किस बात को देख-सुनकर, क्या विचार उसके स्वामी के मस्तिष्क में चक्कर काट रहे हैं, यह घूमल पलक झपकते ही जान लेता था।

स्वामी और सेवक एक ही थैली के चट्टे-बट्टे थे।

अजितसेन ने कुछ क्षण तक घूमल की ओर घूरकर देखा और फिर कहा—

"घूमल ! तूने मेरी बहुत सेवा की है। तू होशियार भी है। अब बता, क्या होगा ?"

अपनी बाईं आँख कुछ दबाते हुए घूमल ने उत्तर दिया—

"स्वामी ! हिम्मत हारने से काम नहीं चलता इस संसार में। प्रत्येक समस्या का कोई न कोई समाधान तो होता ही है।"

"लेकिन यह राजकुमार यदि सचमुच आ ही गया तो फिर मेरी अभिलाषा का क्या होगा ? वर्षों से मैं आस लगाये बैठा हूँ।"

"मालिक ! अभी से क्यों जी छोटा करते हैं ? राजकुमार आये या राजकुमारी, अपने को क्या फर्क पड़ता है ? क्या पिट्ठी, क्या पिट्ठी का शोरबा ? आपकी चुटकियों में तो बहुत दम है। मसल दीजिएगा।"—कहते-कहते घूमल कुटिलतापूर्वक 'खी-खी' करके हँसने लगा।

सुनकर अजितसेन विचार में पड़ गया। उसने कक्ष

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

के एक-दो चक्कर और लगायें। फिर एकाएक रुका, घूमकर उसने घूमल को जलती हुई दृष्टि से घूरा और कहा—

"घूमल के बच्चे ! तू गधा है।"

"सो तो हूँ ही, मालिक ! वरना आप मुझे इतना प्यार क्यों करते ? गधे की दुलती बड़ी घातक होती है मालिक !"

"हूँ, साफ-साफ कह, तेरा मतलब क्या है ?"

"मतलब मेरा तो क्या होगा मालिक ! मतलब तो जो है सो आपका है। मगर मेरा मतलब है कि राजा अजितसेन की एक चुटकी बजेगी, उनके गधे की एक दुलत्ती पड़ेगी, और न रहेगा बाँस, न बजेगी बाँसुरी। न रहेगा राजकुमार, न रहेगी राजकुमारी।"

अपने दुष्ट सेवक के मुख से यह भीषण, कुटिल योजना सुनकर अजितसेन जैसा पाषाण-हृदय व्यक्ति भी क्षणभर के लिए तो काँप उठा। वह बोला—

"घूमल ! तू गधा ही नहीं, राक्षस भी है। क्या तू मेरे हाथ से शिशु-हत्या कराना चाहता है ?"

"इतने छोटे-से काम में आपको हाथ लगाने की भला क्या आवश्यकता है स्वामी ! आपकी तो चुटकी बजेगी, बस। बाकी सारा काम तो यह गधा सम्हाल लेगा।"

"वह तो एक ही बात है। लेकिन.....लेकिन तू भाग यहाँ से। मुझे सोचने दे। चल भाग।"

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

स्वामी के मस्तिष्क में भीषण विष-वमन करके सेवक अदृश्य हो गया।

अजितसेन चक्कर काटता रहा और सोचता रसा—भाई सिंहरथ की तो कोई चिन्ता नहीं। वह तो अब पका पान ही है। कभी भी चल देगा। किन्तु उसकी सन्तान .....उसका पुत्र.....क्या वह मेरे मार्ग का रोड़ा बनेगा ?.....बनेगा ही। राजकुमार रहेगा तो अजितसेन के जीवन भर के स्वप्न का क्या होगा ?

जो होना हो सो हो जायेगा। अजितसेन के मार्ग में जो भी रोड़ा आयेगा उसे उठाकर फेंक दिया जायगा.....

अजितसेन ने निश्चय कर लिया—चाहे कुछ भी करना पड़े, चाहे निरपराध शिशु की हत्या करने का जघन्य पाप भी क्यों न करना पड़े, किन्तु सिंहासन पर अधिकार करना ही है।

देवों की नगरी अमरावती की शोभा, सौन्दर्य तथा आनन्द-उल्लास को भी फीका कर देने वाली चम्पानगरी जब मंगल-समारोह मना रही थी तब अजितसेन के मस्तिष्क में इस अमानवीय और जघन्यतम षड्यन्त्र की रूपरेखा बन रही थी।

अमृत कुम्भ में भीषण कालकूट का विष-बिन्दु उफन रहा था। □

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

समय अपनी गति से आगे बढ़ता रहा और शुभ घड़ी, शुभ दिवस में राजा सिंहरथ की रानी कमलप्रभा ने सूर्य के तेज को भी लजाने वाले एक शिशु को जन्म दिया। इतने सुन्दर, तेजस्वी और होनहार प्रतीत होने वाले पुत्र-रत्न को पाकर राजा-रानी निहाल हो गये। उन्हें लगा कि जैसे उनके जन्म-जन्म के पुण्यकर्मों का शुभ फल उन्हें प्राप्त हो गया हो।

चम्पानगरी तो एक महोत्सव नगरी में ही परिवर्तित हो गयी। बन्दियों को मुक्त कर दिया गया। याचकों को प्रभूत दान वितरित किया गया। विद्वानों, कलाकारों, गुणी-जनों, सज्जनों का समुचित सम्मान किया गया। अभाव नाम की कोई वस्तु चम्पानगरी में पहले भी नहीं थी, किन्तु अब तो समृद्धि, सुख एवं आनन्द का एक सागर ही मानों उस नगरी में उफन पड़ा।

नगरी का छोटे से छोटा आवास भी सुगन्धित घृत के दीपकों से जगमगा उठा। द्वार-द्वार पर तोरण और

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

बन्दनवारे झूलने लगीं। अबीर-रंग और गुलाल ने जनपथों को आच्छादित कर दिया।

निस्वार्थ, प्रजापालक राजा के प्रति उसकी कृतज्ञ प्रजा का यह प्रेमभरा भाव प्रदर्शन था।

प्रजा के प्रेम भाव की इस पुनीत छाया में और माता की आशीर्वादमयी गोद में बालक दिन-दिन द्वितीया के चन्द्रमा की भाँति बढ़ने लगा।

उस नन्हें बालक के आगमन से राज्य में श्री तथा समृद्धि बढ़ेगी तथा बड़ा होकर वह अपनी प्रजा का पालन करेगा, इस आशा में उसका नाम 'श्रीपाल' रखा गया।

और देखते ही देखते कुछ वर्ष व्यतीत हो गये।

सुख और शान्ति से व्यतीत होते हुए इस काल में अचानक ही एक वज्रपात हुआ। राजा सिंहरथ इस असार संसार को त्यागकर अपनी अनन्त यात्रा के अजाने मार्ग पर चल पड़े।

चम्पानगरी अनाथ हो गयी। हाहाकर मच गया। रानी कमलप्रभा किंकर्त्तव्यविमूढ़ रह गयीं।

अपनी विदा वेला में राजा सिंहरथ ने अपने स्वामि-भक्त और विवेकवान मन्त्री से कहा था—

"मन्त्रिवर! इस भूतल पर जो भी आता है वह एक न एक दिन जाता भी है। मेरे प्रयाण की घड़ी भी आ पहुँची है। तुम उदास क्यों दीखते हो?"

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

मन्त्री मतिसार गुमसुम खड़ा था। राजा के वचन सुनकर गद्-गद् कण्ठ से बोला—

"महाराज ! अन्नदाता ! भविष्य का विचार करके चिन्तित हूँ। कुमार अभी बालक ही है.....।"

"सिंह का बच्चा सिंह ही होता है मन्त्रिवर ! चिन्ता क्यों करते हो ? और फिर तुम जो हो। तुम्हारे रहते क्या मुझे कोई चिन्ता करनी चाहिए ?"—राजा ने अर्थपूर्ण दृष्टि अपने मन्त्री पर गड़ाकर कहा।

मन्त्री ने हाथ जोड़कर उत्तर दिया—

"महाराज ! प्राण चले जायेंगे किन्तु कुमार का बाल भी बाँका नहीं होने दूँगा। आप निश्चिन्त रहें।"

सुनकर राजा अपनी असमर्थ स्थिति में भी क्षीण मुस्कुराहट बिखेरते हुए बोले—

"मैं तो निश्चिन्त ही हूँ, मन्त्रिवर ! अब जाते-जाते किस चिन्ता को साथ ले जाऊँ ? उससे लाभ भी क्या है ? किन्तु तुम्हें सावधान किये जाता हूँ—जानते तो हो, न कि कुछ लोग मेरी अनुपस्थिति में उपद्रव उठा सकते हैं ?"

"जानता हूँ, राजन् ! एक-एक दुष्ट को पहिचानता किन्तु जब तक आपका सेवक यह मतिसार जीवित है, तब तक उन राक्षसों की एक नहीं चलेगी।"

"बस, मंत्रिवर ! इतना ही सुनना चाहता था। अब मैं शान्ति से अपनी महायात्रा पर जा सकूँगा। तो.....

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अब.....कुमार और.....कमल.....का ध्यान रखना .....ॐ णमो अरिहंताणं.....णमो.....।"

इस प्रकार राजा सिंहरथ चले गये थे, और नगरी उदास थी।

एक व्यापक शून्य चारों ओर घिरा हुआ था।

इस प्रशान्त शून्य के वेधक गाम्भीर्य को भीतर ही भीतर चीरते हुए अजितसेन और उसके सहयोगी तत्त्व सक्रिय हो रहे थे—गहन रात्रि के अन्धकार में, एक कोमल, अबोध बालक पर मारणान्तक प्रहार करने के लिए।

किन्तु मतिमान मतिसार जागृत था।

अजितसेन राजा का चचेरा भाई था और शक्तिशाली था। सत्ता और सम्पत्ति के लोभ के मारे अनेक सैनिक तथा नायक भी धीरे-धीरे उसके पिछलग्गू बन गये थे। वे लोग जो षड़यन्त्र रच रहे थे उसका कोई ठोस प्रमाण अभी मन्त्री को प्राप्त नहीं हुआ था, अतः उनके विरुद्ध कोई सैनिक कार्यवाही भी नहीं की जा सकती थी किन्तु उनकी गतिविधियों पर एक तीक्ष्ण दृष्टि मंत्री रख ही रहा था।

एक अत्यन्त विश्वस्त और कुशल गुप्तचर ने आकर मंत्री को संदेश दिया—

"मंत्रिवर ! महाराज के स्वर्गवास को अभी कुछ ही दिन बीते हैं, किन्तु अजितसेन और उसके साथी सामान्य

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

लोकाचार को भी ताक पर रखकर अब किसी भी रात्रि को कुमार की हत्या का प्रयत्न कर सकते हैं।"

यह समाचार सुनकर मन्त्री चिन्तामग्न हो गया। कुछ समय बाद उसने कहा—

"शशांक! तेरी तीव्र दृष्टि और चतुराई से कार्य करने की शक्ति पर ही मैं भरोसा किये बैठा हूँ। यदि तू असावधान रह गया तो मुझे जीवित चिता में जल मरने अथवा जल-समाधि ग्रहण करने के अतिरिक्त और कोई मार्ग नहीं रहेगा। तेरी आयु छोटी है, कुमार से तू कुछ वर्ष ही बड़ा होगा। किन्तु तेरी शक्ति और योग्यता असीम हैं। तू इस युग का अभिमन्यु है।"

"आज्ञा कीजिए, मन्त्रिवर!"

"यही सोच रहा हूँ कि क्या करूँ? मुझे अपने मरने-जीने की तो कोई चिन्ता नहीं, किन्तु यदि कुमार को कुछ हो गया तो चम्पानगरी की प्रजा अनाथ हो जायगी। यह दुष्ट अजितसेन उसे पीस डालेगा।"

"मंत्रिवर! आप नीतिनिपुण हैं, शक्तिमान हैं। किन्तु यदि मेरी धृष्टता न समझें तो एक निवेदन करना चाहता हूँ।"

"कहो शशांक! क्या कहना चाहते हो?"

"मंत्रिवर! सिंहासन हथियाने के लोभ में ये लोग अन्धे हो रहे हैं। करणीय-अकरणीय, पाप-पुण्य, भले-बुरे का इन्हें तनिक भी विचार नहीं है। किसी भी क्षण ये

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

लोग भूखे भेड़िए के समान अबोध कुमार पर टूट पड़ेंगे। हमारी सारी सावधानी धरी की धरी रह सकती है। अतः मैं तो ऐसा सोचता हूँ कि ये राक्षस प्रहार करें उससे पूर्व ही कुमार को किसी सुरक्षित स्थान पर पहुँचा दीजिए।"

"शशांक ! सोच तो मैं भी कुछ इसी प्रकार से रहा हूँ। इन पागलों का कोई भरोसा नहीं।"

"तब शीघ्रता कीजिए। एक पल का भी विलम्ब न कीजिए।"

"एक पल का भी ? क्या तुम्हारे पास कुछ विशेष सूचना है ?"

"हाँ, मन्त्रिवर ! मेरा अनुमान है कि ये दुष्ट आज ही रात्रि को.....।"

"आज रात्रि को ही.....।"—कहते-कहते मन्त्री मतिसार अपने आसन से उठ खड़ा हुआ। कुछ चिन्ताभरे किन्तु दृढ़ स्वरों में उसने अपने गुप्तचर से कहा—

"शशांक ! सावधान ! जाओ, कुमार के शयनकक्ष पर कड़ी नजर रखो। जाओ।"

सिर झुकाकर शशांक चला गया।

मन्त्री ने दीवार पर टँगी हुई अपनी तलवार उतारी, उसे कमर से बाँधा और चीते की-सी फुर्ती से वह अपने कक्ष से बाहर निकल गया।

× × ×

पाँच-सात वर्ष का एक छोटा-सा सुन्दर, तेजस्वी

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

बालक एक छोटी सी तलवार अपने नन्हें हाथों में लिए खेल रहा था। उसकी माता उसके पास ही आसन पर बैठी अपने लाड़ले लाल की बाल-क्रीड़ा देख रही थी और भविष्य के सुख-स्वप्नों में डूबी-सी प्रतीत होती थी।

बालक देखने में ऐसा प्रतीत होता था जैसे वह कोई देवकुमार हो। इतना सुगठित सौन्दर्य और तेज सामान्यतया मानवों में दिखाई नहीं देता। भविष्यवेत्ताओं तथा पंडितों की तो बात ही क्या, कोई साधारण मनुष्य भी उस पुण्यवान बालक को एक दृष्टि से देखकर ही कह सकता था कि एक न एक दिन यह बालक महाप्रतापी सम्राट अथवा महान् धार्मिक महापुरुष बनेगा।

यह बालक था चम्पानगरी का राजकुमार श्रीपाल और उसकी ममतामयी माता थी कमलप्रभा।

सूर्य अस्ताचल की ओट हो चुका था। अन्धकार धीरे-धीरे घिरता चला आ रहा था। दास-दासियाँ राजमहल के विशाल, सुसज्जित कक्षों में सुवर्ण-मणिमय घृत दीप उजियार रही थीं।

रानी कमलप्रभा ने अपने पुत्र से कहा—

"आओ बेटा! अब खेल समाप्त करो, भोजन का समय हो गया।"

अपने नन्हें से हाथ से, अपनी छोटी-सी तलवार से अन्तिम बार हवा को चीरते हुए बालक ने अपने तोतले किन्तु उत्साहभरे स्वर में उत्तर दिया—

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

"चलो माँ, मैंने भी छाले छल्लुओं तो भगा दिया है। चलो।"

रानी कमलप्रभा अपने छोटे-से पुत्र की इस वीरता-पूर्ण बात को सुनकर हँस पड़ी और उसने आगे बढ़कर बेटे को अपने अंक में भर लिया।

उस भोले बालक और उस ममतामयी माता को क्या मालूम था कि उनके प्रबल शत्रु कहीं भागे नहीं थे। वे तो उन पर एक मारणान्तक प्रहार करने की ताक में तत्पर बैठे थे।

रानी कमलप्रभा स्नेहपूर्वक कुमार को दुलार ही रही थी कि हाथ में नंगी तलवार लिए मंत्री मतिसार वहाँ दौड़ता हुआ आ पहुँचा। उसे इस रूप में इत समय देखकर रानी विस्मित रह गई। वह एकटक मन्त्री को देखती ही रह गई। यह क्या बात है, मन्त्री इतने आकुल-व्याकुल क्यों हैं? यह प्रश्न वह उनसे करे कि स्वयं मन्त्री ने ही घबराए हुए स्वर में कहा—

"महारानीजी! माताजी! शीघ्रता कीजिए। आप भी तैयार हो जाइए और कुमार को भी तैयार कर लीजिए। इसी घड़ी हमें लम्बी यात्रा के लिए यहाँ से चल पड़ना है।"

इतना कहकर मन्त्री ने चारों ओर सतर्क दृष्टि से देखा। कुछ दूरी पर एक विशाल स्तम्भ के पीछे-से शशांक का दृढ़ और गम्भीर चेहरा उसे दिखाई पड़ा। उसने पुकारा—

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

"शशांक ! अब मैं आ पहुँचा हूँ। मैं द्वार पर खड़ा हूँ। मेरे जीवित रहते कोई चिड़िया का बच्चा भी अन्दर प्रवेश नहीं कर सकेगा। किन्तु तुम शीघ्रता करो। महारानीजी और कुमार को गुप्त मार्ग से दक्षिण वन में जल्दी से जल्दी ले जाओ।"

शशांक समीप आकर सिर झुकाकर महारानी के पास खड़ा हो गया था। उसके कदमों में दृढ़ता थी। उसके चेहरे पर अटल निश्चय की रेखाएँ थीं।

किन्तु घबराई हुई महारानी कुछ समझ नहीं पा रही थी कि यह सब क्या हो रहा है। उसने कहा—

"मंत्रिवर ! बात क्या है ? आप इतने घबराए हुए क्यों हैं ? क्या किसी शत्रु ने राज्य पर आक्रमण कर दिया है ?"

"महारानीजी ! बाहरी शत्रु के किसी भी आक्रमण को विफल करने की शक्ति अभी चम्पानगरी के सैन्य में है। किन्तु घर के भेदिये ही जब लंका ढाने लगें तो परिस्थिति विकट हो जाती है। महारानीजी ! अब बातों का भी समय नहीं है। मार्ग में शशांक आपको सब कुछ बता देगा। मैं स्वर्गीय पूज्य महाराज के नाम पर आपसे विनय करता हूँ कि आप अब एक भी पल का बिलम्ब न करें—एक पल का भी....।"

मंत्री के शब्द अधूरे ही रह गए। तेजी से खटाखट सीढ़ियाँ चढ़ते हुए कुछ कदमों के भारी स्वर उसके कानों

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

से टकराए। उसे अनुमान करने में विलम्ब नहीं हुआ कि परीक्षा की घातक घड़ी आ पहुँची है। कुमार के जीवन-मरण का प्रश्न अब इन्हीं कुछ पलों की कच्ची डोर से बँधा हुआ है।

मन्त्री मतिसार ने लगभग चीखते हुए, आज्ञावाही स्वरों में कहा—

"महारानीजी! अब तैयार होने का समय भी शेष नहीं रहा। हत्यारे आ पहुँचे हैं। मैं इन्हें रोक लूंगा। आप जैसी हैं, वैसी ही कुमार को लेकर शशांक के साथ भीतर के गुप्तमार्ग से चल पड़िए और गुप्त भूगर्भ मार्ग को पार कर दक्षिण वन में कहीं आश्रय लीजिए। यदि मैं जीवित रहा तो कल आपसे उसी वन में मिलूंगा। और यदि.....शशांक, दौड़ महारानी जी को ले जा.....।"

सीढ़ियाँ चढ़कर, नंगी तलवार हाथ में लिए हुए हत्यारे अब उस कक्ष के द्वार की ओर ही बढ़ रहे थे।

मन्त्री मतिसार हाथ में तलवार और अपना सिर हथेली पर लिए द्वार पर विन्ध्यपर्वत के अडिग शैल-शिखर की भाँति अचल खड़ा था।

शेष कक्ष शून्य था। □

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

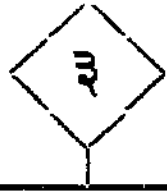

बलिहारी है समय की ! काल-चक्र कब कैसा परिवर्तन करेगा और उसका परिणाम क्या होगा यह कोई नहीं जानता। कल तक के शूरवीर, रणधीर, अभय सेनानी आज धूलि-धूसरित होकर पड़े हुए तड़पने लगते हैं और कोई उन्हें चुल्लू भर पानी के लिए भी नहीं पूछता। कल तक के राजा और सम्राट् आज रंक-भिखारी होकर दर-दर की खाक छानते हैं और कोई उन्हें मुट्ठी भर अनाज भी नहीं देता। कल तक की रानियाँ और महारानियाँ जो तीन-तीन बेर छप्पन पकवान खाती थीं, उन्हें आज तीन बेर भी नसीब नहीं होते।

बलिहारी है समय की ! रानी कमलप्रभा, जो कल तक कलधौत के धामों में सुख-शय्या पर शयन करती थी, जिसे मखमल के गलीचों से नीचे अपने कोमल चरण रखने की भी आवश्यकता नहीं पड़ती थी, सैकड़ों दास-दासियाँ जिसकी आज्ञा और संकेत पर दौड़ने-भागने के लिए हाथ बाँधे खड़ी रहती थीं—वही रानी कमलप्रभा आज एक भीषण अँधियारी रात में अपने छोटे से पुत्र को गोद में उठाये, एकाकिनी, हारी-थकी, डरी-सहमी, भविष्य की

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

दुश्चिन्ता से पीड़ित-प्रताड़ित, काँटों-पत्थरों की ऊबड़-खाबड़ राह पर घिसटती-घिसटती आगे बढ़ रही थी।

वन इतना सघन था कि हाथ को हाथ नहीं सूझता था। घुप्प अन्धकार भयानक सर्प की भाँति कुंडली मारे बैठा था। चारों ओर नीरव-रात्रि का सन्नाटा सांय-सांय कर रहा था।

उस प्राणलेवा सन्नाटे और अँधेरे के बीच से हिंसक वन्य-प्राणियों की दिल दहला देने वाली चीत्कारें और गुर्राहटें बीच-बीच में रानी के कर्ण-कुहरों से आकर टकराती थीं और वह कलेजा थामकर भय के मारे बार-बार घुटनों के बल गिर पड़ती थी। जाने किस दिशा से, कब कोई वन्य-पशु उस पर, और उसके कोमल कुमार पर उछल पड़े और उन्हें चीथकर चबा डाले। जाने कब लम्बी-लम्बी घास के बीच रेंगता हुआ कोई विषधर अपनी जहरीली दाढ़ें उसके कोमल पैरों में गड़ा दें। जाने कब किसी वृक्ष की डाल से लटकता हुआ कोई अजगर उसे और कुमार दोनों को अपनी भीषण कुण्डली में जकड़ ले!

बलिहारी है समय की! इस विकटतम संकटकाल का उसका एक मात्र साथी—शशांक भी इस घुप्प अँधियारे और वीहड़ सघन वन में उस अबला से बिछुड़ गया था। वह एकाकिनी थी, अबला थी, कर्म-फल भोगती विवश, असहाय माता थी।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

उसके सुकोमल पैरों के तलवे काँटों और तीक्ष्ण कंकरों से क्षत-विक्षत हो गये। उसके घुटने छिल गये थे। उनसे बहता हुआ रक्त रास्ते पर एक रक्त-रेखा छोड़ता चला जा रहा था, जिसे उस सघन अन्धकार में केवल कोई भावुक कवि अथवा क्रूर काल ही देख सकता था।

एक-एक कदम उस अभागिनी रानी के लिए पहाड़ हो गया था; किन्तु वह रुक नहीं सकती थी। यदि रुक जाती, और अजितसेन के कौड़ी के गुलाम आकर उसे पकड़ लेते तो क्या होता ? नहीं, वह रुक नहीं सकती थी। अपने प्यारे बेटे, जीवन के एकमात्र अवलम्ब उस कोमल कुमार के पवित्र प्राणों की रक्षा के लिए उसे आगे चलना ही था।

और रानी कमलप्रभा बेटे को छाती से लगाये चलती ही चली जा रही थी।

अटवी इतनी गहन थी कि शशांक अपनी सारी तत्परता के उपरान्त भी अपनी महारानी से अन्धकार में कहीं बिछड़ गया था। रानी और कुमार के भविष्य की चिन्ता से उसके प्राण उसके कण्ठ में आ गये थे—क्या मुँह दिखायेगा वह संसार को ? क्या उत्तर देगा मन्त्री मतिसार को ? हाय ! वह रानी की रक्षा न कर सका—कौन जाने किस हिंसक प्राणी ने उसे अपना ग्रास बना लिया हो ? कौन जाने अजितसेन के सैनिकों ने उसे जा पकड़ा हो ?

किन्तु, कौन जाने प्रभु की कृपा से रानी और कुमार सुरक्षित ही हों !

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

आशा बड़ी बलवती होती है। मानव-जीवन इसी आशा के क्षीण तन्तु के सहारे विकट से विकट परिस्थिति को भी साहस के साथ सह लेता है।

शशांक भी इसी आशा की डोर थामे उस गहन वन में रानी और कुमार को खोजता इधर-उधर भटक रहा था, आगे बढ़ रहा था।

प्रत्येक निराशा की रात्रि का भी कभी न कभी सबेरा होता ही है। उस विकट रात्रि का सबेरा भी अन्ततः आ ही पहुँचा। पूर्व की ओर से उषा का आलोक फूटने लगा, गहन अन्धकार झुटपुटे उजाले में परिवर्तित हुआ और क्रमशः प्रकाश की पहली किरण ने पृथ्वी के माथे को चूम लिया।

पुण्यात्मा श्रीपाल और पवित्रात्मा कमलप्रभा के सद्-भाग्य से प्रभात के उजाले में रानी को एक सरिता कल-कल नाद के साथ बहती दिखाई दी। अर्धमृत-सी रानी जैसे-तैसे उस सरिता के किनारे पहुंची और किसी सघन कुंज की ओट लेकर उसने सबसे पहले भूखे-प्यासे कुमार को पानी पिलाया और फिर अपने घाव धोने बैठ गयी। आगे क्या होगा, यह विचार उसने भावी पर ही छोड़ दिया।

पूर्वजन्म के संचित पुण्यों का प्रताप ही कहना चाहिए कि उसी समय शशांक भी लुटा-पिटा-सा, क्षत-विक्षत स्थिति में, रानी को खोजता हुआ उसी स्थल पर जा पहुँचा।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

शशांक की पदचाप सुनकर आशंकित रानी एकदम चौंक गई और उसने स्वयं को और कुमार को सघन कुंज में और भी अच्छी तरह ओट में कर लिया। फिर धीरे-धीरे उसने पत्तों की ओट से बाहर की ओर झाँका.... ....शशांक !

"ओह शशांक.....शशांक ! इधर आओ। मैं यहाँ हूँ। इस कुंज के भीतर.....।" कहती हुई रानी शशांक की ओर दौड़ पड़ी।

डूबते को तिनके का सहारा मिल गया।

स्वाभिभक्त शशांक ने जब रानी को देखा तो उसके छूटते हुए प्राण लौट आये। उसकी क्षत-विक्षत देह में हजार हाथियों का बल आ गया। दौड़कर रानी के चरणों में कटे हुए वृक्ष की तरह गिर ही पड़ा और बोला—

"महारानीजी ! परमात्मा को कोटिश: धन्यवाद कि आप मिल गईं। मैं तो आपकी और कुमार की चिंता से मर ही गया था।"

"मैं और कुमार सुरक्षित हैं, शशांक ! उठो, अब विलम्ब न करो। सबसे पहले अपने इन घावों को धो डालो, कुछ स्वस्थ हो लो, और फिर भविष्य का कार्यक्रम निश्चित करो। समय अमूल्य है।"

परिस्थिति की विषमता को समझने वाले शशांक ने रानी की आज्ञा का तुरन्त पालन किया। सबसे पहले उसने कुमार को गोद में लिया, उसे प्यार करके पुनः रानी

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

को गोद में देकर वह नदी के तीर पर जाकर अपने घावों को धो-पोंछ आया।

तब तक प्रकाश चारों ओर अच्छी तरह फैल गया था। शशांक ने आस-पास के जंगली वृक्षों से कुछ मधुर फल एकत्रित किये और वनवासियों की भाँति उन तीनों प्राणियों ने कुछ अल्पाहार किया।

इतना तो हो गया। किन्तु अब? अब क्या करना चाहिए? किधर जाना चाहिए?

नदी-किनारे, झुरमुट की ओट में बैठे रानी और सेवक शशांक इस विकट समस्या पर विचार कर रहे थे।

भोला राजकुमार शंख और सीपियों से खेल रहा था।

प्रत्येक पल यह आशंका बढ़ती जाती थी कि अजितसेन के अनुचर उनको खोजते हुए वहाँ पहुँच न जाएँ।

उसी समय रानी और शशांक को कुछ अश्वों की टाप और उसके साथ ही गाड़ियों के पहियों को घरघराहट सुनायी दी। वे चौंक गये। उन्हें आशंका हुई कि शत्रु शायद आ ही पहुँचे हैं। प्रभु का स्मरण करते हुए वे अच्छी तरह ओट में हो गये। कुमार को भी उन्होंने शान्त रहने के लिए कह दिया।

वह ध्वनि निकट आती गयी। नदी-किनारे, कुछ ही दूर पर जनपथ था। उसी दिशा से यह ध्वनि आ रही थी।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

कुछ ही पलों बाद रानी और शशांक को यात्रियों का एक दल दिखाई पड़ा जो उस जनपथ पर धीरे-धीरे आगे बढ़ता चला आ रहा था। अति सामान्य स्थिति के दिखायी देते लगभग पाँच-सात सौ स्त्री-पुरुषों-बालकों का वह एक यात्री दल था। उनके साथ कुछ खच्चर थे, कुछ बैल-गाड़ियाँ थीं। ये लोग कौन हो सकते हैं और किस उद्देश्य से किधर जा रहे होंगे, यह समझ सकना कठिन था।

सतर्क दृष्टि से उस काफिले का परीक्षण-सा करते हुए शशांक ने रानी से कहा—

"महारानीजी ! यह कोई यात्रीदल है। मैं जाकर पता लगाता हूँ कि ये लोग कौन हैं, कहाँ जा रहे हैं। यदि सब कुछ ठीक हुआ, भाग्य ने हमारा साथ दिया तो हो सकता है कि दुष्ट अजितसेन से बचने का कोई मार्ग अभी हमारे हाथ में आ जाय। भविष्य भगवान के हाथ है।"

रानी की स्वीकृति पाकर शशांक सावधानी से जनपथ की ओर बढ़ा और एक वृक्ष की ओट लेकर खड़ा हो गया। यात्रियों का वह दल जब उसके बिलकुल समीप आ पहुंचा और आगे बढ़ने लगा तो उन लोगों को देखकर शशांक का मुँह उतर गया। उसकी आशाओं पर पानी फिर गया।

वह यात्रीदल कोढ़ियों का था।

घृणा से मुँह फेरकर हताश—निराश कदमों से शशांक रानी के पास लौटा और बोला—

"महारानीजी ! वह तो कोढ़ियों का यात्रीदल है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

हमें अब सुरक्षा का कोई दूसरा उपाय खोजना पड़ेगा। भला कोढ़ियों के साथ हम कैसे रह सकते हैं ?"

इस परिस्थिति को जानकर रानी भी निराश हुई। गम्भीरता से सोचने लगी कि अब क्या करना चाहिए ? मन्त्री मतिसार की ओर से कोई सहायता आती दीख नहीं रही थी। अजितसेन परम दुष्ट और चालाक था। हो सकता है कि उसने मतिसार को ही कैद कर लिया हो, अथवा कौन जाने वह स्वामिभक्त राजसेवक उन पापियों के हाथों अपने जीवन से ही हाथ धो बैठा हो ?

प्रश्न जीवन और मरण का था।

जीवन और मरण का विकट प्रश्न जब उपस्थित हो जाय तब निर्णय तत्काल और दो टूक ही करना होता है।

रानी ने निर्णय कर लिया। उसने कहा —

"शशांक ! तुम दौड़कर जाओ और उस यात्रीदल को घड़ी भर के लिए रोक लो। मैं कुमार को लेकर आती हूँ। अब असमंजस में समय व्यतीत करना घातक सिद्ध हो सकता है। कर्मों के परिणाम को भोगने से कोई प्राणी बचा नहीं, बच सकता भी नहीं। जो भाग्य में होगा वह होकर ही रहेगा। मुझे अपने प्राणों की तो कोई चिन्ता नहीं, किन्तु किसी भी मूल्य पर मैं कुमार की जीवन रक्षा करना चाहती हूँ। यह अवसर अच्छा है। इस दल में मिलकर मैं कुमार को सुरक्षित किसी दूर के प्रदेश में ले जा सकूँगी। इस प्रकार कुछ आशा तो बनी रहेगी।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अन्यथा यहाँ रुकने का अर्थ तो सुनिश्चित मृत्यु ही है। अतः शशांक ! जाओ, जल्दी करो।"

"किन्तु महारानी जी ! वे कोढ़ी हैं..... ।"

"उनका शरीर ही इस रोग से ग्रस्त है, आत्मा नहीं। शशांक ! वह पापी अजितसेन तो आत्मा का कोढ़ी है। वह इन निरीह, भोले, गरीब कोढ़ियों से अधिक भयानक है। जल्दी करो।"

विवश शशांक पुकार लगाता हुआ कुछ दूर जाते यात्रीदल की ओर दौड़ा।

रानी ने कुमार को गोद में भरा और वह भी जितना संभव था उतना तेजी से उसी ओर चल पड़ी।

जब रानी कुमार के साथ जनपथ पर उस यात्रीदल के समीप पहुँची तब उसने उस दल के नायक को शशांक से बात करते हुए सुना। नायक कह रहा था—

"श्रीमान् ! हम महारानीजी और कुमार को छिपा लेंगे, अपने प्राण देकर भी उनकी रक्षा करेंगे, किन्तु आप यह तो सोच लीजिए कि हम कोढ़ी हैं। हमारी छूत से रानीजी और कुमार को भी यह रोग लग सकता है..... ।"

उत्तर रानी कमलप्रभा ने ही दिया—

"चिन्ता नहीं, नायक ! आप लोगों को यह शारीरिक व्याधि अवश्य है, किन्तु आप लोगों की आत्मा पवित्र है। यह पवित्र आत्मा ही इस संकट काल में हमारा सहारा

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

बनेगी। जल्दी कीजिए, कुमार और मुझे ढकने के लिए एक-एक वस्त्र दे दीजिए।"

"और मुझे भी। जल्दी करो नायक! महारानीजी ने निर्णय कर लिया है। हम लोग तुम्हारे काफिले के साथ ही छिपकर आगे चलेंगे।"

"हम लोग नहीं, शशांक! केवल कुमार और मैं। तुम लौट जाओ।"

"यह असम्भव है महारानी जी!"—रोने-रोने को हो आया शशांक बोला—"आपको इस तरह अकेली छोड़कर मैं नहीं जा सकता। यदि आपने मुझे साथ नहीं लिया तो मैं इसी क्षण यहीं अपने प्राण त्याग दूँगा।"

रानी कमलप्रभा ने प्रत्येक भीषण से भीषण संकट का सामना साहसपूर्वक करने का अटल निश्चय कर लिया था—जो होना है सो हो जाय।

वह आगे बढ़ी, बड़े स्नेहपूर्वक उसने अपना हाथ शशांक के कंधे पर रखा और कहा—

"शशांक! तुम जैसे बलिदानी स्वामिभक्तों की जीवन-गाथा इतिहास में सदा अमर रहेगी। मैं तुम्हारी भावना को समझ रही हूँ। किन्तु हमारी सुरक्षा की जिस भावना से प्रेरित होकर तुम हमारे साथ ही चलने का आग्रह कर रहे हो, उस भावना को मूर्त्त रूप देने का मार्ग यही है कि तुम अभी लौट जाओ। यहाँ से एकदम अदृश्य ही हो जाओ और फिर गुप्त रूप से हमारी खोज-खबर लेते रहो। हमारी सहायता दूर-दूर रहकर समय-समय पर, परि-स्थितियों के अनुसार करते रहो। समझे? अभी हमारे

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

साथ चलकर क्या करोगे ? ये वृद्ध नायक हैं, अब ये मेरे पिता के ही समान हैं। ये हमारी रक्षा करेंगे—प्रभु हमारी रक्षा करेगा।"

कोढ़ियों के वृद्ध नायक की बुझी-बुझी-सी आँखों में आँसू भर आये थे। उसने कहा—

"श्रीमान् ! महारानीजी ठीक कहती हैं। आप दूर रहकर इनकी बहुत मदद कर सकेंगे। इनके शत्रुओं की गतिविधि पर दृष्टि रख सकेंगे। आप चिन्ता न करें। हम कोढ़ी अवश्य हैं, किन्तु कायर नहीं हैं। मैं, मेरा परिवार, और मेरे दल का प्रत्येक सदस्य अपना सिर कटा देगा, किन्तु कुमार और महारानीजी का बाल भी बाँका नहीं होने देगा।"

"बस, बस, शशांक ! देखो, मुझे कुछ आवाजें सुनाई दे रही हैं। लगता है कि शत्रु आ पहुँचे हैं। तुम जाओ--शशांक !"

दूर से आती हुई टप-टप, टपा-टप की आवाजें सुनाई देने लगी थीं।

कुमार के सिर पर स्नेह से हाथ फेरकर, महारानी के चरणों का स्पर्श करके, आँखों में आशंका असहायता और दुःख के आँसू भरे शशांक घने वृक्षों में चीते की भाँति अदृश्य हो गया। जाते-जाते वह कह गया—

"महारानीजी ! चिन्ता न करें। मैं आपके आस-पास ही रहूँगा।"

कोढ़ियों का काफिला खदर-बदर, खदर-बदर, आगे चल पड़ा। □

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

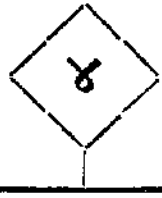

कुछ वर्ष व्यतीत हो गये। देवकुमार के समान तेजस्वी कुमार श्रीपाल अब अपने यौवन में प्रवेश कर रहा था। उसकी देह तेजस्वी और सशक्त थी और मानवीय गुणों ने उसके व्यक्तित्व का आश्रय खोज लिया था। उसके गुणों और सामर्थ्य को देखकर कोढ़ियों ने स्वतः ही उसे अपना राजा बना लिया था और उसका नाम रखा था—उम्बर।

किन्तु जैसी कि आशंका थी, कोढ़ियों के साथ निरन्तर रहने के कारण श्रीपाल को भी इस घातक रोग ने अपना शिकार बना लिया। यह देखकर रानी को बड़ी चिन्ता हुई। शशांक से विचार-विमर्श करके वह कुमार को उस दल के साथ ही छोड़कर उसके उपचार हेतु कोई अचूक औषध खोजने के लिए एक दिशा में चल पड़ी। उसे विश्वास था कि जैसे भी हो, जहाँ से भी हो, वह औषध अवश्य खोज लाएगी और कुमार को व्याधि-मुक्त कराएगी।

कोढ़ियों के राजा कुमार श्रीपाल को अब कोई भय नहीं था। कोई उसे पहिचान नहीं सकता था। कोई

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

कल्पना भी नहीं कर सकता था कि वह कोढ़ियों के साथ, उनका राजा बनकर रह रहा होगा।

इस प्रकार निश्चिन्ततापूर्वक वह काफिला इधर-उधर घूमता-घामता एक बार मालवप्रदेश में जा निकला। आर्यावर्त्त का यह प्रदेश इतना श्री-सौन्दर्यसम्पन्न है कि इसकी तुलना स्वर्ग के अतिरिक्त और किसी से भी नहीं की जा सकती। 'पग-पग रोटी, डग-डग नीर' वाली उक्ति मालवप्रदेश के लिए सर्वथा उपयुक्त ही है। हरे-भरे सघन वनों और खेतों के बीच से वर्षभर पानी से छलकती रहने वाली नदियाँ और निर्झर इस प्रदेश में प्रवाहित होते रहते हैं।

इस शस्य श्यामला भूमिखण्ड की सुशोभित राजधानी थी उज्जयिनी। इस नगरी का सौन्दर्य भी अद्भुत था। क्षिप्रा नदी के तीर पर बसी इस नगरी को जिसने नहीं देखा, वह स्वयं को अभागा ही समझता रहा।

उज्जयिनी का राजा था प्रजापाल। प्रजापालक तो वह अवश्य था, किन्तु था कुछ अहंकारी। वह स्वयं को सर्व-शक्तिमान मानता था और इस प्रकार मिथ्यात्व से ग्रसित था।

ऐसी ही मिथ्यात्वी थी उसकी रानी सौभाग्यसुन्दरी।

किन्तु राजा प्रजापाल की एक दूसरी रानी भी थी— रूपसुन्दरी। नाम के अनुरूप वह परम सुन्दरी तो थी ही, किन्तु उसका वास्तविक सौन्दर्य निहित था उसके गुणों

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

में। वह सम्यक्त्वी थी। जैनधर्म में उसकी प्रगाढ़ आस्था थी और प्रत्येक जिनधर्मावम्बी व्यक्ति की भाँति वह शान्त धर्मिष्ठ तथा गुणवती थी।

दोनों रानियों ने एक-एक रूपवती कन्याओं को जन्म दिया था। वे राजकुमारियाँ जब शिक्षा ग्रहण करने योग्य आयु की हुईं, तब सुरसुन्दरी को, जोकि सौभाग्यसुन्दरी की पुत्री थी, शिक्षा-प्राप्ति हेतु वेदशास्त्र-पारंगत ब्राह्मण को तथा मैनासुन्दरी को, जोकि रूपसुन्दरी की पुत्री थी, जिनमत के अनुयायी एक विद्वान आचार्य को सौंप दिया गया।

दोनों आचार्य अपने पृथक-पृथक तरीके से, अपनी पृथक-पृथक श्रद्धा और मान्यता के अनुसार बालिकाओं को शिक्षा प्रदान करने लगे।

सुरसुन्दरी ने उस ब्राह्मण पंडित से चौंसठ कलाएँ सीखीं। शब्दशास्त्र, निघंटु, चिकित्साशास्त्र आदि का भी अध्ययन किया।

मैनासुन्दरी ने अपने गुरुदेव से काव्य, संगीत, ज्योतिष, वैद्यक तथा अन्य विविध कलाओं की शिक्षा प्राप्त की। धर्मशास्त्र का उसने गहन अध्ययन किया। जैन सिद्धान्तों का रहस्य जानने के लिए स्याद्वाद का मार्ग तो उसे अद्भुत ही प्रतीत हुआ। उसने सातों नय, नव तत्त्व, षट्-द्रव्य तथा उनके गुण-पर्यायों का अभ्यास किया। कर्म विवेचन, संघयण, क्षेत्रसमासादि प्रकरण अर्थ सहित उसने

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

कंठस्थ कर लिए। इसके अतिरिक्त अनेक धार्मिक ग्रन्थ पढ़कर उसने जैनधर्म का गहन ज्ञान प्राप्त किया।

दोनों राजकुमारियाँ जब अपना विद्याभ्यास पूर्ण कर चुकीं, तब राजा प्रजापाल ने एक दिन अपनी राजसभा को निमन्त्रित किया और भरी सभा में उन दोनों की परीक्षा ली। ज्ञान-विज्ञान से सम्बन्धित अनेक प्रश्न दोनों राजकुमारियों से पूछे गये और दोनों ने ही उन प्रश्नों के समुचित सही उत्तर दिए। वे उत्तर सुनकर तथा यह देखकर कि राजकुमारियाँ सचमुच परम विदुषी हो गई हैं, राजा तथा सभी उपस्थित राजपुरुष अत्यन्त प्रसन्न हुए। अपनी प्रसन्नता के उसी आवेश में राजा ने अपनी दोनों बेटियों से कहा—

"मैं आज बहुत प्रसन्न हूँ। तुम दोनों ने मन लगाकर ज्ञानार्जन किया है। अतः इस हर्ष के शुभ अवसर पर मैं तुम्हें तुम्हारी मनोवांछित वस्तु प्रदान करना चाहता हूँ। यह तो तुम जानती ही हो कि मैं राजा हूँ। मेरी शक्ति की कोई सीमा नहीं। मैं जो चाहूँ वह कर सकता हूँ। जिसे जो चाहूँ वह वस्तु प्रदान कर सकता हूँ। निर्धन को मैं धनवान बना सकता हूँ, असमर्थ को समर्थ बना सकता हूँ। संक्षेप में यह कि मेरी कृपा से ही मेरी सारी प्रजा सुख भोग रही है। अतः तुम लोग मुझसे मनचाहा वरदान माँग लो।"

राजा की इस गर्वोक्ति को सुनकर सुरसुन्दरी ने उत्तर दिया—

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

"पिताजी ! आपने बिलकुल ठीक कहा है। आप महा समर्थ हैं। आप ही की कृपा से इस राज्य के सभी प्राणी जीवित हैं। वस्तुतः इस संसार में जीवनदाता दो ही तो हैं—एक तो जीवन-जल से भरे-पूरे श्यामल मेघ तथा दूसरा राजा। संसार का अस्तित्व ही इन दोनों पर निर्भर है।"

सुरसुन्दरी ने ब्राह्मण पण्डित से शिक्षा पाई थी। अतः जीवन, जीव, जगत के वास्तविक स्वरूप से वह अनभिज्ञ थी। उसके मन में तो सांसारिक सुख-भोग की ही लालसा थी, चाहे वह किसी भी मूल्य पर प्राप्त हो।

उसके इस कथन को सुनकर राजसभा में उपस्थित सभी चापलूस राजपुरुष 'वाह-वाह' कर उठे। राजा भी अपनी मिथ्या प्रशंसा से फूला नहीं समाया। अत्यन्त प्रसन्न होकर उसने कहा—

"बेटी सुरसुन्दरी ! तेरे ज्ञान तथा अपने प्रति तेरे प्रेम और आदर से मैं परम प्रसन्न हूँ। शीघ्र ही मैं तेरा विवाह किसी सुयोग्य वर से कर दूँगा और तेरे सुख-सौभाग्य की वृद्धि करूँगा। मेरी कृपा से तुझे कभी कोई कष्ट नहीं होगा।"

सुरसुन्दरी को मनचाहा वरदान मिल गया, क्योंकि सभा में कुरुजांगल देश का राजा अरिदमन उपस्थित था, जिस पर सुरसुन्दरी अनुरक्त हो रही थी। वह समझ गई थी कि राजा ने जो यह बात कही वह उसके हृदय की इसी भावना को लक्ष्य करके ही कही थी।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अब राजा ने मैनासुन्दरी पूछा—

"बेटी मैना ! तुम चुप कैसे हो ? बोलो, तुम क्या चाहती हो ?"

मैनासुन्दरी ने जैनाचार्य से शिक्षा पाई थी। वह तत्त्व-वेत्ता थी। असत्य से उसे घृणा थी। उसने उत्तर दिया—

"पिताजी ! यह तो सही है कि प्रत्येक माता-पिता का उनकी सन्तानों पर सांसारिक दृष्टि से बड़ा उपकार होता है, क्योंकि वे इस जीवन में प्रत्यक्षतः उनका लालन-पालन करते हैं, किन्तु किसी भी व्यक्ति द्वारा यह गर्व किया जाना कि वह अन्य व्यक्तियों का पालनकर्त्ता है और जिसे चाहे उसे सुख या दुःख दे सकता है एक भ्रम है, असत्य है, मिथ्याभाषण है।"

मैनासुन्दरी के इस कथन को सुनकर राजसभा स्तब्ध रह गई—यह लड़की क्या कह रही है ? भरी सभा में अपने पिता, राजा प्रजापाल के कथन का विरोध कर रही है। इतना ही नहीं, उस कथन को असत्य एवं मिथ्या कह रही है। इसे अचानक यह क्या हो गया है ? भय और आशंका से उस सभा में उपस्थित प्रत्येक व्यक्ति का हृदय धड़कने लगा।

राजा प्रजापाल भी मैनासुन्दरी के इस कथन को सुन-कर आश्चर्य में डूब गया। उसने कहा—

"पुत्री ! तू क्या कह रही है ? तेरा आशय क्या है ? क्या तुझे मेरी शक्ति में विश्वास नहीं ? क्या मैं जो चाहूँ वह नहीं कर सकता ?"

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

"पिताजी ! इस संसार में प्रत्येक प्राणी अपने-अपने शुभ या अशुभ कर्मों से ही अच्छे या बुरे परिणामों को भोगता है। अन्य कोई प्राणी न उसे सुख दे सकता है और न दुख। यह अटल कर्म सिद्धान्त है। अतः मैं अत्यन्त विनम्रतापूर्वक आपसे प्रार्थना करती हूं कि आप भी इस तथ्य को समझें, ग्रहण करें तथा मिथ्याभिमान करने से बचें।"

भरी सभा में, अपनी ही पुत्री द्वारा, स्वयं के प्रति आक्षेपजनक प्रतीत होता हुआ यह कथन सुनकर राजा प्रजापाल आग-बबूला हो उठा। गरजकर उसने कहा—

"नादान ! लड़की तो क्या तू यह कहना चाहती है कि यदि मैं चाहूँ तो तुझे सुख या दुःख नहीं दे सकता ?"

"पिताजी ! आप यदि ज्ञान की शुद्ध दृष्टि से देखेंगे तो समझ सकेंगे कि आप तो क्या, संसार का कोई भी समर्थ से समर्थ माना जाने वाला व्यक्ति भी, संसार के छोटे से छोटे प्राणी के कार्यक्रम में अणु-मात्र भी परिवर्तन नहीं कर सकता।"

"बस-बस, अब तू अपनी बकवास बन्द कर। अच्छी शिक्षा प्राप्त की तूने ? मैंने तुझे जन्म लेने के बाद से ही सभी प्रकार का सुख उपलब्ध कराया और तू कहती है कि प्राणी अपने ही कर्मों से सब कुछ प्राप्त करता है ? यह सारा राजसुख जो तू भोग रही है, वह मैंने तुझे प्रदान नहीं किया तो क्या तू स्वयं अपने साथ लाई थी ? यदि तेरा ऐसा ही मानना है तो तू अब देखना कि तुझे तेरे कर्मों का कैसा फल मिलता है।"

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

क्रोध के आवेश में इतना कहकर राजा प्रजापाल खड़ा हो गया। सारी राजसभा स्तब्ध और अवाक् स्थिति में खड़ी हो गई। मैनासुन्दरी भी शान्तभाव से हाथ जोड़कर खड़ी हुई और उसने कहा—

"पिताजी! इस समय आप मिथ्याभिमान और क्रोध से ग्रसित हैं। धर्म के सार-स्वरूप मेरी बात को आप समझना नहीं चाहते। किन्तु मैं विवश हूँ। मेरी तो यही मान्यता दृढ़ और अटल है कि प्राणी अपने ही कर्मों का शुभ-अशुभ परिणाम भोगता है। मेरे भी भाग्य में जो होगा, अर्थात् जैसा भी मेरे कर्मों का उदय होगा, उसे मैं धैर्यपूर्वक सहन करूँगी।"

"चूल्हे में गए तेरे कर्म और भाड़ में गया तेरा ज्ञान।"—कहता हुआ, क्रोध से फुफकारता हुआ, आँखों से अंगारे बरसाता हुआ राजा वहाँ से चला गया। □

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

मैनासुन्दरी की माता ने अपनी दासियों से जब राज-सभा का सारा हाल सुना और राजा के भीषण क्रोध की बात उसने जानी तब वह अपनी प्यारी बेटी के भविष्य की चिन्ता से अधमरी हो गई।

किन्तु शीघ्र ही मैनासुन्दरी अपनी माता के पास आई और उसके चरणों का स्पर्श करके बोली—

"माता! तू उदास क्यों होती है? तूने ही तो मुझे जिनधर्म की शिक्षा स्वयं दी है तथा पूज्य जैनाचार्य से भी शिक्षा दिलवाई है। तू इतनी धीर-गम्भीर और ज्ञानी होकर भी यदि दुःख करेगी तो फिर मेरे जैसी अबोध बालिका का क्या ठौर-ठिकाना रहेगा? अतः माता! तू दुःखी न हो। मुझे दृढ़ विश्वास है कि मनुष्य यदि सत्कर्म करता चले तो उसका कोई अनिष्ट कभी नहीं हो सकता।"

"किन्तु बेटी! तेरे पिता बड़े क्रोधी हैं। अपने क्रोध के आवेश में वे तुझे कड़े से कड़ा दण्ड भी तो दे सकते हैं। यदि तुझे कुछ हो गया तो मैं कैसे जीवित रहूँगी?"

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

"अरी माता ! तू ज्ञानी भी है और भोली भी। मैं कहती हूँ कि तू तनिक भी चिन्ता न कर। इस जगत में कोई प्राणी किसी भी अन्य प्राणी का लेशमात्र भी अकल्याण नहीं कर सकता है। सभी अपने-अपने कर्मों का ही फल प्राप्त करते हैं। यदि मेरी आत्मा धर्म में दृढ़ है तो फिर मुझे किसी से डरने की जरूरत नहीं है। तू शान्त होकर देख कि अब आगे क्या-क्या होता है।"

किसी प्रकार से मैना ने अपनी माता को शान्त तो कर दिया किन्तु ममतामयी माता के हृदय के भीतर शूल की भाँति चिन्ता शालती ही रही।

दूसरे ही दिन राजा प्रजापाल कतिपय राजपुरुषों के साथ वन-भ्रमण को निकला। वह अपने मन को बहलाना चाहता था। गत दिवस भरी सभा में उसने स्वयं अपने ही अज्ञानवश जो अपना अपमान माना था वह उसे निरन्तर खल रहा था और वह अज्ञानान्ध अपनी ही बेटी को कोई कड़ी सजा देने का उपाय खोज रहा था।

वह अवसर मिल भी गया।

राजा की सवारी जब वन-प्रान्तर में आगे बढ़ रही थी तब सामने, दूर से उसे राजमार्ग पर धूल उड़ती हुई दिखाई दी और ध्यान से देखने पर कोई यात्रियों का काफिला राजधानी की ओर ही आता हुआ दिखाई दिया।

राजा ने तुरन्त एक घुड़सवार को आगे भेजा, यह जानने के लिए कि वे लोग कौन हैं; और स्वयं वृक्षों की शीतल छाया में ठहर गया।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

"कौन हो भाई, तुम लोग ?"

"हम ? हम तो भाई भाग्य के सताये हुए कोढ़ी हैं।"

"कोढ़ी ? छिः छिः !"—कहकर वह सवार कुछ कदम पीछे हट गया और फिर उसने पूछा—

"इधर कहाँ जा रहे हो ? जानते नहीं यह सामने परम दानी राजा प्रजापाल की राजधानी है।"

"जानते हैं नायक ! इसीलिए तो दानी राजा से हम अभागे कुछ याचना करने के लिए लम्बी मंजिल तयकर यहाँ तक आये हैं !"

"अरे कोढ़ियो ! कुछ लेना ही है तो उसके लिए इतने समीप आने की क्या आवश्यकता थी ? दूर रहकर ही किसी के साथ सन्देश भेज दिया होता।"

"भूल हुई नायकजी ! अभी तो हम राजधानी से दूर ही हैं। सोचा था कि यहीं कहीं किसी वापी के किनारे डेरा डाल लेंगे।"

"ठीक है, ठीक है। अब तुम लोग यहीं ठहरो। देखो, वह रही एक वापी—उत्तर दिशा में। वहीं डाल लो अपने खाट-खटोले। खबरदार एक कदम भी अब आगे मत बढ़ाना। मैं वापिस जाकर महाराज को खबर करता हूँ। फिर जैसी महाराज की आज्ञा।"

"जुग-जुग जियो, नायक ! तुमने हमारा काम सरल कर दिया। जल्दी लौट आना। महाराज से हमें बड़ी आशा है।"

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

इस प्रकार उस काफिले का हालचाल जानकर अश्वारोही तेज चाल से घोड़ा दौड़ाता हुआ राजा के पास आ पहुँचा और सिर झुकाकर बोला—

"अन्नदाता ! अच्छा हुआ कि आप आगे नहीं बढ़े, अन्यथा सर्वनाश हो जाता।"

"क्या मतलब ? क्या कोई भयानक शत्रु आ चढ़ा है ?"

"अरे महाराज, शत्रु हों तो उनके दाँत खट्टे करने के लिए सेवक हाजिर हैं किन्तु ये तो सड़े-गले कोढ़ियों का काफिला है। किसी की नाक गल गई है। किसी के हाथ-पैरों की अँगुलियों का पता नहीं। किसी के शरीर से रक्त और मवाद बह रहा है—छिः छिः।"

राजा विचार में पड़ गया। ऐसे भयानक रोगियों को अपनी राजधानी में प्रवेश देना तो सचमुच सर्वनाश को ही निमन्त्रण देना है। आखिर उसने अपने मन्त्री से सलाह ली—

"मन्त्रिवर ! यह बला यहाँ कहाँ से आ गई ? क्या करना चाहिए ?"

मन्त्री चतुर था। उसने दुनिया देखी थी। वह बोला—

"महाराज ! गरीब, भाग्य के मारे, अपंग, अपाहिज वे दीन कोढ़ी हैं। बहुत दूर से आपसे कुछ आशा लेकर आये होंगे। प्रजापालक के रूप में अपकी ख्याति जग विख्यात है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अतः उनसे पूछ लिया जाय कि वे क्या चाहते हैं। बहुत से बहुत कुछ चाहेंगे तो कुछ दवा-दारु, कुछ कपड़े-लत्ते, कुछ अनाज-वनाज या दो-चार गधे-खच्चर। सो आप उन्हें प्रदान कर दें। जंगलों में ये पड़े रहेंगे या आगे कहीं चल देंगे।"

"ठीक है। तो तुम्हीं जाओ मन्त्रिवर! जाकर पूछ लो कि वे क्या चाहते हैं और उसका इन्तजाम कर दो। अब हम इधर आगे नहीं जायेंगे। लौटकर हम राजोद्यान में कछ समय विश्राम करेंगे, हमारा सिर दुखने लगा है।"

राजा अपना मार्ग पलटकर राजवाटिका की ओर चल पड़ा तथा मन्त्री सकुचता हुआ कोढ़ियों की ओर।

× × ×

मन्त्री चल तो पड़ा, राजा की आज्ञा जो थी, करता तो और करता भी क्या? किन्तु अपने मन में वह डर रहा था कि कहीं उनकी छूत उसे न लग जाए, वरना वह बेमौत मारा जाएगा और पीढ़ियों-दर-पीढ़ियों से राज-कोष में से चुराई हुई अथाह सम्पत्ति धरी की धरी रह जाएगी।

खैर, जाना तो था ही सो वह चला। दूर से ही सड़े-गले अंगों से बहते मवाद की दम घोटने वाली बदबू उसे आने लगी और उसका जी मिचलाने लगा। दिन-रात राजमहलों में चन्दन और इत्रों की सुवास में श्वास लेने वाले उस मन्त्री की निरीह हालत उस समय देखने लायक ही थी।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

काफी दूर से ही उसने हाँक लगाई—

"अरे ओ भैया ! कौन हो तुम लोग ? जरा कोई एक अच्छा सा आदमी आगे को तो आओ। मुझसे तो तुम लोगों की बदबू ही सहन नहीं होती।"

वही बूढ़ा नायक, जिसने रानी कमलप्रभा तथा कुमार को प्रेमपूर्वक अपने आश्रय में किसी दिन ले लिया था और उनके प्राणों की रक्षा की थी, आगे आया। उसकी कमर अब काफी झुक चुकी थी। लाठी के सहारे, धुँधली आँखों से रास्ता टटोलता हुआ वह मन्त्री के समीप पहुंचा।

मन्त्री दो-चार कदम और पीछे हट गया और बोला—

"अरे भाई, मेरे कान अभी तेज हैं और मुझे दिखाई भी देता है। जरा दूर ही रहो और बताओ कि तुम लोग कौन हो, कहाँ से आए हो, क्या चाहते हो ?"

बूढ़े नायक को अपनी इस दीन-हीन अवस्था में भी मन्त्री के इस व्यवहार से चोट लगी। आखिर परमात्मा की सृष्टि का वह भी तो एक जीव था। आज अपाहिज था, कोढ़ी था, किन्तु इसमें उसका क्या दोष ? दोष था तो उसके गत जन्म के किन्हीं कर्मों का। किन्तु उस कारण से क्या मनुष्य को मनुष्य से घृणा करनी चाहिए ?

कुछ रूखे से स्वर में उसने उत्तर दिया—

"आप कोई राजपुरुष प्रतीत होते हैं। बड़े आदमी हैं। बड़े भाग्य हैं आपके। हम तो पशु हैं, कोढ़ी हैं। जहाँ इस पापी पेट को दो दाने मिल जाते हैं, चल देते हैं.....।"

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

"ठीक है, ठीक है, मतलब की बात कहो।"—मन्त्री ने टोका, वह एक क्षण भी अधिक उस आदमी के पास ठहरना नहीं चाहता था—"तुम लोग क्या चाहते हो ? अभी महाराज से कहकर तुम्हें दान दिला देता हूँ।"

यह सुनकर बूढ़ा नायक कुछ क्षण सोच-विचार में पड़ गया। पहले तो उसने सोचा कि राजा से पर्याप्त धन-सम्पत्ति माँग ले, ताकि कुछ समय कहीं एकान्त में रहकर गुजारा जाय किन्तु इतने में ही उसे ध्यान आया कि उनका राजा—उम्बर राणा—(श्रीपाल) अब युवक हो गया है। यद्यपि उसे कोढ़ ने ग्रस लिया है, फिर भी उसका शरीर बलिष्ठ है और वह कान्तिमान भी है। वह अब तक अविवाहित भी है। यह राजा बड़ा दानी समझा जाता है। तो इससे अपने प्रिय राजा के लिए किसी अच्छी लड़की की माँग ही वह क्यों न कर ले ? सम्भव है शुभांगी सुलक्षणा लड़की के आने से उम्बर राणा और उसके साथ ही अन्य लोगों का रोग भी दूर हो जाय। ईश्वर की लीला को कौन जानता है।

यह सोचकर उसने हाथ जोड़कर मन्त्री से कहा—

"महाराज ! आपके राजा बड़े दानी-ज्ञानी हैं न ? हम जो माँगेंगे वह दे तो देंगे न ?"

"क्यों नहीं ? अवश्य देंगे। बोल तुझे क्या चाहिए ? धन चाहिए ? अन्न चाहिए ? वस्त्र चाहिए ? कोई जमीन चाहिए ठौर-ठिकाने के लिए ?"

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

ठौर-ठिकाना तो हम अपंगों का भगवान ने ही छीन लिया है। अब कौन से ठौर-ठिकाने की तलाश करें ? जहाँ रात पड़ जाय, गूदड़े पसारकर पड़े रहते हैं। धन-सम्पत्ति को भी लेकर कहाँ रखें ? ले भी लेंगे तो अभी कुछ ही देर में आपके सिखाए-पढ़ाए सैनिक, चोर-उचक्के उसे वापिस ले जायेंगे। और अन्न तो भगवान दो जून को जैसे-तैसे जुटा ही देता है। कुछ नहीं मिलता तो जंगल के कन्दमूल-फल तो मिल ही जाते हैं.....।"

"अरे, तू तो भाषण झाड़ रहा है कि प्रार्थना कर रहा है। जल्दी से कह कि क्या चाहिए तुझे ?" मन्त्री अकुलाकर बोला।

"महाराज हमारी एक ही इच्छा है। हिम्मत करके कह दूँ ?"

"हाँ, हाँ, कह दे। जल्दी से कह दे।"

"तो प्रभु ! हमारा राजा है न—उम्बर राणा, वह बड़ा होनहार है। जवान है। आप देखें तो कहें कि ऐसे देवता पुरुष को यह रोग कैसे लग गया—भाग्य की लीला है—कर्मों का ही फल है—सो महाराज वे अभी कुँवारे हैं। उनके लिए हमें कोई सुलक्षणा लड़की चाहिए। आपके दानी महाराज उनके लिए कोई अच्छी-सी लड़की तलाश करके उनका ब्याह रचा दें तो बस हम लोग गंगा नहा लें....।"

"गंगा नहा लें ? अरे, तू कबर में पाँव लटकाए बैठा है और तुझे शादी-ब्याह की सूझ रही है। किसी भली

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

लड़की की जिन्दगी बिगाड़ना चाहता है ? लगता है तेरी बुद्धि सठिया गई है। कुछ और चाहिए तो जल्दी से बोल, वरना मैं चला।"

व्यंग्यपूर्वक यह कहकर मन्त्री चलने के लिए मुड़ा।

बूढ़े नायक ने उसी दृढ़ता से कहा—

"आप जाते हैं तो भले पधारें। हमें तो जिस वस्तु की आवश्यकता थी सो हमने बता दी। अब आगे आप जानें और आपके दानी राजा।"

बूढ़ा भी अपनी यह बात कहकर लाठी टेकता, जमीन टटोलता लौट पड़ा।

राजा साहब अपने राजविहार में शीतल निकुञ्जों में स्फटिक के सिंहासनों पर जल-यन्त्रों से उड़ती हुई फुहारों तथा उनमें से प्रकट होती हुई इन्द्रधनुषी छटा का आनन्द ले रहे थे। पक्षी मधुर ध्वनि में गान कर रहे थे और सुन्दरी नर्तकियाँ अपने मनोरम नृत्यों द्वारा कोढ़ियों के दर्शन मात्र से राजा साहब के सिर में उठी पीड़ा का शमन कर रही थीं।

तभी मन्त्री आ पहुँचा। सिर झुकाकर खड़ा हो गया।

राजा ने उसे देखा और पूछा—

"मन्त्रीजी ! क्या चाहते हैं वे लोग ? दे-दिलाकर भगा दिया न उन्हें।"

मन्त्री असमंजस में था कि क्या कहे। किसी प्रकार साहस जुटाकर बोला—

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

"अन्नदाता ! ये कोढ़ी लोग तो दिमाग के भी कोढ़ी हैं। धन, अन्न, वस्त्र, जमीन, ऊँट, घोड़ा तो कुछ माँगते नहीं..... ।"

"तब क्या माँगते हैं, हमारा सिर ? हमारा सिर तो उन्हें देखने से ही अब तक दुख रहा है।"—राजा ने झल्लाकर कहा।

"परमात्मा आपको चिरायु करें अन्नदाता ! किन्तु वे कोढ़ी कहते हैं कि उनका कोई एक राजा है, पता नहीं क्या नाम बताया, मैं तो भूल ही गया। खैर, अपने उस राजा को लिए वे एक लड़की की माँग आपसे कर रहे हैं। भला उनकी मजाल तो देखिए।"

"लड़की माँगते हैं ? क्या मतलब ? क्या करेंगे वे उस लड़की का ? अचार डालकर खाएंगे ? या अपनी अभागियों की सेना में एक और अभागी की वृद्धि करना चाहते हैं ?"

"जो कुछ भी हो अन्नदाता ! वे अपने राजा का किसी लड़की के साथ ब्याह करना चाहते हैं। आपको दानी समझकर आपसे उन्होंने एक लड़की की याचना की है।"

"गधे हैं। मौत के मुँह में लटकते कोढ़ी और फिर उनका राजा ? और फिर उस राजा के लिए रानी ? कुदरत भी क्या-क्या तमाशे किया करती है। जाओ, कह दो उन मूर्खों से कि लड़की-वड़की नहीं मिलेगी। कुछ और चाहिए तो माँग ले जाओ।"

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

"जो आज्ञा महाराज" – कहकर मन्त्री मुड़ा। वह द्वार के पास तक गया ही था कि अचानक राजा ने उसे पुकारा—

"मन्त्री !"

आश्चर्य में डूबा मन्त्री उल्टे पैर लौट आया। बोला—

"अन्नदाता !"

"अरे मन्त्रिवर ! हमें एक कमाल की बात सूझी है। तुम भी सुनोगे तो हमारी प्रत्युत्पन्नमति की प्रशंसा करोगे। करोगे न ?"

"महाराज ! आपके ज्ञान और विवेक के सहारे तो यह सारा राज्य चल ही रहा है। जनता आपकी प्रशंसा करते थकती ही नहीं।"

"तो सुनो, उन उल्लू के पट्ठों से कह दो कि कल वे अपनी बरात सजाकर अपने कोढ़ी दूल्हे को नगर के द्वार तक ले आएँ। उस दूल्हे की शादी ऐसी सुन्दर लड़की से की जायगी कि उनकी सात पीढ़ियाँ तर जायँ। और उस नालायक लड़की.....।"

मन्त्री राजा की इस अचानक पलट गई दिमागी हरकत से असमंजस में पड़ा खड़ा हुआ चुपचाप सुन रहा था और समझने की कोशिश कर रहा था कि राजा की मर्जी क्या है। उसे इस प्रकार मुँहबाए खड़ा देखकर राजा ने कुछ क्रोध से कहा—

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

"अब देखते क्या हो? जाओ, हमारी आज्ञा उन्हें सुना दो। कल बरात नगर-द्वार पर आ जानी चाहिए।"

किन्तु मन्त्री का माथा ठनक गया था।

अपने सिर को जमीन की ओर कुछ और झुकाकर हाथ बाँधे हुए ही उसने कहने का साहस किया—

"महाराज! आप सर्वशक्तिमान हैं। आज जो चाहें सो कर सकते हैं। किन्तु महाराज आप किस लड़की के करम फोड़ने का विचार कर रहे हैं.....?"

"बको मत। वह लड़की बड़ी धर्म-कर्म की बातें करती है न? भरी सभा में मेरा अपमान भी उसने किया है। अब देखता हूँ कि उसके कर्म उसे क्या-क्या खेल दिखाते हैं।"

"आपका मतलब, महाराज कहीं.....कहीं राज-कुमारी.....।"

"तुम भी बुद्धिमान हो मन्त्री! जल्दी ही बात समझ जाते हो। हाँ, मेरा मतलब मैनासुन्दरी से ही है। मैं सोच रहा था कि उसे क्या शिक्षा दूँ जिससे कि उसका गर्व गलित हो जाय। लगे हाथ मेरे द्वार पर आये हुए याचकों की इच्छा पूर्ति भी हो जायेगी और मैना को उसके कर्मों का फल भी मिल जायेगा। एक तीर से दो निशाने हो जायेंगे।"

अज्ञान के अन्धकार में भटकता हुआ, मिथ्या को सत्य मानता हुआ और गर्व के पाश में जकड़ा हुआ एक पिता

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

भी अपनी सन्तान के प्रति कितना कठोर हो सकता है तथा कितना बड़ा अन्याय कर सकता है इसका यह एक ज्वलन्त उदाहरण था।

आज भी अधर्म होता है। लोग जानते नहीं, अपने आपको पहिचानते नहीं; अन्धश्रद्धा में पड़े अपने दिन-रात के काले कारनामों को भगवान के मत्थे मढ़ देते हैं कि तू जाने तेरा काम जाने, तू हमारा रक्षक है, हमारे पापों को छिपा ले, या क्षमा कर दे।

किन्तु भगवान उसमें क्या करेगा? यदि वह कुछ करता होता तो एक साथ ही सारी सृष्टि का पाप-कलुष न धो डालता? सबको एक साथ ही सद्बुद्धि न दे देता? सभी के कष्ट क्षण मात्र में न हर लेता?

लेकिन ऐसा तो कोई भगवान है नहीं जो इतना सिर-दर्द अपने माथे ले।

भगवान हैं, वीतराग भगवन्त हैं। किन्तु वे 'वीत' 'राग' हैं। संसार के, जीवन के सभी झमेलों से, छोटे से छोटे कर्म से भी परे हैं। वे तो अमूर्त पुण्य हैं।

उस अमूर्त्त पुण्य को समझा जाय, उसका बराबर चिंतन किया जाय, उस पर अपनी व्यवहार-क्रिया चलाई जाय, तभी पुण्यलाभ हो सकता है।

किन्तु एक तीर से दो निशाने लगाने वाले अधार्मिक जीव उस काल में भी निकल ही आते थे और इस काल में तो उनकी संख्या दिनोंदिन बढ़ती ही जाती है

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

और भय होता है कि आखिर इस मानव-जाति का भविष्य क्या होगा ?

किन्तु कथा को तो आगे चलना है। इस कथा में से ही पाठक अपनी सामर्थ्य के अनुसार सार ग्रहण करेंगे।

राजा प्रजापाल ने जब मन्त्री को आदेश दिया तो मन्त्री, तथा वहाँ उपस्थित सभी चापलूस एक बार तो सन्न रह गये। क्योंकि वे जानते थे, अपने हृदय में उन्हें उनका ही विश्वास कहता था कि मैनासुन्दरी भली लड़की है, ज्ञानी है, उसने धर्म के तत्त्व को ठीक समझा है और वह अत्यन्त दृढ़ चरित्र वाली लड़की है। उसने अपने धार्मिक विचार बिना प्राणों की चिन्ता किये हुए भी सभा के सम्मुख रख दिये।

किन्तु चापलूसों को धर्म की बात से क्या लेना-देना ? उन्हें तो अपना उल्लू सीधा करने से मतलब। सो क्षणभर की शान्ति के बाद ही वे सब एक साथ बोल पड़े—

"अन्नदाता की जय हो ! महाराज ने बड़ा सुन्दर हल इस समस्या का निकाल लिया है। राजकुमारी मैनासुन्दरी को अपने धर्म-कर्म का बड़ा अभिमान है। अब उसका सारा अभिमान गल जायगा। अन्नदाता ! आपने एक ही तीर से वास्तव से दो निशाने मार लिए हैं। आपकी बुद्धि को धन्य है।"

× × ×

धिक्कार है ऐसे मूढ़मति, मदान्ध, स्वार्थी, विषय-लोलुप

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

लोगों को, जो अपने क्षुद्र से क्षुद्र स्वार्थ के लिए किसी भी अबोध अथवा अशक्त प्राणी का सर्वनाश करने में भी नहीं चूकते।

पर जो होना था, वह हुआ।

धूमधाम से राजकुमारी मैनासुन्दरी तथा कोढ़ी उम्बर राणा का विवाह हो गया।

उस धूमधाम में कितने लोगों की आहें और आँसू छिपे थे, इसे किसी ने नहीं जाना। उज्जयिनी के नागरिक कोई अन्धे तो थे नहीं जो इस भीषण अन्याय को देख नहीं सकते? अथवा देखकर अपनी आँखों के सामने के अबोध बालिका का इस प्रकार से लगभग जीवित मरण देखकर द्रवित न होते? धूमधाम केवल राजा के खरीदे हुए गुलामों के ढोल-ढमालों की थी। शेष सारी नगरी उदास थी। आबाल-वृद्ध उस दुष्ट राजा को मन ही मन कोस रहे थे, मैनासुन्दरी के दुर्भाग्य पर चुपचाप आँसू बहा रहे थे और उसके भविष्य के लिए मंगलकामना भी रहे थे।

साहस किसी का न था कि राजा की आज्ञा के विरोध में एक शब्द भी कहे।

विसर्जन हुआ। नागरिक सिर नीचा किये अपने-अपने घरों को लौट गए। अधिकांश घरों में उस दिन चूल्हा भी नहीं जला।

शाम पड़े दीपक जलाकर अपना शोकभरा मुख देखने

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

का साहस भी बहुत लोगों को नहीं हुआ। अनेक घरों में अन्धकार ही रहा।

× × ×

उज्जयिनी नगरी के सुदूर छोर पर, नगरी से लगभग बाहर ही, क्षिप्रा नदी के किनारे कुछ छोटी-छोटी घास-फूस की झोपड़ियाँ रात के अन्धेरे में चाण्डालिनियों जैसी दीख रही थीं। मानो वे मनुष्यों के आवास नहीं, इस शस्य-श्यामला धरती का कोढ़ ही हों।

ऐसी ही एक झोंपड़ी में एक छोटा-सा तैल-दीप जल रहा था।

आप आश्चर्य न करें, इस तैल-दीप के हलके-से, पीले-से प्रकाश में एक चन्द्रमा उदित हुआ था।

चकित न हों, यह चन्द्रमा और कुछ नहीं, सती मैना-सुन्दरी का चन्द्रमुख ही था। और वह अपनी पूर्ण कला में खिला हुआ था।

कोई भी सोच सकता है कि ऐसी विषम परिस्थिति में एक अबोध बाला, जिसे जीवनभर के लिए किसी कोढ़ी जैसे असाध्य रोगी के साथ बाँध दिया गया हो, कितनी दुःखी हो सकती है!

उसे रोना चाहिए। सिर पटक-पटककर रोना चाहिए। अपना करम फोड़ लेना चाहिए। जहर खा लेना चाहिए। किसी कुएं-बावड़ी में डूबकर मर जाना चाहिए। छुरी या तलवार से अपनी छाती चीर लेनी चाहिए।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

किन्तु बड़ी कठोर है मनुष्य की छाती। वह सब कुछ सह लेती है।

जो कुछ सोचा जा सकता है उसके विपरीत वह दृढ़-व्रती, पतिपरायणा सती मैनासुन्दरी प्रसन्न थी। उसकी आत्मा सर्वथा शान्त थी। एक क्षण के लिए भी उसके मस्तिष्क में यह विचार नहीं आया कि उसके साथ अन्याय हुआ है—कि उसका भविष्य मृत्यु के गर्त्त में झोंक दिया गया है— कि वह अपने कोढ़ी पति के साथ कैसे रहेगी ?

वह प्रसन्न थी कि भाग्य ने उसकी परीक्षा ली है।

और उसे अचल विश्वास था कि धर्म की ही विजय होगी।

वह जानती थी कि आज जो दुष्कर्म उदित हुए हैं वे कल शमित हो जायेंगे और फिर पुण्योदय का मंगल-प्रभात होगा।

ऐसा होना ही चाहिए।

सत्य की यह अमिट रेखा है।

शान्त, प्रफुल्ल, होठों पर मुस्कान लिए वह चन्द्रमुखी बैठी थी और अपने पति-परमेश्वर का स्मरण कर रही थी।

द्वार खोलकर उम्बर राणा ने भीतर प्रवेश किया।

किन्तु वह आगे नहीं बढ़ा। दूर कोने में ही उदास, चित्रवत् खड़ा रह गया।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

आहट पाकर मैनासुन्दरी ने पलटकर देखा—उसके पूज्य पतिदेव !

वह उठी, मंथर कदमों से आगे बढ़ी, पति के समीप पहुँची, उसके दानों कंधों पर स्नेहपूर्वक अपने कोमल हाथ रखे, और कहा—

"देवता ! पतिदेव ! आप क्या सोच रहे हैं ?"

उम्बर राणा के स्थान पर अब हम उसके वास्तविक नाम श्रीपाल का ही प्रयोग करें तो कथा में अधिक मार्मिकता आयगी। कोढ़ी उम्बर राणा के रूप में श्रीपाल अपनी नववधू के हस्तस्पर्श से सिहर उठा, मानो वधू मैना न हो, वह स्वयं ही हो।

उस चन्द्रमुखी मैना की मुस्कान और अधिक खिल उठी। मैना के-से ही मधुर स्वर में वह बोली—

"नाथ ! मेरे जीवन-सर्वस्व ! आप उदास क्यों हैं ? आपको तो प्रसन्न होना चाहिए कि मेरे जैसी सुन्दरी राजकन्या आपको प्राप्त हो गई है।"

अब श्रीपाल के उत्तर देने की बारी थी। उसने घन-गंभीर स्वर में कहा—

"राजकुमारी ! मैं सोच रहा हूँ कि यह क्या हो गया ? कहाँ तुम और कहाँ मैं ? तुम नन्दनवन का प्रफुल्ल पारिजात पुष्प और मैं इस संसार का घृणित सड़ा-गला कोढ़ ! तुम हिमालय की शुभ्र पवित्रता और मैं कीच

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

का क्षुद्र जन्तु ! तुम एक शान्त पवित्र प्रार्थना और मैं.....।"

"मेरे भगवान !"—मैना ने वाक्य पूर्ण किया—"मैं सचमुच एक प्रार्थना ही हूँ मेरे नाथ ! और आप मेरे भगवान हैं। यह प्रार्थना अब सदैव अपने भगवान के श्रीचरणों में ही रहेगी। भविष्य में अब आप कभी ऐसे कटुवचन अपने मुख से न निकालिएगा। मुझे पीड़ा होगी; और आप तो जानते ही हैं कि किसी भी प्राणी को पीड़ा पहुँचाना अधर्म है।"

"किन्तु राजकुमारी.....!"

"राजकुमारी नहीं, मैना। केवल मैना।" कहकर मैनासुन्दरी ने प्रेम से श्रीपाल की आंखों में झाँका।

मैनासुन्दरी की उन दो भोली, काली आंखों में असीम श्रद्धा तथा अनन्त प्रेम का सागर लहरा रहा था।

उस गहन सागर में श्रीपाल का दुःख, संकोच, संशय, परिताप—सब डूब गया।

उसने कहा—"आओ, मैना ! यहाँ बैठें।"

फटी-सी थी एक चटाई। संसार से उपेक्षित, जीवन से निराश कोढ़ियों के घर में और होता भी क्या ? उसी चटाई पर वे बैठ गये।

कुछ क्षण कोई नहीं बोला। मैना चाहती थी कि उसके पति का सब संकोच दूर हो जाय, वे स्वयं को अपराधी

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

न समझें और यथार्थ को स्वीकार करें, उससे प्रेम की दो बातें करें।

किन्तु श्रीपाल चिन्तित था।

उसे चिन्ता थी कि उसके संसर्ग में रहने से इस बेचारी निरपराधिनी विदुषी बाला को भी यह रोग लग जायगा और इसका जीवन नष्ट हो जायगा। श्रीपाल स्वार्थी नहीं था। वह महापुरुष था। कर्मों का दुष्प्रभाव आज उसे इस रूप में ले आया था किन्तु उसका भावी महान् था। अनेक भटके हुए जीवों को वह आत्म-कल्याण का मार्ग दिखाने वाला था।

श्रीपाल विषय-लोलुप भी नहीं था। अन्य कोई विषय-लोलुप, स्वार्थी मानव-पशु होता तो वह ऐसी सुन्दरी और नवयौवना वधू के साथ रागरंग में डूब जाता और अपने साथ ही उसके जीवन को भी विषयों की सड़न के गर्त्त में धकेल देता।

किन्तु श्रीपाल तो श्रीपाल ही था।

स्थिर शान्त बैठकर उसने मैना को समझाना चाहा—

"देखो मैना! यह तो तुम देख ही रही हो कि मुझे कोढ़ ने ग्रस लिया है। और यह रोग असाध्य है.....।"

"नहीं है।"

मैना ने मुस्कुराते हुए यही दो शब्द कहे और श्रीपाल टुकुर-टुकुर उसकी ओर देखता ही रह गया। वह सोच रहा था—कितनी दृढ़ आत्मश्रद्धा है इस लड़की में! कैसी

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अचल निष्ठा है इसकी ! कितना प्रेम है इसके छोटे से हृदय में ! कैसी वज्र की-सी दृढ़ता प्रकट होती है इसकी इस कोमल देह से।

आखिर उसने पूछा—

"असाध्य नहीं है यह रोग ? क्या तुम यही कह रही थीं ?"

"हाँ, मेरे देव ! इस संसार में असाध्य कुछ भी नहीं है।"—मैना ने उसी प्रकार मुस्कुराते हुए किन्तु निष्ठा-भरे स्वर में कहा।

"लेकिन मैना ! सारा संसार तो इस रोग को असाध्य ही मानता है। देखने में भी ऐसा ही आता है।"

"जो प्राणी मिथ्या देखता है उसे मिथ्या ही दिखाई देता है नाथ ! यह संसार अपने चर्मचक्षुओं से ही जो कुछ देखता है, बस, उसी को, वैसा ही सत्य मान लेता है। वह अपने ज्ञानचक्षु खोलता ही नहीं। यदि वह अपने ज्ञान-चक्षुओं से देखे तो जो कुछ मैं कह रही हूँ उसकी सत्यता उसके सामने प्रकट हो जाय।"

श्रीपाल भी ज्ञानी था। उसने मैनासुन्दरी के कथन को ठीक से समझ भी लिया। यह भी जान लिया कि मैनासुन्दरी के रूप में उसे एक आदर्श पत्नी मिली है—एक अनमोल रतन मिला है।

किन्तु फिर भी वह मैनासुन्दरी को इस भीषण रोग से बचाना चाहता था। उसने कहा—

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

"मैना ! तुम जो कुछ कह रही हो वह तत्त्व की बात है, और बिल्कुल ठीक है। मैं मानता हूँ। किन्तु इस समय तो हमारे सामने प्रश्न व्यवहार के संसार का है। यह रोग, हो सकता है कि साध्य भी हो, किन्तु इसका यह अर्थ तो नहीं कि मैं जानते-बूझते हुए भी तुम्हें अपने साथ इसका रोगी बना ही दूँ।

"इसीलिए मैना ! मैं यह कहना चाहता था कि यदि तुम ठीक समझो और चाहो, तो मुझसे दूर.....।"

"मैं आपके आशय को प्रारम्भ से ही समझ गई थी।" —श्रीपाल के मुख पर अपनी कमल जैसी कोमल हथेली रखते हुए उसने कहा—"किन्तु नाथ ! अब इस बात को समाप्त समझिए। आप मेरी बात को समझ गये हैं और मैं आपकी बात को। वह कहानी समाप्त।"

मैनासुन्दरी ने मुस्कुराते हुए श्रीपाल को भावी सुखद जीवन की आशा दिलाते हुए कहा—

"आइये, मेरे देवता ! आइये, मेरे साथ आइये, और अब हम अपनी नई कहानी प्रारम्भ करते हैं—नई कहानी, जिसमें आपका प्रताप समस्त लोक को आलोक प्रदान करेगा।" □

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

नई जिन्दगी का नया सवेरा। मैनासुन्दरी को आज आकाश कुछ अधिक नीला-चमकीला लग रहा था। आस-पास जंगल में खिले फूल—उसे अधिक चमकीले, अधिक मनमोहक लग रहे थे। कलरव करते पक्षी ऐसे लगते थे जैसे किसी उत्सव में निमग्न हों। जैसे कहीं कोई बड़ी, महत्त्वपूर्ण, शुभ घटना घटित होने वाली हो।

कल और आज में बड़ा परिवर्तन था।

कल तक रोग, उदासी, असमर्थता, संसार की घृणा —यही सब कुछ श्रीपाल और उसके साथियों के मानस-पटल पर घिरा रहता था। किन्तु आज वे उतने उदास, दीन-हीन, असमर्थ नहीं प्रतीत होते थे।

मैनासुन्दरी ब्रह्ममुहूर्त्त में ही उठ गई थी। तब तक श्रीपाल रात की थकान से सोया हुआ ही था। उसने उठ-कर नित्यकर्म निबटाए, स्नानादि से निवृत्त होकर वह ध्यानस्थ हो गई। जब वह ध्यानस्थ थी तब निखिल सृष्टि उसके लिए शून्य बन गई थी और उसके चित्त में केवल वीतराग भगवान की असीम अनुकम्पा ही विराजमान थी।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

यह सब कार्य पूर्ण होने पर उसने अपनी छोटी-सी कुटिया को झाड़-बुहारकर, लीप-पोतकर, तथा उस पर अलताएँ बनाकर इतना तो सुन्दर और स्वच्छ बना ही दिया था कि कल जिसने भी उस कुटिया को देखा हो, वह आज उसे पहचान भी नहीं सकता था।

कहीं से जुटा-जुटूकर मैना ने कुटिया के चारों कोनों में अगरु-धूम भी कर दिया था। मन्द-मन्द सुवास कुटिया में फैल रहा था, उसे सुवासित कर रहा था और निश्चय ही, रोग के कीटाणुओं को दूर भगा रहा था।

प्रिय लगने वाली उस मन्द-मन्द सुगन्ध तथा मीठी बोली में बोल रहे पक्षियों के स्वर से श्रीपाल की नींद खुली। आँखें खोलकर जब उसने अपने चारों ओर देखा तो भौंचक्का सा रह गया। एक बार तो उसे भ्रम हुआ कि वह जागा नहीं है, कोई स्वप्न देख रहा है। ऐसा सोचकर उसने अपनी आँखें फिर से बन्द कर लीं।

मैनासुन्दरी चुपचाप एक ओर खड़ी यह सब देख रही थी। उसे बड़ा आनन्द हुआ। वह धीमे-धीमे कदमों से चलकर श्रीपाल के पास गई और अपनी कोमल-कोमल कली जैसी अँगुलियों से उसने श्रीपाल के नेत्र-पटलों को सहलाया।

उस कोमल, भावपूर्ण स्पर्श से श्रीपाल ने फिर आँखें खोलीं। फिर उसे भ्रम हुआ और फिर वह आँखें बन्द करने ही जा रहा था कि मैना कूकी—

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

"प्राणनाथ ! प्रणाम ! नया सबेरा आपको शुभ हो।"

श्रीपाल ने असमंजस में मैना को देखा, कुछ क्षण और अपनी आँखें टिमटिमाईं और फिर हाथ बढ़ाकर उसने मैना को अपने पास बिठाकर कहा—

"मैना ! यह तुम्हीं हो न ? और यह कुटिया ? लेकिन कहाँ से आई ? यह सब क्या माजरा है ? क्या मैं कोई स्वप्न देख रहा हूँ ?"

मैना खुलकर हँसी। उसने एक मुक्त प्रेम-हास्य किया और उत्तर दिया—

"महाशय ! यह नया सबेरा है। आज से हमारी नई कहानी प्रारम्भ होगी। आप कल की बात इतनी जल्दी भूल गए क्या ?"

"नहीं, भूला नहीं मैना ! लेकिन यहाँ तो सब कुछ बदला-बदला सा दिखाई पड़ रहा है। यह सुन्दर स्वच्छ कुटिया, ये खिड़की में रखे हुए सुन्दर पुष्प, यह अगरु-गन्ध, और.....किसी देवकन्या जैसी तुम.....।"

"चलो रहने दो। मेरी प्रशंसा करने की कोई आवश्यकता नहीं। यह तो मेरा कर्तव्य था सो मैं ने प्रातः शीघ्र उठकर यह सब काम कर डाला। मनुष्य को सदैव शुद्ध वातावरण में रहना चाहिये। उसका तन भी शुद्ध होना चाहिये, उसका मन भी शुद्ध होना चाहिये, उसके चारों ओर का वातावरण भी शुद्ध होना चाहिये।

"अच्छा, अब आप इन बातों को छोड़िये और शीघ्र

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

उठकर दैनिक कार्यों से निवृत्त हो लीजिए। आज मैं आपको एक ऐसे स्थान पर ले चलूँगी कि आप वहाँ चलकर मुग्ध हो जाएँगे।"

"अच्छा! भला ऐसा कौन सा स्थान तुमने इस एक दिन में ही खोज डाला है, जरा मैं भी तो सुनूँ। कहीं तुम कोई जादूगरनी तो नहीं हो?"

मैना फिर हंसी। उसने अपनी दोनों हथेलियों में श्रीपाल के गालों को स्नेह से ढक लिया और कहा—

"जादूगरनियाँ कोई होती हैं या नहीं यह मुझे नहीं मालूम। कम से कम मैं तो कोई जादूगरनी हूँ नहीं। मैं तो केवल आपके इन पवित्र चरणों की दासी, आपकी पत्नी हूँ। आप में तथा प्रभु में मेरी अटूट श्रद्धा है। इस श्रद्धा के बल पर मनुष्य अशक्य को भी शक्य बना सकता है।

"लेकिन अब आप बातों में समय नष्ट न कीजिए। उठिये और हाथ-मुँह धो लीजिए, स्नान करके शुद्ध हो जाइए फिर हमें चलना है.....।"

"लेकिन चलना कहाँ है यह भी तो कुछ कहो। हम जैसे अपाहिजों के लिए कहीं जाने की जगह ही कहाँ है? शरण ही कहाँ है?"

"फिर वही बात" मैना ने टोका—"आप उठिए, तैयार हो जाइये। तब मैं आपको बताऊँगी कि इस संसार में क्षुद्र से क्षुद्र कृमि-कीट के लिए भी शरण है। फिर

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

हम तो मनुष्य हैं। मैं आपको ऐसे ही एक अशरण की शरण में ले जाऊँगी।"

अब श्रीपाल भी उत्साह से भर गया। उसका रोग-ग्रसित चेहरा कुछ खिला, और वह जल्दी से उठकर अपने कार्य में लग गया। निबटते-नहाते वह सोच रहा था कि क्या उसके सद्भाग्य से कोई देवी ही उसे प्राप्त हो गई है!

× × ×

नगरी से बाहर एक छोटी-सी वाटिका थी। छोटी तो थी, किन्तु सघन थी, सुरम्य थी, एकान्त स्थल था। संसार के कोलाहल से दूर हटकर एकचित्त से प्रभु स्मरण करने वालों के लिए वह आदर्श स्थान था।

उस वाटिका में एक जैन महामुनि अपने कुछ शिष्यों के साथ आकर ठहरे थे। मुनि-जीवन पवित्र है, दुर्लभ है और लोक-कल्याणकारी भी है। जैन मुनि तपस्या एवं ज्ञानाराधना द्वारा स्वयं अपने कर्मों की निर्जरा करते हैं, अपनी स्वभाव से विशुद्ध आत्मा को मायाजाल से हटाकर शुद्ध बनाते हैं, तथा भव्य जीवों को भी उसी कल्याण के मार्ग पर आगे बढ़ने की प्रेरणा देते हैं। जो भी व्यक्ति ऐसे मुनियों की वाणी सुनते हैं, उनमें श्रद्धा रखते हैं, तथा उनके बताए हुए मार्ग पर चलते हैं, उनका निश्चय ही इहलोक तथा परलोक दोनों सुधर जाते हैं।

मैनासुन्दरी को जैनधर्म में शिक्षा मिली थी, और

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

उसे जिन भगवान पर अटूट आस्था थी। जैनधर्म की शिक्षाओं को उसने अपने आचरण में उतार लिया था, अतः वह अभय थी। किसी भी कठिन से कठिन परिस्थिति का सामना वह विवेक, साहस तथा धैर्य से कर सकती थी। यही कारण था कि धर्म पर अचल आस्था रखकर उसने श्रीपाल जैसे कोढ़ से ग्रस्त युवक से विवाह भी स्वीकार कर लिया था और चेहरे पर एक शिकन भी नहीं आने दी थी।

जब श्रीपाल स्नानादि कर्मों से निवृत्त हो चुका, तब मैनासुन्दरी ने उससे कहा—

"आइये, मैं आपको एक बड़े पवित्र स्थान पर ले चलती हूँ।"

"पवित्र स्थान पर? मुझे? अरे, ऐसे किसी पवित्र स्थान पर मुझे भला कौन जाने देना? और क्या मेरे वहाँ जाने से उस स्थान की पवित्रता नष्ट नहीं हो जायगी?"

"आप भी कैसी बातें करते हैं? पहली बात यह है कि आपमें कोई अपवित्रता है ही नहीं। केवल एक रोग है, जो कर्मफल से उदित हुआ है। कर्मों की शान्ति होने पर यह रोग अवश्य ही समाप्त हो जायगा। पवित्रता या अपवित्रता तो, नाथ! हृदय के भावों में होती है। आपका हृदय स्वच्छ शुद्ध है। तब भला आपके अपवित्र होने का क्या प्रश्न!

"दूसरी बात यह है कि पवित्र स्थान पर जाने से, पवित्र आत्माओं के संसर्ग-संगति से, उनके पवित्र विचारों

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

के श्रवण-मनन तथा उन पर आचरण से घोर से घोर अपवित्रता भी हो तो वह नष्ट हो जाती है। अन्यथा फिर धर्म, जोकि पवित्रता का ही मूर्त्त रूप है, उसका मतलब ही क्या रह जाता है ?"

मैनासुन्दरी की यह बात सुनकर श्रीपाल चकित रह गया। उसने कहा—

"मैना ! तुम तो सचमुच परम विदुषी हो। मेरी माता भी मुझे कुछ ऐसी ही बातें समझाया करती थी। किन्तु इस समय मेरी माता जाने कहाँ होगी ?"

यह सुनकर मैना ने जिज्ञासावश पूछा—

"आपकी माताजी कहाँ चली गई ? क्या वे आपको रोगी देखकर अलग हो गईं ?"

"नहीं-नहीं, मेरी माता भला ऐसा कर सकती है ? वह मेरी रक्षा के लिए अपने प्राण भी दे सकती है। मेरे लिए उसने क्या-क्या कष्ट सहे हैं, यह कुछ लम्बी कथा है। फिर कभी सुनाऊँगा।"

"किन्तु वे अभी हैं कहाँ ?"

"ठीक-ठीक तो मुझे भी नहीं मालूम। किन्तु वे मेरे इस रोग का उपचार खोजने के लिए किसी वैद्यराज की खोज में निकल पड़ी हैं। जाने कहाँ-कहाँ भटक रही होंगी ?"

"ओह ! क्या वे बिल्कुल अकेली ही भटक रही हैं ?" —मैना ने चिन्तित होते हुए पूछा।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

"हाँ ऽऽ हैं तो अकेली ही। वैसे एक हमारा विश्वस्त साथी है। मेरे छोटे भाई जैसा समझो, चाहे मुझसे कुछ वर्ष बड़ा ही है। शशांक नाम है उसका। वह माताजी की खोज-खबर अवश्य रखता होगा ऐसा मेरा विश्वास है।"

"तब तो कुछ धीरज बँधा। आपकी माताजी को भी अब मुझे तुरन्त खोज निकालना होगा; लेकिन चलिए, देर हो रही है, बातों ही बातों में हम भटकने लगे। आइए।"

अपनी कुटिया से निकलकर श्रीपाल के साथ मैना-सुन्दरी उसी एकान्त वाटिका की ओर चली जिसमें जैन मुनिराज विराज रहे थे।

रास्ते भर दोनों में से कोई कुछ नहीं बोला।

मैनासुन्दरी अरिहन्त भगवान का स्मरण कर रही थी।

श्रीपाल जिज्ञासा में था कि उसे यह अद्भुत लड़की कहाँ ले जा रही है?

घड़ी भर में ही वे दोनों वाटिका के बहिर्द्वार तक आ पहुँचे। वहाँ क्षणभर के लिए मैनासन्दरी ठहरी, उसने श्रीपाल का हाथ अपने हाथ में लेकर कहा—

"प्राणनाथ! हम आ पहुँचे। इस वाटिका में एक परम ज्ञानी, परम तपस्वी जैनमुनिवर अपनी शिष्यमंडली सहित विराजे हैं। हम उन्हीं के दर्शन कर अपने जीवन को धन्य

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

करने तथा उनका आशीर्वाद प्राप्त करने आए हैं। आप अपने हृदय में पूर्ण श्रद्धा रखिए।"

श्रद्धावान तो श्रीपाल था ही। उसने कोई उत्तर नहीं दिया।

भक्तिभाव से पूरित हृदय लिए वे दोनों आगे बढ़ गए।

× × ×

एक सघन, विशाल अशोक वृक्ष के नीचे सादे वस्त्र के आसन पर शुभ्र, श्वेत वस्त्रधारी मुनिवर विराजमान थे। वे इस समय ध्यानमग्न थे। उनके मुखमण्डल से दिव्य तेज प्रकट होता हुआ प्रतीत होता था। सागर के समान वे शान्त दिखाई पड़ते थे। धर्म तथा तप से तपी हुई उनकी काया कुन्दन जैसी थी। उनके आसपास के वातावरण में अद्भुत शान्ति विराजती थी और एक पवित्र सौरभ पवन में लहराता प्रतीत होता था।

पक्षी आसपास के वृक्षों पर चहचहा रहे थे। किन्तु इनकी चहचहाहट भी बड़ी मधुर और कर्णप्रिय थी, मानो उस वाटिका में विराजित उन मुनिवर का सान्निध्य-सुख उनकी आत्मा में भी विकसित हो रहा था।

श्रीपाल और मैनासुन्दरी अत्यन्त धीमे कदमों से मुनिवर के समीप गये, इतने धीमे कदमों से कि उनकी ध्वनि से मुनिवर का ध्यान बीच में ही भंग न हो जाय। उन्होंने मुनिवर की तीन बार प्रदक्षिणा की और विधिपूर्वक वन्दना

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

करके वे शान्त भाव से हाथ जोड़कर उनके सामने ही भूमि पर कुछ दूरी रखकर निश्चल बैठ गये।

मुनिवर त्रिकालदर्शी थे।

ध्यान की घड़ियाँ धीरे-धीरे पूर्ण हुईं और मुनिवर ने अपने नेत्र खोले।

सहसा ऐसा प्रतीत हुआ कि जैसे किसी कंचन काया के निर्मल सरोवर में दो नीलकमल खिल गये हों।

उन नेत्रों में क्या नहीं था? प्रेम का पारावार लहरा रहा था। करुणा का विस्तृत आकाश फैला हुआ था। ज्ञान के अखण्ड-दीप आलोकित थे।

पति-पत्नी ने मुनिवर का ध्यान पूर्ण हुआ जानकर उन्हें पुनः वन्दन किया।

गंभीर प्रेम से सराबोर वाणी में मुनिवर ने कहा—

"धर्मलाभ!"

इसके बाद कुछ क्षण तक मैनासुन्दरी को यह सोचना पड़ा कि आगे वह वार्तालाप कैसे प्रारम्भ करे। फिर अपने मन को स्थिर करके वह बोली—

"पूज्य मुनिवर! आप अशरण के शरण हैं। हम पति-पत्नी आज आपकी शरण आये हैं।"

मुनिवर के पाटल ओष्ठों पर प्रेम और करुणाभरी मुसकान आई। वे बोले—

"आत्मा स्वयं ही अपनी शरण है, उसे जानना चाहिए।"

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

इतना ही कहकर मुनि मौन गए। किन्तु उनके नेत्रों से करुणामृत निर्झरित हो रहा था।

कुछ क्षण बाद मैनासुन्दरी ने ही कहा—

"मुनिवर! आपके दर्शनों से हृदय शीतल हो गया है। मन के समस्त आवेग शान्त हो गये प्रतीत होते हैं। आपका कथन यथार्थ है।"

"तब फिर आकुल क्यों हो?"—मुनिवर ने प्रश्न किया।

"आकुल? हाँ, मुनिवर, आकुल ही हो सकती हूँ। कारण भी आप जैसे ज्ञानी से अज्ञात नहीं हो सकता।"

मुनि पुनः प्रेमपूर्वक बोले—

"अपने पति के इस रोग के कारण आकुल हो न? धर्म का मर्म जानती हो, फिर भी आकुल हो? धर्म की शरण में आ जाने पर तो फिर कोई भय रहता नहीं, कोई व्याधि ठहरती ही नहीं।"

मैनासुन्दरी को अवसर मिल गया। उसने साहस करके स्पष्ट रूप से कहा—

"पूज्य मुनिवर! आज आपकी शरण में आ जाने पर दृढ़ आस्था हो रही है कि सब कल्याण ही होगा। किन्तु फिर भी मन मानता नहीं है। भन्ते! मेरे पतिदेव कोढ़ से ग्रस्त हैं। ये शीघ्र रोगमुक्त हों, ऐसा कोई उपचार जानना चाहती हूँ।"

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

'कर्म का फल टाले नहीं टलता। निरन्तर प्रभु-स्मरण तथा तप से कर्मों की निर्जरा हो जाती है।"—मुनिवर संकेत दिया।

"यथार्थ है, भन्ते! किन्तु हम किस विधि से, कैसा तप करें?"

"नवकारमंत्र परम पवित्र मंत्र है। आत्मा के स्वाभाविक पवित्र स्वरूप को प्रकट करने वाला है। इस मन्त्र के माध्यम से पंच-परमेष्ठियों का निरन्तर स्मरण करते रहो। साथ ही कुछ तपस्या भी रखो—आयंबिल व्रत बड़ा पुण्य प्रदाता है। धर्मलाभ।"

इतना ही कहकर मुनि मौन हो गए। उन्होंने क्षणभर के लिए अपने नेत्र बन्द किये, कुछ चिन्तन किया, फिर नेत्र खोलकर पुनः बोले—"धर्मलाभ!"

मैनासुन्दरी संकेत को समझ गई। मुनिवर जो कुछ कहना चाहते थे, कह चुके। उनका आशीर्वाद प्राप्त हो चुका।

वह उठ खड़ी हुई। उसके साथ ही श्रीपाल भी हाथ जोड़कर खड़ा हो गया। श्रद्धापूर्वक दोनों ने तीन बार झुककर मुनिवर को मस्तक नमाया और फिर धीरे-धीरे वे वाटिका से बाहर निकल आये।

मुनिदर्शन से उन दोनों भावुक प्राणियों का मन इतना भरा-भरा, ऐसा पवित्र उल्लासमय था कि अपनी कुटिया तक पहुँचने तक दोनों मौन ही चलते रहे और मुनिवर की

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सौम्य, पवित्र मुखमुद्रा को अपने अन्तर्चक्षुओं से निहारते रहे।

× × ×

संसार-चक्र इसी को तो कहते हैं। आत्मा माया-जाल में जकड़ी रहती है और फिर चलता है भवभ्रमण—जब तक आत्मा मायाजाल को काटकर अपने सभी कर्मों का क्षय करके पुनः अपने विशुद्ध स्वरूप में स्थित न हो जाय।

तपस्या तथा श्रद्धापूर्वक जिनप्रभु की आराधना से अशुभ कर्मों का क्षय होता है, शुभ कर्म उदित होते हैं।

श्रीपाल तथा मैनासुन्दरी मुनिवर के वचनों का अक्षरशः एकचित्त होकर पालन करने लगे। वे प्रातः-संध्या नवकार मन्त्र का जाप किया करते तथा आयंबिल व्रत धारण किये रहे।

अन्त में मुनिवर के वचन सिद्ध हुए। श्रीपाल के पुण्यों का उदय हुआ और देखते-देखते ही उसके शरीर की समस्त व्याधि विनष्ट हो गई। उसकी बलिष्ठ, सुन्दर, कंचनकाया अपनी अद्‌भुत कांति से दमकने लगी—मानो साक्षात् कामदेव ही श्रीपाल का रूप धरकर अवतरित हो गए हों।

मैनासुन्दरी की प्रसन्नता का अब कोई पार न रहा। धर्म में उसकी अचल श्रद्धा ने अपना शुभ परिणाम जो प्रकट किया था। वह प्रसन्न तो हुई ही, धर्म में उसकी आस्था और भी दृढ़ हो गई।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

इस परिणाम से उत्साहित होकर उस कोढ़ी दल के प्रत्येक व्यक्ति ने भी धर्म और तप की शरण ली और धर्म ने अपना प्रभाव वैसा ही दिखाया। सभी कोढ़ी पूर्ण रूप से स्वस्थ होकर अपने-अपने परिजनों से मिलने चारों दिशाओं में दौड़ते-भागते चले गये। इस प्रकार चारों दिशाओं में जैनधर्म की विजय-वैजयन्ती फहराने लगी।

उज्जयिनी नगरी ने यह चमत्कार देखा और वह चकित रह गई—धर्म का ऐसा प्रभाव ? नवकार मन्त्र तो मन्त्रराज ही सिद्ध हुआ। धन्य है भाई, ऐसे धर्म को ! धन्य-धन्य है मैनासुन्दरी को जिसने अपने प्राणों की भी चिन्ता न करके धर्म का आश्रय क्षण मात्र को भी न छोड़ा तथा प्रत्येक संकट का सामना अपनी अचल श्रद्धा द्वारा किया।

बात तो हवा के पंखों पर उड़ती है। आज तक जिस अहंकारी, कठोर पिता ने अपनी पुत्री की कोई खोज-खबर तक नहीं ली थी, उस अज्ञानी तथा मिथ्यात्वी राजा को भी जब यह समाचार ज्ञात हुआ तो वह भी चकित रह गया। उसका भी हृदय-परिवर्तन हो गया।

वह तुरन्त अपने सेवकों के साथ श्रीपाल से मिलने के लिए रवाना हुआ।

उस समय श्रीपाल तथा मैनासुन्दरी उन दिनों विचरण करते हुए उज्जयिनी में पधारे हुए जैन मुनिवर का प्रवचन सुनने गये हुए थे। राजा भी सदल-बल वहां जा

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पहुँचा। मुनिवर को वन्दन कर वह चुपचाप एक स्थान पर बैठ गया और प्रवचन सुनने लगा—

मुनिवर फरमा रहे थे—

"आत्मा स्वभाव से निर्मल है। स्वच्छ दर्पण की भाँति। कर्मों का जाला उस पर घिर जाता है और आत्मा मलीन हो जाती है। यह कर्म-जाल अथवा कर्म-चक्र फिर उस आत्मा को भव-भव में भटकाता रहता है और प्राणी अनेक जन्मों में, अनेक प्रकार के सुख-दुखों का अनुभव करता है.....

"अतः हे भव्यजनो! धर्म के तत्त्व का विचार करो। उस पर आचरण करो। ऐसा करने से ही समस्त आधि-भौतिक तथा आधिदैविक विपत्तियों का विनाश होता है और आत्मा का कल्याण होता है।"

राजा प्रजापाल कानों से इस प्रवचन को सुन तो रहा था किन्तु आँखें उसकी श्रीपाल पर ही टिकी हुई थी। उसे अपनी आँखों पर मानो विश्वास ही नहीं हो रहा था—कहाँ वह कोढ़ से ग्रसित, सड़ा-गला आदमी, और कहाँ यह देवोपम महापुरुष!

विचित्र है संसार! अद्भुत है प्रभु की कृपा! धन्य है ऐसे धर्म को जो पापी से पापी और अज्ञानी से अज्ञानी प्राणी की नैया को भी पार लगा देता है—राजा के मस्तिष्क में ये विचार ही झंझावात की भाँति चल रहे थे।

सभा विसर्जित हुई। सभी लोग मुनिवर को वन्दन

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

करके लौट पड़े। श्रीपाल और मैनासुन्दरी भी जब वाटिका के द्वार पर पहुँचे तो उन्हें सामने राजा प्रजापाल खड़े दिखाई दिये।

किन्तु इस सामने खड़े राजा और कुछ समय पूर्व के राजा में अब पृथ्वी-आकाश का अन्तर था।

राजा भावुकता से भरकर श्रीपाल की ओर बढ़ा और उसे अपने हृदय से लगा लिया। मैनासुन्दरी ने नीचे झककर अपने पिता के चरणों का स्पर्श किया। पिता ने पुत्री को गले लगा लिया।

प्रजापाल का कंठ गद्‌गद् था। मैनसुन्दरी की आँखों में हर्ष के अश्रु छलछला आये थे। राजा ने जैसे-तैसे कहा—

"बेटी ! मेरी प्यारी बेटी ! तू धन्य है, अद्‌भुत है। तेरे जैसी सती नारी को अपनी पुत्री के रूप में पाकर आज मैं भी कृतार्थ हो गया हूँ। बेटी मैना, और पुत्र श्रीपाल ! तुम दोनों सच्चे हृदय से मुझे क्षमा कर दो। मैं अज्ञान में था। मुझ पर अहंकार का मद चढ़ा हुआ था। अब वह मद उतर गया है। मेरा गर्व गलित हो गया है। मेरे ज्ञान-चक्षु खुल गये हैं। आज से मैं भी पूर्ण श्रद्धाभाव से जैन धर्म के तत्त्वों का चिन्तन-आचरण करूँगा। तुम दोनों ने मुझेक्षमा तो.....।"

"पिताजी ! आप ऐसा न कहें। आपका कोई दोष नहीं। यह तो प्रत्येक प्राणी के स्वयं के कर्मों का ही शुभ-

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अशुभ परिणाम होता है जो उसे भोगना ही पड़ता है। अब ये—मेरे पूज्य पतिदेव पूर्ण स्वस्थ हैं। इनके अशुभ कर्म नष्ट हो गये हैं। ये आपका आदर करते हैं।"

मैनासुन्दरी ने उत्तर दिया और श्रीपाल ने झुककर राजा के चरण छूने चाहे, किन्तु राजा ने उसे बीच में ही अपनी दोनों बाहों में भर लिया और वैसे ही गद्‌गद् स्वर में कहा—

"बेटा श्रीपाल ! क्षमा करना। मैं तुम्हें पहिचान नहीं पाया था। तुम अवश्य कोई विशिष्ट महापुरुष हो। आज मेरे जीवन की सबसे धन्य घड़ी है। किन्तु चलो, अब यहाँ कब तक खड़े रहेंगे ? चलो, महलों में चलो। मैना की माता इससे मिलने के लिए आतुर होगी। बेचारी रो-रोकर आधी रह गई है।"

रथ प्रस्तुत हुआ। राजा और मैनासुन्दरी रथ में बैठे। श्रीपाल भी रथ पर सवार होने जा ही रहा था कि उसके कानों में शब्द पड़े—श्रीपाल !

स्वर परिचित था। उस स्वर में इतना अगाध प्रेम था कि सुनने वाले के हृदय में अमृत के स्रोत फूट पड़ें।

श्रीपाल ने अपना पैर रथ की सीढ़ी से नीचे उतारा और पीछे मुड़कर देखा।

और जो कुछ उसने देखा उसे देखकर वह वर्ष और विस्मय से पागल ही हो गया—उसकी माता, उसकी प्यारी, ममतामयी माता, जिसने अपने पुत्र की रक्षा के

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

लिए अनेक संकट सहे थे, जिसने उसे रोगमुक्त करने हेतु जंगल-जंगल, नगरी-नगरी की खाक छानी थी—वही देवी-स्वरूपा उसकी माता महारानी कमलप्रभा सामने खड़ी थी।

दौड़ पड़ा श्रीपाल, माता के चरणों में जा गिरा, माता ने उसे उठाकर अपनी छलकती छाती से लगा लिया।

यह देवदुर्लभ क्षण था। अद्भुत शुभ-संयोग था। देवताओं ने भी इस मधुर-मिलन के अनुपम दृश्य को अवश्य ही अपने आकाशी विमानों में बैठकर देखा ही होगा।

श्रीपाल ने कहा—

"माँ ! मेरी प्यारी माँ ! तू यहाँ कैसे पहुँच गई ? कहाँ-कहाँ भटकी होगी तू मेरे लिए ? हाय ! बात तूने कितने दुख उठाए होंगे माँ..... !"

"बस कर, बेटे ! वह सब विगत की बात हो गई। अब उसका स्मरण करके इन आनन्दमय पवित्र क्षणों को क्यों नष्ट करें। तू स्वस्थ हो गया, अपने वास्तविक स्वरूप में प्रकट हो गया—और, मैं सुनती हूँ कि तुझे कोई सुन्दरी, सुशील राजकुमारी भी बहू के रूप में मिल गई है।"

यह देखकर और इस वार्त्तालाप को सुनकर मैनासुन्दरी झट-से रथ से नीचे उतर आई और उसने अपनी सास के चरणों में मस्तक नमाकर उनसे आशीर्वाद माँगा।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

"जुग-जुग जियो मेरे बच्चो ! सदा सुखी रहो । तेरा सौभाग्य अखण्ड रहे बेटी !" कहकर रानी कमलप्रभा ने अपनी प्यारी बहू को अपने हृदय से लगा लिया ।

आस-पास ठहर गये उज्जयिनी के नागरिकों ने यह सारा दृश्य देखा, यह संवाद सुना और वे हर्षविभोर होकर जयघोष करने लगे—

मैनासुन्दरी की जय हो ! महामना श्रीपाल की जय हो ! महाराज प्रजापाल की जय हो !

जैनधर्म की जय-विजय हो ! □

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

शशांक छाया की भाँति रानी कमलप्रभा के पीछे चलता था। वह जितना स्वामिभक्त था, उतना ही चतुर भी। वेशभूषा बदलकर बिलकुल नये रूप में प्रकट होने में उसका कोई सानी नहीं था। एक पल भर भी वह रानी को उनके प्रवासकाल में अपनी दृष्टि से ओझल नहीं होने देता था।

समय-समय पर वह रानी से प्रकट रूप में भी मिल लेता था। उन्हें किसी वस्तु की आवश्यकता होती तो ला देता था और कोई संकट प्रतीत होता था तो अपने बाहु-बल और बुद्धि से उसका निवारण कर देता था।

इतना करके वह फिर उसी प्रकार अदृश्य हो जाता था, जैसे कोई मानवेतर आत्मा क्षण दो क्षण के लिए प्रकट हो और देखते-देखते ही विलुप्त हो जाय।

अब श्रीपाल और मैनासुन्दरी राजा प्रजापाल के महलों में ही सुखपूर्वक निवास कर रहे थे। रानी कमल-प्रभा भी उनके साथ थी। प्रजापाल अपने गुणी और सुन्दर जामाता श्रीपाल का तो मानो भक्त ही हो गया

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

था। उसके संकेत पर वह अपने सैकड़ों दास-दासियों को कोई भी कार्य पूर्ण करने के लिए दौड़ा देता था।

कुछ समय ऐसे ही व्यतीत हुआ, किन्तु इस अवधि में भी रानी कमलप्रभा कभी-कभी उदास दिखाई देती थी। श्रीपाल से यह बात छिपी न रह सकी। एक दिन उसने रानी को गुमसुम देखकर पूछ ही लिया—

"माँ! मैं स्वस्थ हो गया, राजकुमारी मैनासुन्दरी जैसी पुत्रवधू तुम्हें प्राप्त हो गई, राजा प्रजापाल हमारा इतना सत्कार करते हैं फिर तू कभी-कभी उदास क्यों दिखाई देती है?"

बेटे का प्रश्न सुनकर माँ ने उत्तर दिया—

"बेटा श्रीपाल! मुझे और तो कोई कष्ट नहीं, किन्तु कभी-कभी मुझे शशांक याद आ जाता है। बहुत समय से वह दिखाई नहीं पड़ा। अन्तिम बार मैंने उसे उज्जयिनी में प्रवेश करते समय देखा अवश्य था, वह वेश बदले हुए था। मेरे समीप नहीं आया। दूर से ही देखकर बस अचानक भीड़ में गायब हो गया था। बस, उसके बाद अब तक उसका कोई ठौर-ठिकाना ही नहीं। अब तो उसे हमारे पास आ जाना चाहिए था।"

"अरे माँ, तो उसमें इतना चिन्तित होने की भला क्या बात है? मैं उसे फौरन खोजकर यहाँ बुला लेता हूँ।"

"तू उसे क्या खोजेगा श्रीपाल! वह इतना चतुर है कि एक बार वेश बदल लेने पर फिर उसे ब्रह्मा भी नहीं

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पहचान सकते। अनेक बार उसने मुझे भी इसी प्रकार भ्रम में डाला है और फिर खिलखिलाकर हँस पड़ा है। उसके इस प्रकार हँसते ही मैं उसे पहिचान लेती थी। किन्तु समझ में नहीं आता कि अब इतने दिन हो गए, हम लोगों की विपत्ति भी दूर हो गई, तब वह कहाँ और क्यों छिपा बैठा है ?"

श्रीपाल ने माता की यह बात सुनी और कुछ सोचकर फिर कहा—

"ठीक है माँ ! यदि वह शशांक है तो फिर मैं भी श्रीपाल हूँ। यदि एक सप्ताह के भीतर उसे खोजकर तेरे चरणों में न ला पटकूँ तो.....।"

"बस बस, बेटा ! तू कोई कठिन प्रतिज्ञा कर बैठेगा। मैं तेरे दृढ़ स्वभाव को जानती हूँ। तू रहने दे। मुझे विश्वास है कि इस जन्म में वह मुझे छोड़कर कहीं नहीं जा सकता। तुम दोनों तो मेरी दो आँखों के तारे जैसे हो। वह किसी आवश्यक कार्य में कहीं उलझ गया होगा। आता ही होगा।"

संयोग की बात है कि उसी समय एक दासी ने कक्ष में प्रवेश किया और हाथ जोड़कर कहा—

"प्रभु ! एक अद्भुत सँपेरा आया है। कहता है—उसके पास ऐसे-ऐसे अद्भुत सर्प हैं कि किसी ने कभी देखे तक न हों। हरे, लाल, पीले, चितकबरे, नीले, काले एक अंगुष्ठ जितने छोटे और विशालकाय अजगर की भाँति

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

भयानक—सभी प्रकार के सर्प हैं। उन सर्पों को वह बड़ी कुशलता से नचाता है। मैंने देखा तो नहीं, स्वामी! किन्तु वह ऐसा ही कह रहा है। आपको वह अपने इन अद्भुत सर्पों का नृत्य दिखाना चाहता है।"

वैसे तो श्रीपाल को नाग-नृत्य देखने में अभी कोई रुचि नहीं थी, वह अब जल्दी से जल्दी शशांक का पता लगाना चाहता था किन्तु यह सोचकर कि सँपेरा कुछ आशा लेकर उसके पास आया होगा तथा उसके सर्पों के खेल से माता का मन भी कुछ बहल जायगा, उसने दासी को आज्ञा दी—

"अच्छा जा, उसे यहाँ भेज दे।"

"लेकिन ठहर, मालती," रानी ने उसे रोककर कहा —"जा, पहले बहू को यहाँ भेज दे। पीछे उस सँपेरे को यहाँ भेजना।"

कुछ ही देर में मैनासुन्दरी वहाँ आ पहुँची और उसके आने के बाद दो-चार बड़े-बड़े, विचित्र से, बाँस के बने पिटारे लादे हुए एक बूढ़ा सँपेरा वहाँ आया।

धीरे-धीरे, जैसे बड़ी कठिनाई से उन पिटारों का बोझ उससे सम्हल न पा रहा हो, उसने उन्हें कक्ष के मखमली आँगन पर रखा और फिर आधा झुका हुआ-सा वह हाथ जोड़कर खड़ा हो गया। उसके सिर-मूँछ-दाढ़ी के सब बाल श्वेत थे। चेहरे और हाथ पैरों की चमड़ी में झुर्रियाँ पड़ी हुई थीं। वह बोला—

"महाराज। महारानीजी! वरसों की तपस्या करके,

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

जंगल-जंगल की खाक छानकर अपने प्राणों की बाजी लगाकर मैंने इन सर्पों को खोजा है, पाला है और सिद्ध किया है। मेरा विश्वास है कि आपने कभी ऐसे विचित्र सर्प नहीं देखे होंगे। आपके समान उदार महामना के पास बड़ी आशा लेकर आया हूँ। आज्ञा हो तो कुछ खेल दिखाऊँ ?"

"हाँ, हाँ, दिखाओ। तुम्हें इसीलिए तो भीतर बुलाया है। किन्तु भाई ! अपने इन पिटारों को जरा दूर ही रखो। कौन जाने.....।"

श्रीपाल के इस कथन को बीच में ही अपनी एक हलकी-सी मुसकान के साथ सँपेरे ने टोका—

"आप चिन्ता न करें महाराज ! यह बूढ़ा सँपेरा इन भयंकर विषधरों का भी काल है। मैंने इन्हें ऐसा सिद्ध किया है कि अब ये मेरे सामने चूँ भी नहीं कर सकते। आप जरा देखिए तो सही।"

श्रीपाल, मैनासुन्दरी तथा रानी कमलप्रभा अपने-अपने आसनों पर बैठे चुपचाप, उत्सकतापूर्वक सँपेरे का कार्य देखने लगे।

सँपेरे ने एक-एक करके अपने सारे पिटारे उघाड़ दिये और उनमें से जो वस्तुएं दृष्टिगोचर हुईं उन्हें देखकर वे तीनों विस्मय-विमुग्ध रह गये—सुवर्ण और रत्नों से निर्मित अनेक छोटी-बड़ी, रंग-बिरंगी सर्पाकार लड़ियाँ एक के बाद

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

एक वह सँपेरा कक्ष के आँगन पर फैलाता चला जा रहा था.....।

वे सब सर्पाकार लड़ियाँ सुवर्ण, रजत और रत्नों से जड़ी हुई थीं। उनमें हीरे थे, माणिक्य थे, पुखराज थे, नीलम थे—सभी प्रकार के बहुमूल्य रत्नों से ही वे सर्प बने हुए थे।

यह देखकर तीनों को आश्चर्य होना स्वाभाविक ही था। श्रीपाल ने कहा—

"भाई सँपेरे ! यह क्या तमाशा है ? तुम सँपेरे हो या कोई जादूगर, या कोई व्यापारी हो ? यहाँ तो कोई सर्प दिखाई नहीं देता। इन रत्नों के तेज से हमारी आँखें ही चौंधियाने लगीं। तुम्हारे सर्प कहाँ है ?"

"महाराज धैर्य धारण करें। सब कुछ बताता हूँ। ये जितने सर्प आपको दिखाई दे रहे हैं, इन सबके फन मैंने कुचल दिये हैं। ये सभी सर्प अत्यन्त विकट और विषैले थे। एक-एक करके इन्हें अपने वश में करने में मुझे बड़ी चतुराई और साहस से काम लेना पड़ा है। अन्यथा इनमें से कोई एक भी सर्प यदि जीवित बच जाता तो वह महारानीजी तथा आपको डसकर ही छोड़ता।"

सँपेरे की बात सुनकर मैनासुन्दरी तो कुछ भी समझ नहीं सकी, किन्तु रानी कमलप्रभा तथा श्रीपाल को वास्तविकता का कुछ-कुछ आभास होना आरम्भ हुआ। वे बड़े गौर से बूढ़े सँपेरे के चेहरे की ओर देखने लगे।

उन्हें इस प्रकार अपने चेहरे की ओर दृष्टि गड़ाये हुए

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

देखकर अब संपेरा स्वयं को अधिक समय तक वश में न रख सका—वह खिलखिलाकर हँस पड़ा।

और उसी समय श्रीपाल अपने आसन से उठा और जाकर सँपेरे के गले लग गया। बोला—

"अरे बदमाश, शशांक के बच्चे ! तूने हमें ही भ्रम में डाल दिया। हम तो घबराने लगे थे कि यह किस मायावी के जाल में फँसने जा रहे हैं। तूने यह सब क्या तमाशा रचाया है ? जल्दी-जल्दी सारी बात बता। चल, इधर बैठ मेरे पास।"

कहकर श्रीपाल ने शशांक को अपने आसन की तरफ बाँह पकड़कर घसीटा।

किन्तु अपनी बाँह छुड़ाकर शशांक पहले सीधा रानी कमलप्रभा के चरणों में साष्टांग लेट गया। उन्हें नमनकर, आशीर्वाद प्राप्त कर, उसने मैनासुन्दरी को प्रणाम किया और श्रीपाल को प्रणाम करता हुआ अपनी रहस्य कथा कहने लगा—

"संक्षेप में ही कहूँगा, प्रभु ! बहुत थका हुआ हूँ। भूख भी बड़ी कड़ाके की लगी है। बहुत समय से निश्चिन्त होकर भोजन भी नहीं किया। आज तो बस बहूरानी के हाथ का ही भोजन करने का व्रत लेकर आया हूँ.....।"

"अच्छा-अच्छा, शशांक ! आज तुझे बहूरानी के हाथ का बना भोजन ही मिलेगा। अरे बहू, मैना ! तूने इसे

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पहिचाना नहीं होगा। कैसे पहिचानती भला ? तूने कब इसे देखा ? अरे, यह अपना शशांक है, जो चम्पानगरी से ही हमारे पीछे पड़ा है.....।"

कहकर रानी कमलप्रभा खूब हँसी। मैनासुन्दरी भी प्रसन्न होकर बोली—

"भैया शशांक ! तुम्हारे विषय में बीच-बीच में कुछ सुनती तो रहती थी माताजी से, और....इनसे। देखा तुम्हें आज ही है। और आज देखकर विश्वास हो गया कि दोनों की जोड़ी बड़ी अच्छी है। भोले-भाले लोगों को भ्रम में डालने में आप दोनों एक-दूसरे से बढ़कर ही हैं।"—कहकर मैनासुन्दरी ने एक प्रेमपूर्ण कटाक्ष श्रीपाल की ओर फेंका।

श्रीपाल भी मुस्कराया और अब उसने शशांक का हाथ फिर से पकड़कर उसे अपने पास बिठा लिया, मानो वह उनका कोई अनुचर नहीं, आत्मीय ही हो।

क्या कोई आत्मीय शशांक से बढ़कर अपना हो भी सकता है ?

"तो सार-संक्षेप यह है,"—शशांक ने कहा—"कि उस दुष्ट नागराज अजितसेन ने ही एक के बाद एक भयानक विषधरों को महारानीजी और कुमार, आपको डस लेने के लिए भेजना जारी रखा। आप तो उस कोढ़ियों के दल में मिलकर और फिर रोग-ग्रस्त होकर उन दुष्टों के

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

लिए अज्ञात ही हो गये थे, किन्तु महारानीजी का पीछा वे किसी प्रकार नहीं छोड़ रहे थे।

"किन्तु मेरा नाम भी शशांक है—भूख तो बड़ी तेज लग रही है—किन्तु बात पूरी कर ही दूँ। बस, बात इतनी सी है कि वे रानी के पीछे आते रहे और यह सँपेरा उनके फन कुचलता रहा और उनके शीष की मणियाँ उतारता रहा। यह सब रत्न-राशि उन्हीं दुष्टों से मैंने साम-दाम-दण्ड-भेद से प्राप्त की है और बदले में उन्हें सातवें नरक का प्रवेश-पत्र दिया है।

"किन्तु प्रभु! अब इस बूढे का भी कुछ विचार कीजिए। बड़ी आशा लगाकर श्रीचरणों में उपस्थित हुआ हूँ। भूख बड़ी जोर से लग रही है.....।"

एक ठहाके के साथ श्रीपाल उठा और शशांक को हाथ पकड़कर घसीटता हुआ पाकशाला की ओर ले चला।

हृदय में समाए नहीं इतना सुख अनुभव करते हुए रानी कमलप्रभा तथा मैनासुन्दरी उनके पीछे-पीछे चल पड़ीं।

मैनासुन्दरी की चाल में कुछ तेजी थी—उसे अपने स्वामी के प्रिय सखा के समान शशांक को अपने हाथ से गरम-गरम खाना जो खिलाना था।

× × ×

श्रीपाल स्वस्थ होकर किसी देवपुरुष की भाँति प्रतीत

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

होते थे और जन-जन का आदर व सम्मान प्राप्त करते थे। नगरी में जिधर भी वे घूमते-फिरते कभी निकल जाते, लोगों की टकटकी उनकी ओर लग जाती और उनके मुख से सहज ही प्रशंसा के शब्द निकल पड़ते—'कितना सुन्दर, कितना सुशील, कैसा गुणी व्यक्ति है यह श्रीपाल! अवश्य ही यह कोई महापुरुष है। धन्य है राजा प्रजापाल जिन्हें ऐसा दामाद प्राप्त हुआ है और धन्य है राजकुमारी मैनासुन्दरी जिसने ऐसे देवात्मा को पतिरूप में प्राप्त किया है।'

कोई दूसरा व्यक्ति कहता—"कहते तो तुम ठीक हो। किन्तु हमारी राजकुमारी मैनासुन्दरी भी किसी से कम तो नहीं है। न रूप में, न गुण में, न चारित्र्य में। अपने धर्म के प्रति उसकी कैसी अटूट, दृढ़ आस्था है कि उसने एक क्षण के लिए भी अपने पिता की आज्ञा का कोई दुःख न माना और हँसते-हँसते वीतराग भगवन्त की शरण लेकर कोढ़ी पति को स्वीकार कर लिया।"

"वही तो, वही तो, भाई! इसी अखण्ड धर्मश्रद्धा का ही तो यह प्रभाव है कि आज उनकी जुगल जोड़ी कामदेव और रति के समान सुशोभित होती है।"

"किन्तु भाई?" एक व्यक्ति ने कुछ बुजुर्गी प्रकट करते हुए कहा, "एक बात अपनी समझ में नहीं आई।"

"तुम्हारी समझ में बातें आती तो कम ही हैं। फिर भी

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सुनें तो सही कि वह कौनसी बात है तो तुम्हारी समझ के चौखटे में फिट नहीं हो पा रही है ?" दूसरे ने पूछा।

पहले वाले व्यक्ति ने कहा—

"इसमें कोई शक नहीं कि श्रीपाल पुण्यात्मा हैं। मैनासुन्दरी भी परम धार्मिक तथा गुणशीला है। उनकी माताजी भी महामना प्रतीत होती हैं। किन्तु तुक जहाँ नहीं बैठ रही है वह यह कि आखिर ये लोग हैं कौन ? यानी श्रीपाल महाराजा और उनकी माता कौन हैं। बोलो, तुममें से किसी को कुछ है अता-पता ? बोलो ?

यह प्रश्न सुनकर सब चुप हो गए। अब तक किसी ने इस प्रश्न पर कोई विचार किया ही नहीं था।

उसी समय शशांक कहीं से घूमता-फिरता वहाँ आ पहुँचा। उसे लोगों ने अब श्रीपाल के दाहिने हाथ के रूप में जान-समझ लिया था। अवसर देखकर एक व्यक्ति ने साहस करके उससे पूछ ही लिया—

'नायकजी ! आओ आओ, बैठो। हम लोग एक गुत्थी सुलझा रहे हैं और वह सुलझ ही नहीं रही। आप इसमें हमारी कुछ सहायता कीजिए।"

शशांक शान्ति से बैठ गया और उसने कहा—

"कहिए, क्या कष्ट है ?"

"अजी, कष्ट तो कोई नहीं, बस जिज्ञासा भर है। हम लोग यह जानना चाहते हैं कि महाराजा श्रीपाल किस देश

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

के वासी हैं ? वे कहाँ के राजा हैं ? क्योंकि ऐसा देवात्मा पुरुष राजा चक्रवर्ती से कम तो हो नहीं सकता और जब ऐसा है तब इतने दिन हो गए, क्या श्रीपाल महाराज को अपने राज्य की कोई चिन्ता-फिकर नहीं हुई ?"

कहने वाले व्यक्ति के स्वर में सम्मान तथा मीठा व्यंग्य दोनों ही मिश्रित थे। शशांक तुरन्त समझ गया कि इन लोगों को घर-जमाई जैसी बातें ही खटक रही हैं। उसने उत्तर दिया—

"भाइयो ! आप लोगों की जिज्ञासा स्वाभाविक है। मैं इसे इसी क्षण शान्त किये देता हूँ—श्रीपाल महाराज चम्पानगरी के अधिपति हैं और महारानी कमलप्रभा तो उनकी माता हैं ही। कहिए, आप लोगों की जिज्ञासा शान्त हुई या नहीं ?"

सब लोगों ने अपने-अपने सिर मौन रहकर स्वीकार में हिलाये। किन्तु जिन परिस्थितियों में श्रीपाल का आगमन उज्जयिनी में हुआ था और उसके बाद जो जो घटना घटित हुई थीं, उनका विचार अब भी उनके मस्तिष्क में चक्कर काट रहा था—चम्पानगरी का राजा, समृद्ध चम्पा नगरी का अधिपति, और कोढ़ी ? कोढ़ियों का राजा ? यह कैसी उलझन है ?

लोगों की इस समस्या को शशांक ने समझा और कहा—

"देखो भाइयो ! बहुत सी बातें ऐसी होती हैं जो अपने

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

समय पर स्वतः ही समझ में आती हैं। उससे पूर्व कितना भी समझाया जाय किन्तु वे समझ में नहीं आ पातीं।

"इसके अतिरिक्त समय-चक्र भी अपनी गति से आगे बढ़ता ही रहता है—**नीचैर्गच्छति उपरि च दशा चक्रनेमिक्रमेण**—यह जीवन-चक्र ऐसे ही चलता है। कर्मों के प्रताप से राजा को भी रंक की शरण में जाना पड़ जाता है। आशा है अब आप लोग समझ गये होंगे तथा मैं आपको विश्वास दिलाता हूँ कि आप लोग शीघ्र ही चम्पा-नगरी के महाराजाधिराज श्रीपाल की जय का घोष सुनेंगे। वह विजयघोष इतना तीव्र होगा कि आकाश भी उससे गूँज उठेगा और इस उज्जयिनी नगरी की दीवारें भी उस जयघोष को प्रतिध्वनित करेंगी।"

इतना ही कहकर और उन नागरिकों को विस्मय-विमुग्ध छोड़कर शशांक वहाँ से चल पड़ा।

× × ×

यद्यपि शशांक श्रीपाल से आयु में कुछ बड़ा ही था किन्तु वह अब तक श्रीपाल का बहुत मुँहलगा छोटा भाई-सा ही हो गया था। मैनासुन्दरी भी उसे अपने प्यारे देवर की भाँति दुलार करने लगी थी।

उज्जयिनी के बाजार से जब शशांक लौटा तब संध्या काल हो चुका था। भोजन की तैयारी थी। शशांक सीधा पाकशाला में पहुँचा, जहाँ मैनासुन्दरी की देखरेख में

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अनेकों दासियाँ भोजन पका रही थीं। श्रीपाल अभी वहाँ पहुँचा नहीं था। रानी कमलप्रभा अपने कक्ष में विश्राम कर रही थीं।

शशांक ने मैना को देखा, भोजन की तैयारी देखी, और मुँह फुलाकर एक किनारे पर, दूर आसन पर बैठ गया।

उसी समय श्रीपाल और रानी माता ने भी पाकशाला में प्रवेश किया। उन्होंने शशांक को देखा नहीं, और मैना से पूछा—

"बेटी मैना! क्या बात हुई? आज शशांक नहीं दीखता?"

श्रीपाल ने भी कहा—"अरे हाँ, आज शशांक सबेरे से ही गायब है? कहाँ चला गया?"

तब शशांक ने अपने फूले हुए मुख से ही नाराजी के स्वरों में कहा—

"शशांक कहीं नहीं गया, यहीं जमकर बैठा है। जैसे आप जमकर बैठ गए हैं अपनी सुसराल में।"

इस अजीब से उत्तर को सुनकर सब लोग चौंक गए। किन्तु श्रीपाल ने शशांक की बात का कुछ अर्थ मन ही मन समझ लिया और उसके पास जाकर, उसके कंधे पर हाथ रखकर कहा—

"क्या है रे? क्यों रूठा हुआ है? घर की याद आ रही है क्या? भाभी को यहीं बुलवा दूँ?"

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

"और करोगे भी क्या तुम ? खुद जमकर सुसराल में बैठ गए हो, और अब अपने सारे खानदान को भी यहीं बुला लोगे। धन्य है तुम्हारे पुरुषार्थ को !"

यह चुनौती बड़ी जबरदस्त थी। किसी भी कर्मशील पुरुष को उसके पुरुषार्थ को दी जानी वाली चुनौती बड़े गहरे मर्म तक छू जाती है। श्रीपाल भी समझ गया कि शशांक को उसका अब इस प्रकार सुसराल में पड़े रहना प्रिय नहीं लग रहा है। किन्तु अचानक ही वह इतना गम्भीर कैसे हो गया, यह जानने के लिए उसने पूछा—

"क्यों रे शशांक ! तेरी बात को मैं समझ गया हूँ। और अब एक दिन भी यहाँ नहीं रहूँगा। किन्तु तू यह तो बता कि तुझे किसी ने छेड़ा है क्या ?"

"मुझे छेड़ने का साहस किस गधे में है ? किसकी मौत आई है जो मुझे छेड़े ? मुझे छेड़ा-बेड़ा किसी ने नहीं है।"

"तब तू एकदम इस प्रकार उखड़ कैसे गया है ?"

"नगर में लोगों की चर्चा सुनता हुआ आ रहा हूँ। लोग तुम्हें देवतास्वरूप तो मानते हैं, किन्तु फिर भी घर-जमाई तो घरजमाई ही रहेगा न ? उसकी इज्जत लोग कब तक करेंगे ?"

"ठीक है, ठीक है। मैं कल प्रातःकाल ही यहाँ से चल पड़ूँगा। पहले कुछ देश-विदेश में भ्रमण करूँगा, संसार का कुछ अनुभव लूँगा। धन और सैनिक इकट्ठे करूँगा और फिर अपनी चम्पानगरी को हस्तगत करूँगा।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

बस, तू यही चाहता है न ? अब तो अपना यह मुँह धो ले और भोजन करने बैठ।"

श्रीपाल ने प्रेम से शशांक को उठाया। उसने हाथ-मुँह धोए और फिर सब लोग प्रेमपूर्वक भोजन करने बैठ गये।

मैनासुन्दरी स्वयं अपने हाथों से सबको भोजन परोस रही थी। किन्तु मन उसका कहीं उलझ गया था। उसे अपने पतिदेव से होने वाले आसन्न वियोग की आशंका कष्ट देने लगी थी।

जब भोजन हो चुका तब शान्तिपूर्वक मैनासुन्दरी ने श्रीपाल से कहा—

"पतिदेव ! क्या आप कल ही विदेश जाने का निश्चय कर चुके हैं ?"

"हाँ, मैना ! यह तो निश्चित ही है।"

"तब मेरी एक प्रार्थना स्वीकार कीजिए। मुझे भी अपने साथ ही ले चलिए।"

सुनकर श्रीपाल हँस पड़ा—"अरे मैना ! तू मेरे साथ-साथ कहाँ-कहाँ भटकेगी ? न जाने कितने जंगल, पहाड़, नदी-नाले और समुद्र भी मैं पार करूँगा—नहीं, नहीं; यह तेरे बस की बात नहीं है। तू तो थोड़े दिन माताजी और शशांक के साथ यहीं रहना। मैं बहुत जल्दी लौट आऊँगा और फिर हम लोग सब विजयघोष करते हुए चम्पा चलेंगे।"

मैनासुन्दरी का मुँह उतर गया। किन्तु पति की आज्ञा के विरुद्ध वह कुछ बोल नहीं सकी।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

किन्तु शशांक कहाँ मानने वाला था ? वह बोला—

"और कोई साथ जाय या न जाय, यह शशांक सोलंकी श्रीपाल महाराज की शरण छोड़कर, कहीं नहीं जायगा, कहीं नहीं रहेगा। महाराज भली भाँति सुन लें.....।"

"सुन लिया, सुन लिया, भाई ! भली-भाँति सुन लिया। किन्तु तू भी अपनी जिद को छोड़कर मेरी बात को भी ठीक से समझ ले। देख, यदि हम दोनों चल देंगे तो फिर माताजी और मैना की देख-रेख कौन करेगा ? कभी कोई विपत्ति आ ही पड़ी तो इनकी रक्षा कौन करेगा ?"

यह सुनकर मैनासुन्दरी ने कहा—

"नाथ ! आपकी आज्ञा तो शिरोधार्य होगी ही। किन्तु हमें यहाँ किसी प्रकार का भय नहीं है। इसके विपरीत विदेश में यदि आप लोग एक की बजाय दो रहेंगे तो अधिक ठीक रहेगा.....।"

"नहीं मैना ! मैंने सब कुछ सोच लिया है। मुझे अकेले ही जाना होगा। तुम मेरे काका अजितसेन को नहीं जानतीं। वे कुटिल और स्वार्थी हैं। वे अवश्य ही अवसर की ताक में रहेंगे। अतः शशांक का तुम लोगों की रक्षा के लिए यहीं रहना नितान्त आवश्यक है।"

"लेकिन.....।"

"लेकिन—वेकिन कुछ नहीं शशांक ! यह मेरा निर्णय है और मेरी आज्ञा है।"

आज्ञा तो आज्ञा ही है। इसके बाद कोई कुछ नहीं बोल सका। □

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

ग्राम, नगर, वन और पर्वतों को लाँघता हुआ श्रीपाल जब जिधर मन किया उधर ही आगे बढ़ता रहा। वह एकाकी था। सुन्दर और बलिष्ठ देह थी। ढाल कंधे पर और तलवार कमर से लटक रही थी। उस सशक्त, स्वरूपवान एकाकी पुरुष को यदि कोई जंगल में इस प्रकार भटकता हुआ देखता तो वह यही सोच सकता था कि साक्षात वनदेवता ही अपने विस्तृत साम्राज्य का निरीक्षण करने निकल पड़े हैं।

और यदि कोई गांधर्वी अथवा किन्नरी उसे देख पाती तो वह उस पर मोहित हुए बिना न रहती।

ग्राम-नगरों में श्रीपाल ने अनेकों लोगों का परिचय प्राप्त किया। उनके सुख-दुःख को समझा। उनकी दिनचर्या और जीवन के तौर-तरीकों को जाना। इसी प्रकार वन-पर्वतों में भी उसने सृष्टि के अनेक सुन्दर रहस्यों को देखा और समझा। इस प्रकार वह धीरे-धीरे एक परिपक्व बुद्धि वाला, अनुभवी वीरपुरुष हो गया। अपनी चम्पा नगरी को पुनः विजित कर लेने पर वह अपनी प्यारी

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

प्रजा का पोषण किस न्यायपूर्ण और प्रेमभरी रीति से करेगा, यह उसने मन ही मन निश्चित कर लिया।

इसी प्रकार भटकते-भटकते वह एक दिन एक सघन वन में जा पहुँचा। उस वन में एक उत्तुंग पर्वत था। कौतूहलवश श्रीपाल उस पर्वत की चोटी पर जा चढ़ा। वहाँ उसने एक बड़ी-सी शिला पर एक योगी को अपनी दोनों बाहें आकाश में उठाये हुए तपस्या करते हुए पाया। योगी की दृष्टि भी श्रीपाल पर पड़ी। उसने अपने दोनों हाथ नीचे कर लिए, क्षण-दो क्षण श्रीपाल को अपनी तप-बल से चमकती आँखों से देखा और फिर कहा—

"हे महापुरुष ! आप कौन हैं ? और इस बीहड़ वन में इस प्रकार अकेले क्यों भटक रहे हैं ?"

श्रीपाल ने योगी का अभिवादन करते हुए उत्तर दिया—

"महामना ! मेरा परिचय जानकर आप क्या करेंगे ? आप तो संसार-त्यागी योगी हैं। हाँ, यदि मेरे योग्य कोई सेवा हो तो अवश्य आज्ञा कीजिए।"

योगी पुनः क्षण भर मौन रहा। फिर कुछ सोचकर बोला—

"आप ठीक कहते हैं। मैंने संसार त्याग दिया है। किन्तु मैं जो सिद्धि प्राप्त करना चाहता हूँ उसके लिए मुझे कुछ समय के लिए एक सहायक की आवश्यकता है। उसके बिना सिद्धि प्राप्त नहीं हो सकती। क्या आपके

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पास कुछ समय है ? क्या आप मुझे सहयोग प्रदान कर सकते हैं ?"

"अवश्य । योगीप्रवर ! यह मेरा सौभाग्य होगा । मैं प्रस्तुत हूँ।"

इस प्रकार कुछ समय बीत गया। योगी अपनी साधना में रत हुआ और श्रीपाल ने उसे सहयोग दिया।

योगी को उसकी इच्छित सिद्धि प्राप्त हो गई।

अब श्रीपाल को अपनी यात्रा पर आगे बढ़ना था। उसने एक दिन योगी से कहा—

"योगीवर ! आपका कार्य सिद्ध हो चुका। अब मुझे आज्ञा दें।"

"आज्ञा देने वाला तो केवल प्रभु है भाई ! हाँ, मेरा काम पूर्ण हुआ, तुमने मुझे निस्वार्थ सहयोग दिया है, और उसके लिए मैं तुम्हारा कृतज्ञ भी हूँ। अब जब तुम जाना चाहते हो तो मेरी ओर से दो विद्याएँ तुम ग्रहण करते जाओ। भविष्य में ये तुम्हारे काम आ सकती हैं।"

"उपकृत हूँ, योगीवर ! वे कौनसी विद्याएँ हैं ?"

"एक विद्या है 'जल-तरणी' तथा दूसरी है 'शस्त्र-घात निवारिणी'। जल तुम्हें डुबा नहीं सकेगा, शस्त्र का कोई भी आघात तुम्हें स्पर्श नहीं करेगा।"

यह कहकर योगी ने वे दोनों विद्याएँ श्रीपाल को दे दीं। विधिपूर्वक उन्हें ग्रहण कर, और योगी को अभिवादन कर वह आगे चल पड़ा।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

चलते-चलते वह एक दिन भरुच नामक नगर में जा पहुँचा। यह नगर समुद्र के किनारे पर था और उस काल का बहुत बड़ा बन्दरगाह था। अनेकों देशों के व्यापारी अपने-अपने जलयानों में अनेक प्रकार की विक्रय सामग्री भरकर वहाँ आते थे, उनका विक्रय लाभ उठाते थे और वहाँ से नई सामग्री अपने-अपने यानों में लादकर अपने-अपने देश को लौट जाते थे। इस प्रकार उस नगर में बड़ी चहल-पहल रहा करती थी। दिन-रात व्यापार होता रहता था।

श्रीपाल उस भीड़ भरे नगर में किसी शान्त विश्राम-स्थल की खोज में इधर-उधर घूम रहा था। वैसे तो उस भीड़ भरे नगर में प्रतिदिन ही अनेकों विदेशी आते-जाते रहते थे और कोई किसी की ओर विशेष ध्यान नहीं देता था किन्तु श्रीपाल की मुखछवि तथा उसकी देवोपम देह ही कुछ ऐसी थी कि जिस व्यक्ति की भी दृष्टि एक बार उस पर पड़ जाती वह क्षण भर ठिठक जाता और उसे एकटक देखता ही रह जाता।

किन्तु श्रीपाल को किसी की चिन्ता नहीं थी। वह अपने में ही मगन था।

समृद्ध नगर की भव्य, उत्तुंग अट्टालिकाओं और राज-पथ पर आते-जाते अनेकों रथों, अश्वारोहियों तथा पैदल नागरिकों को देखते हुए श्रीपाल चला जा रहा था कि अचानक उसे कुछ सैनिकों ने आ घेरा।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

श्रीपाल चकित। यह क्या माजरा है? कौन हैं ये सैनिक? क्यों उसे घेरकर खड़े हो गए हैं? क्या अपराध हो गया है उससे? कुछ समझ नहीं सका वह। शान्त और निश्चिन्त वह खड़ा रह गया और प्रतीक्षा करने लगा कि कोई उससे कुछ कहे। तभी उन सशस्त्र सैनिकों के नायक ने कुछ आगे बढ़कर श्रीपाल से कहा—

"महाशय! आप जो कोई भी हों, कृपया हमारे साथ चलिए। हमारे स्वामी ने आपको पकड़ लाने की आज्ञा हमें दी है।"

श्रीपाल को और भी अधिक विस्मय हुआ कि आखिर यह तमाशा क्या है? धीर किन्तु गम्भीर स्वर में उसने पूछा—

"नायक! कौन हैं तुम्हारे स्वामी? और क्यों मुझे इस प्रकार बुलवाया गया है? स्वामी होंगे तो तुम्हारे। किन्तु मैं तो किसी का दास नहीं हूँ। यदि मैं तुम्हारे साथ एक बन्दी के समान चलने से इन्कार करूँ तो?"

"महाशय! हमारे स्वामी हैं नगरसेठ श्रीमन्त धवल। आर्यावर्त्त से बाहर जावा, सुमात्रा और स्यामदेश से लेकर से लेकर अरब, ईरान और यूनान तक उनकी हुंडियाँ स्वीकारी जाती हैं। वे बड़े शक्तिशाली हैं। उन्होंने आपको बुलवाया है तो आपको चलना तो पड़ेगा ही, चाहे स्वेच्छा से चलें अथवा फिर.....।"

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

"अथवा फिर तुम मुझे बन्दी बनाकर ले चलोगे। यही न ?"

"आप ठीक कह रहे हैं।"

"तो तुम्हें स्वयं पर और अपने इन सैनिकों पर बड़ा भरोसा है। किन्तु प्रतीत होता है कि अब तक तुम लोगों ने केवल बेचारे, निरपराध, अशक्त लोगों को ही कष्ट दिया है। तुम्हारा पाला कभी किसी वीर और स्वाभिमानी पुरुष से नहीं पड़ा।"

"हमें इन सब बातों से कोई मतलब नहीं महाशय ! आप सीधी तरह चलेंगे या फिर..... ।"

इतना कहते-कहते नायक ने अपनी तलवार म्यान से बाहर निकाल ली।

उसी क्षण सारे सैनिक भी अपनी-अपनी तलवारें निकालकर आगे बढ़ने लगे।

विवश होकर श्रीपाल को भी अपनी तलवार उठानी पड़ी।

तलवारों से तलवारें टकराने लगीं, मानों बिजलियाँ एक-दूसरे पर टूट पड़ी हों। श्रीपाल अत्यन्त वीर और धीर पुरुष था। उसने देखते-देखते ही अनेकों सैनिकों को घायल कर दिया। शेष सैनिक इस अकेले वीरपुरुष के पराक्रम को देखकर अपनी-अपनी जान बचाकर भाग खड़े हुए। श्रीपाल ने अपने माथे का पसीना पोंछा, तलवार म्यान में की और निश्चिन्ततापूर्वक आगे बढ़ गया।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

श्रीपाल के हाथों बुरी तरह पिटे-पिटाये सैनिक और उनका नायक अपने स्वामी धवल सेठ के पास पहुँचे और उसको सारी घटना सुनाई। सुनकर धवल सेठ चिन्ता में पड़ गया। उसे श्रीपाल की आवश्यकता थी, और वह वश में आ नहीं रहा था। सोचते-सोचते उसने स्वयं ही श्रीपाल के पास जाने का निर्णय किया और तुरन्त चल पड़ा।

एक स्थान पर उसे श्रीपाल विश्राम करता हुआ दिखाई पड़ गया। धीरे-धीरे, कुछ डरता-डरता वह उसके पास पहुँचा और विनयपूर्वक अपना परिचय देते हुए बोला—

"श्रीमान्! मैं इस नगर का नगरसेठ धवल हूँ। दूर-दूर के देशों से मेरा व्यापार चलता है। इस समय भी मेरे पाँच सौ जलयान यात्रा पर जाने के लिए खड़े हैं। किन्तु ऐसा प्रतीत होता है कि किसी जलदेवी ने उन सभी यानों को जकड़ रखा है। वे टस से मस नहीं हो रहे हैं।"

इतना कहकर धवल सेठ मौन हो गया। तब श्रीपाल ने पूछा—

"नगरसेठ! आपके जलयान यदि नहीं चल रहे तो उससे मुझे क्या? आपने मुझे पकड़ने के लिए अपने सैनिक क्यों भेजे? इतनी खून-खराबी क्यों करवाई? यदि आप सत्य कहें, तथा मुझसे कुछ सहायता चाहते हों तो स्पष्ट कहिए।"

अब धवल सेठ चकराया। जो बात उसके मन में थी,

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

यदि वह सत्य बता दे तो भला फिर श्रीपाल उसके वश में क्यों आने लगा ? वह बात ही ऐसी थी।

सेठ चक्कर में पड़ गया। सोचता रहा। अन्त में झिझकता-झिझकता वह बोला—

"महाशय ! आप महापुरुष हैं। आपके समक्ष अब मुझसे असत्य-कथन नहीं हो सकेगा। सच-सच ही कहूँगा। बात यह है कि, जैसा कि मैंने अभी कहा, किसी जलदेवी ने मेरे सभी यानों को जकड़ लिया है और वह उन्हें तभी मुक्त करेगी जब उसे किसी बत्तीस लक्षणयुक्त सर्वांग सुन्दर पुरुष की बलि चढ़ाई जायगी। इस सारे नगर में मुझे आपके अतिरिक्त अन्य कोई ऐसा उपयुक्त पात्र दिखाई नहीं दिया। इसलिए.....।"

श्रीपाल के अट्टहास से धवल सेठ धूजने लगा। उसने हाथ जोड़ लिए।

"इसीलिए आप मेरी बलि अपनी उस देवी को चढ़ाना चाहते थे ?" श्रीपाल ने हँसते-हँसते कहा—"अरे धवल सेठ ! तुम केवल भोले ही नहीं स्वार्थी भी हो और सबसे बढ़कर तो यह कि तुम मिथ्यात्वी हो। इस प्रकार निरपराध जीव-जन्तुओं अथवा मनुष्यों की बलि चढ़ाना घोर पापकर्म है। ऐसा करने से कभी कोई देवता प्रसन्न नहीं हो सकता, उल्टे अनन्त काल तक नरक की यातना सहनी पड़ती है। अतः यदि अब भी तुम में कुछ बुद्धि शेष हो तो बलि चढ़ाने की अपनी धारणा को जीवन भर के लिए त्याग दो।"

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

"त्याग दूँगा, श्रीमान् ! समझिए कि त्याग ही दिया। किन्तु.....किन्तु मेरे जलयान.....?"

"उनकी चिन्ता न करो। तुम्हारी देवी को मैं प्रसन्न कर लूँगा। चलो।"

धवल सेठ के मन में आशा जागी। वह श्रीपाल को मार्ग दिखाता हुआ समुद्र की ओर चल पड़ा।

अनन्त की सीमा तक फैले नीले समुद्र में तरंगें उठ रही थीं, गिर रही थीं। उनकी गति के साथ धवल सेठ के पाँच सौ जलयान भी ऊपर-नीचे हो रहे थे, किन्तु लाख प्रयत्न करने पर भी वे एक इंच भी आगे नहीं बढ़ पा रहे थे। धवल सेठ श्रीपाल को अपने सबसे बड़े जलयान पर ले गया। श्रीपाल ने परिस्थिति का निरीक्षण किया। कुछ विचार किया, और फिर उस जलयान के सबसे ऊपरी भाग पर, एकान्त में जाकर एकाग्रतापूर्वक पवित्र नवकार मंत्र का जाप किया।

कुछ समय तक श्रीपाल का यह जप-ध्यान चलता रहा। उसके बाद उसने अपने नेत्र खोले और विकट सिंह-नाद किया। आकाश को गुँजा देने वाले उस सिंहनाद को सुनकर वह जलदेवी जिसने उन यानों को स्तम्भित कर रखा था, उन्हें छोड़कर भाग गई।

धवल सेठ के जलयान चल पड़े। स्वयं सेठ और उसके हजारों सैनिक तथा कर्मचारी इस चमत्कार को देखकर

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

आश्चर्य में पड़ गये और श्रीपाल की जय-जयकार करने लगे।

जब यान चलने लगे तब धवल सेठ ने अपने मन में विचार किया कि यदि श्रीपाल जैसा महापुरुष यात्रा में उसके साथ रहे तो उसे किसी प्रकार का संकट उपस्थित न होगा। यह सोचकर उसने श्रीपाल के चरणों में एक लक्ष स्वर्णमुद्राएँ भेंट में रखकर कहा—

"महोदय! कृपया मेरी ओर से आप ये एक लाख स्वर्ण-मुद्राएँ स्वीकार कीजिए तथा मेरी एक अन्य प्रार्थना भी स्वीकार कीजिए।"

"वह क्या?"—श्रीपाल ने पूछा।

"आपके पास यदि समय हो तो आप भी मेरे साथ समुद्र-यात्रा पर चलिए। इसके बदले में मैं आपको जितना कहेंगे उतना धन दूँगा।"

"धवल सेठ! धन का मुझे कोई लोभ नहीं है। हाँ, इस समय धन मेरे लिए कुछ विशेष कारणों से आवश्यक अवश्य है। इसके अतिरिक्त मैं दूर-दूर देशों की यात्रा करके पर्याप्त अनुभव भी प्राप्त करना चाहता हूँ। अतः मुझे आपकी प्रार्थना स्वीकार करने में कोई आपत्ति नहीं है।"

धवल सेठ प्रसन्न हो गया। एक सुन्दर, सुसज्जित, मजबूत नौका पर श्रीपाल ने अपना डेरा जमा लिया। नौकादल द्रुत गति से समुद्र की छाती को चीरता हुआ आगे बढ़ चला।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

× × ×

अनेक दिन और रात तक लगातार चलता-चलता वह कारवाँ एक दिन बब्बरकुल नामक बन्दरगाह पर जा ठहरा। प्रधान नाविक ने धवल सेठ से कहा—

"स्वामी ! हमें यात्रा करते हुए काफी समय व्यतीत हो चुका है। आज्ञा हो तो इस बन्दरगाह पर ठहरकर लकड़ी, तेल इत्यादि अन्य आवश्यक सामग्री यहाँ से ले ली जाय।"

"ठीक है। नौकाएँ किनारे से लगा दी जायँ।"—सेठ ने आज्ञा प्रदान की। नौकाएँ किनारे पर स्थिर हो गईं। सेठ के कर्मचारी आवश्यक सामग्री एकत्र करने के लिए नगर में चले गये और उसके हजारों सैनिक समुद्र-तट पर इधर-उधर घूमकर प्रकृति का आनन्द लेने लगे।

स्वयं धवल सेठ भी किनारे पर उतर गया और एक छायादार, शीतल स्थान पर गद्दी तकिए लगाकर सुख से बैठ गया।

बब्बरकुल के राज-कर्मचारियों को जब यह सूचना मिली कि कोई बड़ा व्यापारी उनके बन्दरगाह में ठहरा है तो वे उस व्यापारी से राज्य-कर वसूल करने के लिए आये। धवल सेठ से उन्होंने कर देने के लिए कहा।

किन्तु धवल सेठ बड़ा लालची था। वह कर चुकाना नहीं चाहता था। उसने सोचा मेरे पास तो दस सहस्र सैनिक हैं और यह छोटा सा नगर है। इसका राजा मेरा बिगाड़ ही क्या सकता है ? अतः उसने कर चुकाने से इन्कार कर दिया।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

बात बढ़ गई। राजा तक सूचना गई। राजा ने आज्ञा दी—

"उस व्यापारी का सारा माल जब्त कर लिया जाय। नौकाएँ छीन ली जायँ और उस ढीठ व्यापारी को बाँधकर किसी पेड़ पर उल्टा लटका दिया जाय।

राजा की आज्ञा मिलते ही उसके सैनिक शस्त्रास्त्रों से सुसज्जित होकर धवल सेठ के बिखरे हुए सैनिकों पर टूट पड़े। उन्हें तितर-बितर करके उन्होंने धवल सेठ को बाँध लिया और उसी वृक्ष पर उल्टा लटका दिया जिसके नीचे वह विश्राम कर रहा था। सेठ का सारा माल भी सैनिकों ने अपने कब्जे में कर लिया।

धवल सेठ की सिट्टी-पिट्टी गुम हो गई। लेने के देने पड़ गये। पेड़ की शाखा से उल्टा लटका हुआ वह अपने भगवान को याद करने लगा।

यह सारा तमाशा अपनी नौका में बैठा हुआ श्रीपाल मजे से देख रहा था। किन्तु धवल सेठ की यह दुर्दशा देखकर उससे रहा नहीं गया। उसने अपनी तलवार सम्हाली और किनारे पर उतर आया। सेठ के पास जब वह पहुँचा तब सेठ ने गिड़गिड़ाकर उससे कहा—

"हे वीरपुरुष ! अब तुम मेरे साथी बन गये हो। कृपा करके मुझे इस विपत्ति से छुटकारा दिलाओ।"

श्रीपाल ने मन्द-मन्द मुस्कुराते हुए पूछा—

"तुम्हें इस विपत्ति से मैं छुड़ा तो सकता हूँ, किन्तु इसके बदले में तुम मुझे क्या दोगे ? जरा जानूँ तो सही।"

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

"अरे बाबा ! तुम मुझे छुड़ाओ तो सही। तुम जो कहोगे वही दूँगा। मेरे पास अटूट सम्पत्ति है। जितनी चाहो उतनी दूँगा। कोई कमी नहीं है।"

"बस, कमी है केवल सन्तोष की, है न ? आपके पास अटूट सम्पत्ति है, फिर भी आपको सन्तोष नहीं है, शान्ति नहीं है। हजारों व्यक्ति भूखे रहते हैं, उनके पास सिर छिपाने के लिए टूटा-फूटा घर तक नहीं है, तन ढकने के लिए पर्याप्त वस्त्र तक नहीं हैं, किन्तु आप कभी उन लोगों के विषय में नहीं सोचते। आपको केवल अपनी सम्पत्ति को ही बढ़ाते चले जाने की धुन समाई रहती है। क्यों धवल सेठ, मैं ठीक कह रहा हूँ न ?"

"अरे भाई, तुम ठीक ही कह रहे हो। किन्तु अब इस समय इस उपदेश को बन्द करके अपनी तलवार निकालो और मुझे मुक्त करो। देखो मैं उल्टा लटका हुआ हूँ....।"

"उल्टे काम करने वालों को उसका फल भी उल्टा मिला करता है श्रीमन्त धवल सेठ !"—कहते हुए श्रीपाल ने अपनी तलवार से सेठ के बन्धन काट दिए। बन्धन कटते ही वह कटे वृक्ष की सरह धम्म से नीचे आ गिरा। रेत होने के कारण उसे कोई चोट नहीं लगी और वह अपने कपड़े झाड़ता हुआ खड़ा हो गया।

हाँ, थोड़ी रेत अवश्य धवल सेठ के मुँह में घुस गई, जिसे वह थू-थू करता हुआ निकालता रहा।

ज्ञानवान व्यक्ति के लिए यह छोटी-सी घटना, यह

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

छोटा-सा प्रतीक बड़े गहरे विचार उत्पन्न करने वाला हो सकता है—कि मनुष्य चाहे जितने हाथ-पैर मारे, चाहे जितना सम्पत्तिवान, सामर्थ्यवान बन जाय किन्तु उसे अन्त में तो खाली हाथ ही जाना है और इसी माटी में मिल जाना है, जिसे इस समय धवल सेठ थू-थू करता हुआ थूक रहा था।

जब श्रीपाल ने इस प्रकार धवल सेठ को मुक्त कर दिया तब बब्बरकुल के अनेक सैनिक श्रीपाल को ही पकड़ने या समाप्त कर देने के लिए अपने-अपने शस्त्र लेकर चारों ओर से दौड़ पड़े। श्रीपाल भी युद्ध के लिए प्रस्तुत था। वह अद्भुत खड्गधारी था। उसका युद्ध-कौशल अद्वितीय था। इसके अतिरिक्त उसके पास शस्त्र-घात-निवारिणी विद्या भी थी। अतः शत्रुपक्ष के सैकड़ों सैनिक भी उसका कुछ न बिगाड़ सके और थोड़ी ही देर में श्रीपाल के हाथों गंभीर आघात खाकर इधर-उधर भाग खड़े हुए।

बब्बरकुल के राजा को जब यह सूचना मिली तो वह ऐसे अद्भुत पराक्रमी व्यक्ति को देखने के लिए आतुर हो उठा, जो कि अकेले हाथों सैकड़ों और हजारों सैनिकों को परास्त कर सकता था। अपने कुछ सैनिकों के साथ वह शीघ्र ही समुद्र के किनारे पर जा पहुँचा।

राजा ने दूर से ही श्रीपाल को देखा—मानों साक्षात कामदेव ही आज अपना पुष्प-धनु त्यागकर खड्गहस्त होकर युद्ध के लिए सन्नद्ध हो। श्रीपाल की मुख-छवि से पराक्रम की पराकाष्ठा प्रकट हो रही थी।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

राजा श्रीपाल पर मोहित हो गया—अहा ! यह कैसा अनुपम, कितना वीर, कैसा साहसी और कितना सुन्दर महापुरुष है !.....काश, मेरी पुत्री को यह अपनी पत्नी के रूप में स्वीकार कर ले। यदि ऐसा हो सके तो बेटी के भाग्य ही खुल जायँ।

यह विचार करता हुआ राजा आगे बढ़ा। श्रीपाल के समीप पहुँचकर उसने बड़े प्रेमपूर्वक कहा—

"श्रीमान् ! आपका अद्भुत पराक्रम और धैर्य मैंने देख लिया है। हमारे इस छोटे-से नगर में आपका पदार्पण हमारे सौभाग्य का ही सूचक है। मैं अपनी समस्त प्रजा की ओर से आपका अभिनन्दन करता हूँ।"

"धन्यवाद, राजन् ! आपकी यह विनम्रता प्रशंसनीय है। हम लोग तो यात्री हैं, अभी थोड़े समय में ही आगे बढ़ जायेंगे। मेरे साथी, इन धवल सेठ की थोड़ी असावधानी के कारण आपको तथा आपके सैनिकों को जो कष्ट हुआ उसके लिए हम खेद प्रकट करते हैं।"

श्रीपाल का यह उत्तर सुनकर राजा और भी अधिक प्रभावित हुआ। उसने कहा—

"श्रीमान् ! आपको यहाँ से आगे तो जाना ही है। किन्तु इससे पूर्व मेरी आपसे एक विनम्र प्रार्थना यह है कि आप कृपा करके मेरी पुत्री का पाणिग्रहण करने का कष्ट करें। यह हमारा तथा राजकुमारी मदनसेना दोनों का

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सौभाग्य होगा। इसके पश्चात् ही आप कृपा करके आगे बढ़ें।"

"किन्तु राजन्! आप यह क्या कह रहे हैं? मेरे विषय में आपको कुछ ज्ञात नहीं। आपके लिए मैं अज्ञात कुल-शील व्यक्ति हूँ।"

"रहने दीजिए इस बात को, श्रीमान्! सूर्य को दीपक दिखाने की कोई आवश्यकता नहीं होती। आपका स्वरूप, आपका पराक्रम, आपका चरित्र ही आपके उच्च कुलीन होने की साक्षी दे रहा है। कृपा करके हमारी प्रार्थना स्वीकार कीजिए।"

राजा के इस अत्यन्त स्नेहपूर्ण आग्रह को श्रीपाल टाल नहीं सका। यथासमय शुभ मुहूर्त में उसका विवाह राज-कुमारी मदनसेना से हो गया और कुछ समय उसने शान्ति-पूर्वक मदनसेना की स्नेहछाया में व्यतीत किया। □

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

कुछ दिन व्यतीत हो जाने के बाद एक दिन धवल सेठ ने श्रीपाल से कहा—

"महोदय ! आपके जैसा पुण्यवान और भाग्यवान पुरुष संसार में बिरला ही होता है। आप जहाँ भी जाते हैं वहीं ऋद्धि-सिद्धि आपके पीछे चलती हैं। इस द्वीप में आकर आपको मदनसेना जैसी सुन्दरी राजकुमारी तथा बहुत धनराशि प्राप्त हुई है। मेरी पंचशत नौकाओं में से आधी नौकाएँ तथा उनमें भरी हुई व्यापार-सामग्री भी आपकी ही है। मैंने जिन सैनिकों को निकम्मा समझकर अपनी सेना से हटा दिया था, उन दस सहस्र सैनिकों को भी अच्छे वेतन पर आपने अपनी सेवा में रख लिया है। यह सब तो हुआ, किन्तु, महोदय ! अब हमें अपनी यात्रा पर आगे बढ़ना चाहिए।"

श्रीपाल ने धवल सेठ की इस बात को उचित समझा और बब्बरकुलनरेश राजा महाकाल से मिलकर कहा—

"राजन् ! अब हमें काफी समय यहाँ रहते हुए हो गया

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

है। कृपया अब हमारी आगे की यात्रा की तैयारी कर दीजिए।"

राजा महाकाल और उनकी रानी को अपनी प्रिय पुत्री से विलग होने में बहुत दुःख का अनुभव हो रहा था। किन्तु वे कर ही क्या सकते थे? बेटी तो पराया धन ही हुआ करती है। वह जहाँ भी रहे, सुख से रहे, इस भावना के साथ राजा ने श्रीपाल की यात्रा की तैयारी शीघ्र करवा दी। उसने अपने दामाद के लिए एक बहुत बड़ी, अत्यन्त भव्य नौका का निर्माण कराया और उसे रत्नादिक से भर दिया। उसने श्रीपाल को कुछ अतिसुन्दर नाटक भी भेंट में दिए।

इस प्रकार शुभ मुहूर्त में यात्रा पुनः प्रारम्भ हो गई।

समुद्री मार्ग पर नौकाओं का वह काफिला धीरे-धीरे सन्तरण करता हुआ अब रत्नद्वीप की ओर बढ़ रहा था। अपनी विशाल नौका में मदनसेना के साथ अनेक नाटक देखते हुए श्रीपाल का समय और मार्ग आनन्द से कट रहा था।

और एक दिन रत्नद्वीप की हरी-भरी भूमि दिखाई देने लगी। नौकाएँ उसी दिशा में आगे बढ़ रही थीं। शीघ्र ही वे किनारे से जा लगीं। यह द्वीप आकार-प्रकार में कुछ विशाल और अधिक हरा-भरा था। इससे इस द्वीप के निवासियों की समृद्धि का अनुमान लगाया जा सकता था।

किनारे पर उतरकर सबसे पहले आवास की व्यवस्था

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

कर ली गई। अनेक छोटी-बड़ी वस्त्र-कुटियों (तम्बू) से समुद्र का वह तल छा गया।

अब धवल सेठ को उस द्वीप में अपना माल बेचने और लाभ कमाकर नया माल भरने की सूझी। श्रीपाल स्वयं इस झंझट में नहीं पड़ना चाहता था। उसने धवल सेठ से कहा—

"श्रेष्ठिवर! आप व्यापार कार्य में निष्णात हैं। वस्तुओं के भाव-ताव का भी आप को ज्ञान है। अतः मेरे माल को भी आप ही बेच-बाच दीजिएगा। तब तक मैं जरा इस द्वीप की शोभा को घूम-फिरकर देख आता हूँ।"

लालची सेठ ने यह प्रस्ताव तुरन्त स्वीकार कर लिया। अपने मन में उसने सोचा कि यह लड़का भाव-ताव को क्या जाने? मैं जो कुछ भी इसे दे दूंगा वही सही होगा। प्रकट में उसने कहा—

"आप निश्चिन्त होकर भ्रमण कीजिए, आनन्द लीजिए, मगन रहिए। मैं सब कुछ सम्हाल लूंगा।"

यह व्यवस्था हो जाने के बाद मदनसेना को अपनी सहेलियों के साथ आनन्दपूर्वक समय व्यतीत करने के लिए कहकर श्रीपाल एक सुन्दर द्रुतगामी अश्व पर सवार होकर द्वीप-दर्शन हेतु चल पड़ा।

रत्नद्वीप वास्तव में यथानाम यथागुण ही था। सघन वृक्षावलियों के नीचे बिछी हुई मुलायम रेत सूर्य की किरणों में असंख्य रत्नों की भाँति ही जगमगा रही थी।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पक्षी मधुर कलरव कर रहे थे। शान्त, शीतल पवन विभिन्न प्रकार की वनस्पतियों से छेड़-छाड़ कर रहा था। कुल मिलाकर दृश्य और काल बड़े मनोरम थे।

ऐसे मनोरम स्थान पर श्रीपाल भी घड़ी भर के लिए अपनी सारी चिन्ताओं को भूल गया। उसने अपने अश्व को उसकी अपनी ही इच्छा पर छोड़ दिया कि जिधर भी इसका जी चाहे वह चलता चले। चारों ओर प्रकृति का अद्भुत सौन्दर्य बिखरा हुआ था। उस सौन्दर्य में नैसर्गिक संगीत था—ऐसा मादक, मधुर संगीत कि जो किसी भी भावुक व्यक्ति को अपने सम्मोहन से बेभान कर दे।

इस नैसर्गिक सौन्दर्य का अपने नेत्रों से पान करता हुआ और इस स्वर्गीय संगीत की लहरों में डूबता-उतराता हुआ श्रीपाल बहुत दूर निकल आया। उसे किसी दिशा का भी कोई ध्यान नहीं था, कोई चिन्ता नहीं थी, कोई विचार नहीं था—वह तो केवल डूबा हुआ था—प्रकृति की इस पावन मनोरमता में।

"बचाओ.....बचाओ.....बचाओ.....बचाओ—" की चीख-पुकारें एकाएक श्रीपाल के कानों से टकराईं और वह क्षण मात्र में सावधान हो गया। ये चीख-पुकारें नारी-कंठ से निकली हुई थीं। इन पुकारों की दिशा का ध्यान करके उसने अपने अश्व को उसी क्षण उस दिशा में दौड़ा दिया। नंगी तलवार अब श्रीपाल के हाथ में थी और सरपट दौड़ते हुए पानीदार अश्व पर वह साक्षात् कार्तिकेय के समान दिखाई पड़ रहा था।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सघन वृक्षों के एक झुरमुट को चीरकर ज्यों ही वह कुछ खुले-से स्थान में पहुँचा त्यों ही उसने देखा कि एक भयंकर, विशाल वनराज अपना विशाल मुख फाड़े हुए कुछ सुन्दरियों के झुण्ड पर टूट पड़ने के लिए उछाल मारने ही वाला था।

सिंह ने उछाल भरी, किन्तु उससे भी अधिक तीव्रता से, बिजली की-सी गति से उछलकर श्रीपाल उन सुन्दरियों और उस सिंह के बीच में आ गया और अपनी तीक्ष्ण तलवार के एक ही भीम-प्रहार से उसने उस झपटते हुए सिंह का सिर काट डाला।

सिंह का शीश और धड़ 'धम्म' की ध्वनि करते हुए भूमि पर गिर पड़े। अस्त-व्यस्त, घबराई हुई वे सुन्दरियाँ अब भी अपनी सुधबुध भूलकर चीख रही थीं—"बचाओ ....बचाओ!"

श्रीपाल ने अपनी तलवार म्यान में रखी और उन सुन्दरियों को आश्वस्त करने के लिए उसने कहा—

"निर्भय हो जाइये। सिंह मारा जा चुका है। अब मेरी उपस्थिति में स्वयं यमराज भी आपकी देह के एक रोम को भी स्पर्श नहीं कर सकता। डरिए नहीं, शान्त हो जाइए।"

प्राणान्तक संकटकाल में भगवान के ही भेजे किसी वीरपुरुष के इन वचनों को सुनकर और सिंह को वास्तव में भूमि पर मृत पड़ा हुआ देखकर वे सुन्दरियाँ धीरे-धीरे

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

आश्वस्त हुईं। अब उनका ध्यान अपनी एक सखी पर गया जो वहीं भूमि पर मूर्च्छित पड़ी हुई थी। वे भय के मारे फिर से चीखने-चिल्लाने लगीं—"हाय ! राजकुमारीजी, राज कुमारीजी....हे भगवान ! राजकुमारीजी को क्या हो गया ?"

श्रीपाल ने यह सुनकर इतना तो समझ लिया कि यह जो भूमि पर मूर्च्छित हुई पड़ी सुन्दरी युवती है वह कोई राजकुमारी है और शेष उसकी सखी-सहेलियाँ या दासियाँ हैं। किन्तु इस समय उसे उन लोगों का परिचय प्राप्त करने की उतनी चिन्ता नहीं थी जितनी कि मूर्च्छित कुमारी के प्राण बचाने की। उसने कहा—

"आप लोग अपने दुपट्टों से इनकी हवा करें, मैं जल लेकर अभी आता हूँ। घबराएँ नहीं, सिंह के भय से यह मूर्च्छित हो गई हैं। अभी होश में आ जाएँगी।"

इतना कहकर श्रीपाल दौड़कर समीप में ही बहते हुए एक निर्झर पर गया और अपना कमर बन्द खोलकर उसे अच्छी तरह पानी में भिगोकर तुरन्त लौट आया।

मूर्च्छित राजकुमारी के पीले पड़े हुए मुख पर धीरे-धीरे श्रीपाल ने अपना भीगा हुआ कमरबन्द निचोड़कर शीतल जल के छींटे दिये। उसकी सहेलियाँ हवा कर रही थीं। यह उपचार कुछ समय तक चला। श्रीपाल अपने घुटनों के बल राजकुमारी के समीप ही बैठा हुआ निरन्तर उसके मुख पर जल के छींटे डाल रहा था।

धीरे-धीरे राजकुमारी होश में आ गई। उसने धीरे

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

से अपने कमल-नेत्रों को खोला, कुछ स्मरण करने का प्रयत्न किया, जो कुछ सामने दीख रहा था उसे समझने-पहिचानने का यत्न किया, [और फिर अपने समक्ष एक देवदूत को बैठा हुआ देखकर उसने अपनी आँखें फिर इस भय और आशंका से बंद कर लीं कि सिंह ने उसे खा लिया है, वह मर चुकी है, और स्वर्ग में कोई देवदूत उसके समीप बैठा है।

राजकुमारी अब निरापद है, होश में आ गई है तथा उसे ही देखकर चकित है, यह देखकर श्रीपाल मुस्कुराता हुआ वहाँ से उठ खड़ा हुआ और पास ही शान्त खड़े अपने अश्व के समीप जाकर उसकी गर्दन सहलाने लगा।

राजकुमारी की सखी-सहेलियाँ अब निश्चिन्त हो चुकी थीं। उनमें से एक ने राजकुमारी के सिर पर आहिस्ते से अपना कोमल हाथ फेरते हुए मधुर स्वरों में कहा—

"राजकुमारीजी! उठिए, जागिए, अब कोई भय नहीं है। हम सब सकुशल हैं। उठिए, देखिए, सिंह मारा जा चुका है। उठिए राजकुमारी जी!"

अपनी प्रिय सखी महाश्वेता का स्वर पहचानकर राजकुमारी ने साहस करके अपनी आँखें फिर से खोलीं। कुछ क्षण इसी प्रकार वह चुपचाप महाश्वेता तथा अपनी अन्य सहेलियों को देखती रही और फिर धीरे-धीरे उठ बैठी। इस समय उसकी पीठ श्रीपाल की ओर थी।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

राजकुमारी उठी और उसने महाश्वेता के गले में अपना हाथ डाल दिया। बोली—

"हे भगवान ! क्या मैं सचमुच जीवित हूँ ? अरी महाश्वेता ! तू भी जीवित है ? तुम सब जीवित हो ? अरे, अरे, मैंने तो अभी-अभी देखा था कि मैं स्वर्ग में हूँ, और मेरे सामने.....मेरे सामने कोई अनुपम सौन्दर्यवान देवदूत बैठा है।"

यह सुनकर सब सखियाँ खिलखिलाकर हँस पड़ीं।

राजकुमारी चकित होकर उन सबका मुँह देखने लगी और फिर बोली—

"अरी दुष्टाओ ! तुम हँसती क्यों हो ? क्या मैं झूठ कहती हूँ ? मैंने अभी-अभी, अपनी इन्हीं आँखों से उस देवदूत को देखा.....।"

अपनी प्यारी सखी को छेड़ने के लिए महाश्वेता ने कहा—

"हाँ जी, तुमने जिस देवदूत को देखा उसकी आँखें अति सुन्दर, बड़ी-बड़ी थीं न.....?"

"हाँ, हाँ.....।"

"और उसका मुखमण्डल भव्य था न ?"

"हाँ ऽ ऽ ऽ।"

"और उसका विशाल वक्ष किसी हिम-धवल चट्टान जैसा दृढ़ था न ?"

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

"अरे हाँ हाँ, सचमुच.....।"

"और उस देवदूत के अंग-प्रत्यंग से सौन्दर्य की छटा बिखरी पड़ती थी न ?"

"हाँ री महाश्वेता ! बिलकुल ऐसा ही था वह देवदूत !" —कहकर जाने किस अंतःप्रेरणा के वशीभूत होकर राजकुमारी ने क्षणभर के लिए अपनी आँखें बन्द कर लीं।

श्रीपाल पीछे, समीप ही शान्त खड़ा मुस्कुरा रहा था और सखियों की छेड़छाड़ का आनन्द ले रहा था।

इतने में ही राजकुमारी को फिर से ध्यान आया। वह चकित होकर अपनी सखियों को और मृत सिंह को देखकर बोली—

"लेकिन.....लेकिन यह सब हुआ कैसे ? यह सिंह कैसे मारा गया ? यहाँ तो और कोई नहीं है.....।"

"कोई है, राजकुमारी जी !" महाश्वेता ने चुटकी-सी लेते हुए कहा—"आपका वह 'देवदूत' अभी यहीं है। धीरज छूट रहा हो तो बुला दूँ उसे ?"

"चल हट निगोड़ी, तुझे हर समय हँसी ही सूझती रहती है। मुझे मूर्ख बनाने में तू बड़ी चतुर है। पता नहीं यह सब क्या और कैसे हो गया। मुझे सब कुछ तुम लोग बाद में बताना। किन्तु अब शीघ्र यहाँ से चलना चाहिए। कहीं इस सिंह का कोई दूसरा साथी यहाँ आ पहुँचा तो मरण हो जायगा।"

"सिंह दुबारा आएगा तो राजकुमारीजी का देव-

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

दूत भी दुबारा आ जायगा।" किसी अन्य सखी ने कहा, और एक बार फिर से वह वन-प्रान्तर उन युवतियों की खिलखिलाहट से भर उठा।

अब राजकुमारी उठ खड़ी हुई। उसनें कहा—

"तुम सभी एक जैसी चुड़ैलें हो। चलो यहाँ से। पिता जी चिन्ता करते होंगे।"

"चलो भाई चलो यहाँ से," महाश्वेता ने मुँह बनाते हुए कहा—"बेचारे देवदूत की तकदीर में तो सिर्फ बेगार ही लिखी थी। इतनी बड़ी, ऐसी प्यारी राजकुमारी के प्राणों की रक्षा करने के प्रतिफल में उसे धन्यवाद का एक फूटा शब्द भी तो नहीं मिलना था।"

राजकुमारी को महाश्वेता के इस कथन में अब किसी रहस्य का आभास हुआ। उसने अपनी दृष्टि महाश्वेता के चेहरे पर गड़ा दी और कुछ गंभीरता से कहा—

"सच-सच बोल महाश्वेता! यह सब क्या झमेला है? तुम लोग ऐसे कैसे बोल रही हो? क्या सचमुच यहाँ कोई वीरपुरुष आया था जिसने हमारी रक्षा की?"

"आया 'था' नहीं राजकुमारीजी आया 'है' और अब वह जा भी रहा है। आप यदि उसे धन्यवाद के दो शब्द कहना चाहें तो अब भी समय है। जरा पीछे मुड़कर तो देखिए।"

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

श्रीपाल अपने अश्व पर आरूढ़ हो चुका था। वह सज्जन पुरुष नहीं चाहता था कि सखी-सहेलियों के हँसी-मजाक के बीच में वह 'दाल-भात में मूसरचन्द' बनकर यहाँ खड़ा रहे। अपने कर्तव्य का पालन वह कर ही चुका था। अश्वारूढ़ होकर वह बल्गा खींचने ही वाला था कि महाश्वेता का कथन सुनकर राजकुमारी ने एकदम पीछे पलटकर देखा—देवदूत ! वही देवदूत !!

पलभर राजकुमारी चकित रह गई। किन्तु फिर धीरे-धीरे सब कुछ समझ गई। वह शालीन कन्या थी। संकोच भी उसे होना स्वाभाविक ही था, किन्तु संकोच को त्याग कर अपने कर्त्तव्य का पालन करना ही उसने अधिक उचित समझा। धीमी, हंस की-सी गति से वह आगे बढ़ी, अश्वारूढ़ श्रीपाल के समीप तक आई, क्षण भर उसने श्रीपाल के नेत्रों में झाँका और फिर पलकें झुकाकर आभार प्रकट करते हुए बोली—

"अपरिचित महाभाग ! क्षमा करें, सिंह के भय से मैं मूर्च्छित हो गई थी। मुझे अपनी सधुबुध सम्हालने में कुछ समय लगा। आपने.....आपने किसी देवदूत के ही समान इस समय यहाँ आकर हमारी रक्षा की है। हम.....मैं किन शब्दों में आपका आभार प्रकट करूँ ? आप..... !"

"देवी ! आभार प्रकट करने की कोई आवश्यकता ही नहीं। यह तो मेरा कर्त्तव्य था जिसका निर्वाह मैं कर सका, इसकी मुझे खुशी है। और.....आपके दर्शन

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

भी हो गए, यह मेरा दूसरा सौभाग्य है। अब मुझे आज्ञा दें.....।"

इतना कहकर श्रीपाल ने अपने अश्व को हल्का-सा संकेत दिया और वह समझदार जानवर आगे बढ़ चला।

राजकुमारी मदनमंजूषा के हृदय में इस समय भावनाओं का समुद्र उफन रहा था। वह श्रीपाल से जाने कितना कुछ कहना चाहती थी, उसे रोकना चाहती थी, उसका परिचय जानना चाहती थी। किन्तु वह कुछ बोल न सकी। केवल प्यासे अपलक नेत्रों से वह श्रीपाल को आगे बढ़ता हुआ देखती भर रह गई।

वन-वीथी सँकरी थी। श्रीपाल का अश्व अभी उस पर दस-पाँच कदम ही आगे बढ़ पाया था कि सामने से एक-एक कर बहुत से अश्वारोही द्रुतगति से उसी ओर आते दिखाई दिए। श्रीपाल के सामने पहुँचकर सबसे आगे वाला अश्वारोही ठहर गया और उसके पीछे उसके अन्य साथी भी।

आगे वाले अश्वारोही के मुखमंडल तथा वेश-भूषा से राजसी तेज प्रकट हो रहा था। और वे थे स्वयं राजा कनककेतु, राजकुमारी मदनमंजूषा के पिता। उस रत्नद्वीप के एकच्छत्र स्वामी।

राजा कनककेतु ने श्रीपाल को देखा, उसके पीछे कुछ दूरी पर कुछ घबराई-सी खड़ी अपनी पुत्री तथा उसकी

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सहेलियों को देखा, कुछ सोचा, और श्रीपाल की ओर संकेत करते हुए अपने सैनिकों को आदेश दिया—

"बन्दी करो इसे।"

राजाज्ञा होते ही सैनिकों ने श्रीपाल को चारों ओर से घेर लिया। राजा कनककेतु श्रीपाल के अश्व के पार्श्व से आगे निकलकर राजकुमारी के पास पहुँचे और पूछा—

"इस व्यक्ति ने तुम्हें अधिक परेशान तो नहीं किया? इसे उचित दण्ड मिलेगा, घबराओ नहीं। मैं बहुत चिन्तित हो गया था कि तुम लोगों को वन-भ्रमण में इतना विलम्ब कैसे हो गया। अच्छा हुआ कि मैं समय आ पहुँचा।"

राजकुमारी को काटो तो खून नहीं। उसने देखा कि उसके पिता को भ्रम हो गया है। इस भ्रम का निवारण शीघ्र होना चाहिए। किन्तु अपने मुख से वह लज्जा और संकोचवश कुछ कह न सकी। उसने महाश्वेता की ओर संकेतपूर्ण आँखों से देखा।

महाश्वेता एक कदम आगे बढ़ी और उसने हाथ जोड़कर राजा से कहा—

"महाराज! आपको भ्रम हो रहा है। ये जो वीर पुरुष हैं, इन्होंने तो राजकुमारी के प्राणों की आज रक्षा की है। यदि ये समय पर यहाँ पहुँचकर और अपने प्राणों पर खेलकर उस सिंह को मार न डालते तो.....।"

तब राजा ने उस दिशा में दृष्टि की जिधर महाश्वेता

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

ने संकेत किया था और उस मृत सिंह के शीश और धड़ को देखा। वे चकित रह गये। कुछ-कुछ अनुमान उन्हें घटना का हुआ और तथ्य से पूर्णतया अवगत होने के लिए उन्होंने महाश्वेता से पूछा—

"क्या हुआ था महाश्वेता ? जल्दी से मुझे सारी बात बता।"

तब महाश्वेता ने आदि से अन्त तक सारी घटना का वर्णन किया। उसे सुनकर राजा कनककेतु भावविभोर हो गए। तुरन्त अपने अश्व से नीचे कूदकर उन्होंने अपनी बेटी को आलिंगन में भरते हुए कहा—

"प्यारी बच्ची ! तू बच गई ! भगवान को लाख-लाख धन्यवाद ! तुझे कोई चोट तो नहीं लगी ? अब तू पूर्णतया स्वस्थ है न ?"

"हाँ पिताजी, आप चिन्ता न करें। किन्तु ये.....।"

इससे आगे वह फिर कुछ न बोल सकी। केवल श्रीपाल की ओर उसकी चितवन का संकेत ही जा सका। राजा को तुरन्त अब ध्यान आया श्रीपाल का और उसके प्रति उन्होंने जो अन्याय किया था, बिना सोचे-समझे, उसके लिए उन्हें घोर पश्चात्ताप हुआ।

मुड़कर वे शीघ्र श्रीपाल की ओर गये। श्रीपाल मुस्कुराता हुआ शान्त-भाव से अपने अश्व से नीचे उतर कर खड़ा था।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

राजा कनककेतु ने श्रीपाल के दोनों कन्धों पर अपने हाथ रखते हुए कहा—

"ओ महाभाग वीरपुरुष ! क्षमा करो। बेटी को लौटने में बहुत देर हुई, तुम्हें मैंने यहाँ देखा और मुझे भ्रम हुआ। मैं और मेरी सारी प्रजा तुम्हारी कृतज्ञ है। तुमने तो अकेली मदन का ही नहीं, हम सबका जीवन बचा लिया। तुम्हारी वीरता को धन्य है। तुम्हारे धीरज को धन्य है। तुम्हारी शालीनता अनुपम है। क्षमा करो भाई !"

श्रीपाल ने अपने उसी धीर-गंभीर भाव से उत्तर दिया—

"राजन् ! आप व्यर्थ ही चिन्ता कर रहे हैं। आपने मेरा कोई अपमान नहीं किया। यह तो सब स्वाभाविक ही था। संयोगवश मुझे आपके भी दर्शन हो गए, यही मेरा सौभाग्य है। अच्छा, अब यदि मैं आपका बन्दी नहीं हूँ तो आज्ञा चाहता हूँ.....।"

"ठहरिए, ठहरिए महाशय ! और 'महाशय' क्या, अपरिचित होते हुए भी अब मैं तुम्हें पुत्रवत् ही मानता हूँ। मुझे कुछ स्मरण हो रहा है.....बहुत समय पूर्व..... एक वीतराग मुनिवर के दर्शन मुझे अचानक, इसी वन में हुए थे, और उन्होंने कहा था, भविष्य-कथन किया था, कि उचित समय पर इसी वन में राजकुमारी के भावी पति से मेरी भेंट होगी।

"बहुत समय पहले की यह बात मैं विस्मृत हो चुका

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

था। किन्तु अब सब कुछ स्मरण में आ गया है। प्रभु की लीला भी विचित्र है। किन्तु आप.....आपका शुभ नाम ?"

"श्रीपाल।"

"अहा! कितना सुन्दर, कैसा शुभ नाम है—श्रीपाल!" —राजा कनककेतु भाव-विभोर हो रहे थे। किन्तु फिर स्वयं को संयत करते हुए उन्होंने श्रीपाल से कहा—

"चलो, श्रीपाल, राजभवन में चलो, तुम्हें मेरी पुत्री स्वीकार करनी ही पड़ेगी.....।"

"किन्तु राजन्.....।"

"अरे बेटा श्रीपाल! कौन सा किन्तु और कहाँ के राजन्? चलो चलो, यह तो विधि का शुभ लेख है, पूर्व निश्चित है। वीतराग मुनिवर के वचन क्या त्रिकाल में भी असत्य हो सकते हैं? चलो-चलो, मदन बिटिया की माता चिन्ता कर रही होगी।"—इतना कहकर राजा कनककेतु आनन्द के उल्लास में हँस पड़े और आगे बोले—"किन्तु जब वह तुम्हें देखेगी तब उसकी सारी चिन्ता परम हर्ष की पावन बेला में परिणत हो जायगी। चलो।"

राजा कनककेतु ने श्रीपाल की एक न सुनी।

भव्य समारोह के साथ उसी दिन श्रीपाल का पाणि-ग्रहण राजकुमारी मदनमंजूषा से हो गया।

उस दिन उस रत्नद्वीप के असंख्य रत्न अपनी जगर-मगर आँखों से आनन्द की अपरिमित प्रकाश-वर्षा कर रहे थे। □

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

यह सत्य है कि पुण्यवान महापुरुष जहाँ भी जाते हैं, श्री तथा समृद्धि वहीं उनके साथ चलती हैं। रत्नद्वीप में भी ऐसा ही हुआ। राजा कनककेतु ने विदा की बेला में अपने दामाद श्रीपाल और पुत्री मदनमंजूषा को बहुत-सी मूल्यवान सामग्री—सोना, चाँदी, रत्न, हाथी-घोड़े इत्यादि भेंट किये।

विदा की बेला बड़ी भावभीनी हो जाया करती है। समुद्र के किनारे जब श्रीपाल और मदनमंजूषा अपनी विशाल सुसज्जित नौका में चढ़ने लगे तब रानी और राजा ने अपनी गीली आँखों को पोंछते हुए कहा—

"बेटी मदन ! हमें भूलना नहीं, और अपने पति की सेवा को ही अपने जीवन का चरम-लक्ष्य बनाए रखना। इसी में तेरी और हमारी शोभा है।

"और बेटा श्रीपाल ! तुम भी इस अबोध बालिका का ध्यान रखना। हमने इसे बड़े लाड़ से पाला-पोसा है....।"

वे इतना ही कह सके। उनके नयन फिर अश्रुपूरित हो गये।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

कारवाँ आगे चल पड़ा।

अब श्रीपाल के पास अपार संपत्ति थी। मूल्यवान सामग्री से भरी नौकाएँ थीं। सेवक थे। सैनिक थे। और सबसे बढ़कर थीं मदनसेना तथा मदनमंजूषा जैसी दो-दो सुन्दर पत्नियाँ।

धवल सेठ के पास भी सम्पत्ति की कोई कमी नहीं थी। किन्तु वह तो स्वभाव से ही लोभी था। इसके अतिरिक्त वह था घोर ईर्ष्यालु। श्रीपाल के सौभाग्य से वह मन ही मन जला-भुना जा रहा था। दिन-रात उसके मस्तिष्क में अब षड्यन्त्र का चक्र चलने लगा। वह सोचा करता था कि क्या करूँ, कैसे करूँ, कि इस लड़के की इस प्रभूत सम्पत्ति का स्वामी मैं ही बन जाऊँ।

इतना ही नहीं, धवल सेठ बड़ा कामी पुरुष भी था। कोढ़ में खाज के समान थी यह बात। श्रीपाल की दोनों नवोढ़ा पत्नियों को देखकर वह वासना की अग्नि में जला जा रहा था। वह श्रीपाल की सम्पत्ति ही नहीं, दोनों पत्नियों को भी हथियाना चाहता था।

नौकाओं का वह काफिला धीरे-धीरे आगे बढ़ता जाता था और उसी के साथ बढ़ती चली जा रही थी धवल सेठ की कामेच्छा।

उसके साथ उसके चार घनिष्ठ मित्र भी थे। अपने मन की सब बातें वह उनसे निस्संकोच कहा करता था। एक

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

दिन उसने उन मित्रों के समक्ष अपने मन की इस दुरभि-सन्धि को भी रख ही दिया। उसने कहा—

"मित्रो ! कोई उपाय बताओ, किस प्रकार मैं श्रीपाल की इस सारी सम्पत्ति तथा पत्नियों को प्राप्त करूँ ?"

मित्रों ने उसे समझाया—"धवल सेठ ! सावधान हो जाओ। पराई वस्तु को हथियाना पाप है। पराई स्त्री पर कुदृष्टि डालना तो महापाप है। यदि तुमने ऐसा विचार मन में रखा तो हमें विश्वास है कि तुम श्रीपाल जैसे पुण्यात्मा का तो कुछ नहीं बिगाड़ सकोगे, उल्टे अपना ही अकल्याण कर बैठोगे।"

इस प्रकार उन चारों मित्रों में से तीन मित्र तो समझा-बुझाकर इधर-उधर चले गये, किन्तु एक वहीं बैठा रहा। एकान्त पाकर उस दुष्ट ने अग्नि में घृत उँड़ेला—

"धवल सेठ ! ये लोग तो डरपोक हैं। यह लड़का श्रीपाल तुम जैसे सयाने और अनुभवी व्यक्ति का बिगाड़ ही क्या सकता है ? चूको मत, कुछ ऐसी तरकीब करो कि न रहे बाँस और न बजे बाँसुरी.....।"

"क्या मतलब ? क्या मैं श्रीपाल को..... ?"

"भाड़ में धकेल दो। मेरा मतलब है कि भाड़ तो यहाँ है नहीं, समुद्र में ही धकेल दो।"

इस प्रकार धवल सेठ को उस कुमित्र की कुबुद्धि का सहारा और मिल गया। उसने मन में निश्चित कर लिया

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

कि श्रीपाल को समाप्त कर ही देना चाहिए। बस, फिर तो उसके पौ-बारह हैं। सम्पत्ति भी मिलेगी और सुन्दरियाँ भी।

धवल सेठ अवसर की ताक में रहने लगा।

उधर सेठ के इस षड्यन्त्र से सर्वथा अनभिज्ञ श्रीपाल आनन्द के साथ अपना काल-यापन कर रहा था। उसकी दोनों पत्नियाँ सगी बहनों के समान एक दूसरी से स्नेह करती थीं। डाह का कोई प्रश्न ही नहीं था। मदनसेना और मदनमंजूषा के इस प्रेम को देखकर श्रीपाल भी परम सन्तुष्ट था। आज के युग में तो एक पुरुष की दो पत्नियाँ शायद आपस में लड़ ही मरें, किन्तु वह युग दूसरा ही था। वे व्यक्ति भी दूसरे ही थे और उन व्यक्तियों के व्यक्तित्व भी अनोखे थे, उच्च थे।

एक दिन धवल सेठ श्रीपाल की नौका पर आया और नौका देखने के बहाने श्रीपाल के साथ इधर-उधर घूमने लगा। घूमते-घूमते वह एक मचान पर चढ़ गया और नीचे समुद्र की ओर देखते हुए, आश्चर्य प्रकट करते हुए बोल पडा—

"अरे भाई श्रीपाल! देखो तो कैसे आश्चर्य की बात है। अहा, एक मगरमच्छ ऐसा है जिसके एक के स्थान पर आठ मुख हैं। ऐसा तो कभी देखा नहीं। आओ आओ, देखो।"

श्रीपाल स्वच्छ, शुद्ध, सरल हृदय वाला व्यक्ति था। धवल सेठ के मन में क्या पाप छिपा है, इसकी उसे गंध

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

तक नहीं थी। वह सरल भाव से मचान पर चढ़ गया और झुककर समुद्र में देखने लगा .....।

उसी क्षण उस पापी धवल सेठ ने श्रीपाल को पीछे से एक धक्का देकर समुद्र में धकेल दिया।

मचान से नीचे समुद्र में गिरते-गिरते श्रीपाल ने शान्त मन से नवकार मन्त्र का जाप प्रारम्भ कर दिया। इस परम पवित्र मन्त्र के प्रभाव से श्रीपाल का बाल भी बाँका नहीं हुआ। वह ज्योंही पानी में गिरा, त्योंही एक मगर-मच्छ ने उसे अपनी पीठ पर बिठा लिया और किनारे की ओर चल पड़ा। 'जल-तरणी' विद्या के प्रभाव से उसे किसी प्रकार का कष्ट नहीं हुआ। मगर की पीठ पर बैठा वह कुछ समय बाद किनारे जा लगा।

वह कोंकण देश का समुद्र तट था। किनारे पर उतर कर श्रीपाल इधर-उधर घूमने लगा और सोचने लगा कि अब क्या करना चाहिए? घूमते-घूमते उसे भूख-प्यास लगी तो उसने किसी वृक्ष के कुछ फलों का आहार किया, किसी झरने से कुछ जल पिया, और फिर थकान के कारण एक चम्पक वृक्ष की छाया में सो गया।

कितनी देर तक वह सोया रहा, इसका श्रीपाल को कुछ पता नहीं लगा। किन्तु कुछ ध्वनियों से जब उसकी निद्रा भंग हुई तब उसने देखा कि उसके सामने कुछ सैनिक आदर भाव प्रकट करते हुए खड़े हैं। उसे आश्चर्य हुआ—यह नहीं कि ये सैनिक कहाँ से आए क्योंकि प्रदेश

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

था तो प्रदेश के निवासी ही होते ही, राजा भी होता, सैनिक भी होते—आश्चर्य तो उसे इस बात हुआ कि वे उसके प्रति इतना सम्मान कैसे प्रदर्शित कर रहे थे।

उन सैनिकों के नायक ने आगे बढ़कर, हाथ जोड़कर श्रीपाल से कहा—

"महाभाग! यह कोंकण देश है। इस देश के स्वामी हैं महाराज वसुपाल। हम उन्हीं के सैनिक-सेवक हैं। किन्तु आप सोचते होंगे कि इससे आपका क्या सम्बन्ध है? वस्तुतः बात यह है कि कुछ समय पूर्व राजसभा में उपस्थित एक नैमित्तिक से हमारे महाराज ने पूछा था कि यदि आपका निमित्त-शास्त्र सत्य है, तथा आप उसके ज्ञाता हैं, तो बताइए कि राजकुमारी मदनमंजरी का पति कौन होगा? वह कहाँ और कब मिलेगा?

"हे महाभाग! तब उस नैमित्तिक ने भविष्य-कथन किया था कि वैशाख शुक्ला दशमी के दिन, ढाई प्रहर दिन चढ़ने पर यदि आप समुद्र के किनारे पर खोजेंगे तो एक परम पुण्यवान, परम तेजस्वी युवक आपको एक चम्पक वृक्ष के नीचे सोया हुआ मिलेगा। वही पुण्यवान पुरुष राजकुमारीजी का पति होगा।

"श्रीमान्! आज वही वैशाख शुक्ला दशमी का दिन है। राजा की आज्ञा से हम आपको खोजते हुए यहाँ आये और उस नैमित्तिक की बात सत्य निकली। इस चम्पक वृक्ष के नीचे निर्धारित तिथि एवं समय पर आप हमें सोये

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

हुए मिल गये। अतः अब श्रीमान से हमारी यही प्रार्थना है कि आप हमारे साथ राजमहल में पधारने की कृपा करें।"

इतना कहकर वह नायक श्रीपाल के उत्तर की प्रतीक्षा करने लगा।

श्रीपाल मन में विचार कर रहा था कि यह भी विचित्र संयोग है। वह तो इस चिन्ता में था कि अब क्या करना होगा, कैसे मदनसेना और मदनमंजूषा को खोजना होगा, कैसे चम्पानगरी पहुँचना होगा—किन्तु यहाँ तो भावी ने सब कुछ पहले से ही निर्धारित कर रखा है। महाराज वसुपाल के सहयोग से इस कार्य में सहायता स्वयं ही मिल जायगी।

यही सब विचारकर श्रीपाल उन सैनिकों के साथ एक सुन्दर, सजे हुए अश्व पर बैठकर चल पड़ा। वे लोग कुछ ही दूर गये थे कि स्वयं राजा वसुपाल अपने मन्त्री तथा अन्य सेवकों के साथ उसे मार्ग में ही आते हुए मिल गये। राजा वसुपाल ने देखा—नैमित्तिक का कथन असत्य तो नहीं हुआ। यह जो व्यक्ति आज के दिन समुद्र के किनारे, चम्पक वृक्ष के नीचे सोया हुआ मिला है वह सचमुच ही पुण्य और प्रताप की किरणें बिखेरता हुआ प्रतीत होता है। प्रकट में उसने श्रीपाल से कहा—

"हमारे पुण्यों का उदय हुआ है कि आप इस देश में पधारे। आपका स्वागत है। आप हमारे भावी जामाता हैं। आइये हमारे साथ, पधारिए।"

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

चारों ओर प्रसन्नता का वातावरण छा गया। वे लोग जब राजधानी के मुख्य मार्ग से होकर राजमहल की ओर जा रहे थे तब सभी नागरिक श्रीपाल को देख-देखकर अपनी राजकुमारी के भाग्य की सराहना कर रहे थे। उनके राजा वसुपाल का व्यक्तित्व भी कुछ कम नहीं था। वे भी वीरपुरुष थे; सुन्दर और शक्तिवान थे। किन्तु यह पुरुष जिसे वे आज देख रहे थे, वह कुछ अनोखा ही दिखाई देता था—कैसा प्रताप था, कितनी मनोहारी मुख-छवि थी!

राजमहल में पहुँचकर राजा वसुपाल ने श्रीपाल का समुचित आदर-सत्कार किया और तदुपरान्त उसी नैमित्तिक को बुलाकर विवाह के लिए शुभ मुहूर्त बताने के लिए कहा।

नैमित्तिक ने अपनी गणना इत्यादि करके कहा—

"महाराज! संयोग इसी को तो कहते हैं। विवाह के लिए आज ही का दिन अत्यन्त शुभ है।"

श्रीपाल सारी स्थिति को जान ही चुका था। उसने कोई आपत्ति नहीं की। राजकुमारी मदनमंजरी से उसका विवाह बड़ी धूमधाम से हो गया।

विवाह के उपरान्त श्रीपाल ने महाराज वसुपाल से कहा—

"राजन्! अब मैं अपने देश जाना चाहूँगा। मेरे अन्य स्वजन मेरी प्रतीक्षा करते होंगे।"

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

महाराज वसुपाल ने श्रीपाल की यह इच्छा जानकर उत्तर दिया—

"जाना तो होगा ही, यह तो निश्चित है। हमें भी अपनी बेटी से बिछुड़ना ही होगा, किन्तु अभी कुछ दिन तो ठहरिए। यह हमारा आपसे साग्रह निवेदन है।"

श्रीपाल विचारवान पुरुष थे। धैर्य भी उनमें अगाध था। किसी के हृदय को वे दुखाना नहीं चाहते थे। अतः उन्होंने महाराज वसुपाल के आग्रह को स्वीकार कर लिया।

शुभ कर्मों के प्रताप से जंगल में भी मंगल हो जाया करता है। पुण्यवान व्यक्तियों के मार्ग में आने वाली समस्त बाधाएँ स्वतः ही समाप्त हो जाती हैं। संकट नष्ट हो जाते हैं।

श्रीपाल के साथ भी यही हुआ। समुद्र में धकेल दिये जाने के बाद भी, भटकते-भटकते किसी अज्ञात प्रदेश में एकाकी रह जाने के बाद भी श्रीपाल के पुण्यकर्मों ने अपना प्रभाव दिखाया। मदनमंजरी जैसी सुन्दर, सुशीला राजकुमारी से विवाह हुआ, राजा वसुपाल जैसे श्वसुर उसे मिले और वह सुखपूर्वक रहने लगा।

× × ×

उधर उस पापी धवल सेठ ने कुमार को समुद्र में धकेलकर मगरमच्छ के आँसू बिखेरना आरम्भ कर दिया। वह चिल्ला-चिल्लाकर कहने लगा—अरे कोई दौड़ो रे, जल्दी

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

दौड़ो, बचाओ, बचाओ ! श्रीपाल समुद्र में गिर गये हैं—कोई उपाय करो। हाय, समुद्र में तूफान आ रहा है और इस स्थल पर भीषण मगरमच्छ भी हैं। अब मेरे प्रिय श्रीपाल की रक्षा कौन करेगा ? अरे, कोई उसे बचाओ।"

धवल सेठ की यह चीख-पुकार सुनकर श्रीपाल तथा सेठ के अनेकों सेवक घड़ी भर में वहाँ एकत्रित हो गए। किन्तु उफनते हुए समुद्र में उतरकर श्रीपाल की खोज करना अशक्य समझकर वे सब चुपचाप मुँह लटकाये खड़े रहे। किसी का साहस नहीं था कि वह समुद्र में कूद पड़े और खोज करे। जो व्यक्ति यह दुस्साहस करता उसकी मृत्यु निश्चित थी।

रानियों को जब यह समाचार मिला तब वे दुःख के आवेग से मूर्च्छित हो गईं। अनेक उपचारों के बाद उन्हें होश आया और वे शान्तिपूर्वक विचार करने लगीं। उन्होंने आपस में विचार किया कि उनके पति श्रीपाल पुण्यवान पुरुष हैं, अतः उनका कोई अनिष्ट नहीं हो सकता। अवश्य ही वे इस महासंकट से किसी न किसी प्रकार पार उतर ही जायेंगे और फिर से उनका मिलन होगा।

इसके साथ ही उन्होंने यह भी जान लिया कि यह सारा षड्यन्त्र दुष्ट धवल सेठ का ही है। हो न हो उसी ने धोखे से उनके पति को समुद्र में धकेल दिया है और अब वह उनकी अटूट सम्पत्ति का स्वामी बन जाना चाहेगा

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

तथा स्वयं उन्हें भी अपने चंगुल में फँसाने का प्रयत्न करेगा।

यह सोचकर दोनों रानियाँ सावधान हो गईं।

धवल सेठ के मन में तो काम-विकार अब अपनी पराकाष्ठा को पहुँच रहा था। एक-एक दिन उसे पहाड़ के समान प्रतीत होता था। अतः एक दिन वह अवसर देखकर श्रीपाल की दोनों रानियों के पास जा पहुँचा और पहले इधर-उधर की बातें बनाकर फिर सीधे अपने मतलब पर आ गया—

"देवियो! जो संसार में आता है, वह जाता भी है। बड़ा दुःख है कि श्रीपाल महाभाग इस प्रकार से मृत्यु को प्राप्त हुए। किन्तु अब किया ही क्या जा सकता है? वे लौटकर तो आ नहीं सकते। आप लोग अब निराश्रित हो गई हैं। मैं आपको आश्रय देता हूँ। मेरे पास अटूट धन है। आपको कभी किसी वस्तु की कमी नहीं होने दूंगा। बस, आप लोग श्रीपाल के स्थान पर अब मुझे ग्रहण कर लीजिए।"

इतना सुनकर दोनों रानियों ने अपने कान बन्द कर लिए। इतना ही कहा—

"धवल सेठ! पापकर्म हमेशा सिर पर चढ़कर बोलता है। तुमने पापकर्म किया है, पाप भरे शब्द तुम बोल रहे हो। अब भी समय है तुम चुपचाप चले जाओ और यह कुविचार अपने हृदय से निकाल दो अन्यथा तुम्हें पछताना

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पड़ेगा। हमें विश्वास है कि हमारे पुण्यवान पतिदेव का कोई अनिष्ट नहीं हो सकता, वे एक न एक दिन हमें अवश्य मिलेंगे। तुम यहाँ से इसी क्षण चले जाओ।"

किन्तु धवल सेठ के सिर पर तो भूत सवार था। वह उन दोनों युवती रानियों के सुन्दर शरीर को देख रहा था और वासना से जला जा रहा था। उसके मन पर रानियों के वचनों का कोई प्रभाव नहीं पड़ा। वह धीरे-धीरे रानियों की ओर बढ़ने लगा.....।

ठीक उसी समय बादलों की घनघोर गर्जना हुई। सैकड़ों बिजलियाँ चमकने लगीं। समुद्र में भीषण तूफान के लक्षण प्रकट हुए। अन्धकार छाने लगा। जलयान कागज की नावों के समान डोलने लगे।

यह दृश्य और यह स्थिति देखकर सभी घबरा गये। उसी समय उस यान पर एक क्षेत्रपाल प्रकट हुआ। उसके पीछे बावन वीरों की सेना थी। सब लोग चकित होकर यह दृश्य देख ही रहे थे कि वहाँ स्वयं चक्रेश्वरी देवी प्रकट हुईं। उन्होंने प्रकट होते ही धवल सेठ को बुरे मार्ग पर धकेलने वाले उस चौथे मित्र का काम तमाम कर दिया।

यह सब देखकर धवल सेठ दौड़कर रानियों के चरणों में गिरकर 'त्राहि-त्राहि' पुकारने लगा।

चक्रेश्वरी देवी ने अपने घन-गम्भीर स्वर में कहा—

"पापी धवल सेठ! तू सतियों की शरण में पहुँच गया है, अतः इस बार तुझे क्षमा करती हूँ। किन्तु यदि भविष्य

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

में तूने कोई कुकर्म किया तो स्मरण रखना कि तुझे जीवित नहीं छोड़ूंगी। तू स्वयं अपनी मौत मारा जायगा।"

इतना कहकर देवी ने उन दोनों रानियों को एक-एक पुष्पहार प्रदान करते हुए कहा—

"बेटियो! इन पुष्पहारों को तुम धारण किये रहना। इससे तुम्हारा कोई अनिष्ट नहीं होगा। तुम्हारे पतिदेव भी तुम्हें आज से बीसवें दिन सुरक्षित तथा सानन्द मिल जावेंगे।"

देवी अन्तर्धान हो गई। मदनसेना और मदनमंजूषा को धैर्य बँधा। धवल सेठ मुँह लटकाए, लज्जित होकर अपने यान पर चला गया।

किन्तु जिस प्रकार कुत्ते की पूंछ को कितना ही सीधा करने का प्रयत्न किया जाय वह कभी सीधी होती ही नहीं, उसी प्रकार कामी पुरुषों को सद्बुद्धि भाग्य से ही आती है। इस समय तो धवल सेठ चक्रेश्वरी देवी के प्रभाव से दोनों सतियों का कुछ भी नहीं बिगाड़ सका, किन्तु उसके मन में लालसा अभी बनी हुई ही थी। शास्त्रों में कहा गया है—**"कामातुराणां न भयं न लज्जा"**—काम से आतुर हो रहे व्यक्ति को न कोई भय ही प्रतीत होता है न उसे लज्जा आती है। क्योंकि वह तो उस समय अन्धा हो जाता है तथा उसे कुछ भी दिखाई नहीं देता।

यही हाल धवल सेठ का था। वह अवसर की तलाश में था। अपने मन में वह लड्डू फोड़ रहा था

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

कि कभी न कभी ये दोनों राजकुमारियाँ उसके वश में हो ही जायेंगी। आखिर कब तक ये श्रीपाल की याद में अपने चढ़ते हुए यौवन की उद्दाम पिपासा को वश में रख सकेंगी ?

यही विचार करते हुए धवल सेठ ने अपनी यात्रा जारी रखी।

उस समय समुद्र में पवन की दिशा दक्षिणमुखी थी। अतः वे सभी यान पवन की ही दिशा में तेजी से चलते हुए एक दिन कोंकण देश के समुद्र तट पर ही आ लगे। धरती को देखकर धवल सेठ ने वहीं लंगर डालने का आदेश दे दिया और वे लोग उस तट पर ठहर गये।

आवश्यक विश्रामादि से निवृत्त होकर धवल सेठ बहुत सारी सामग्री लेकर कोंकण नरेश की राजसभा में जा पहुँचा। राजा के चरणों में उसने बहुमूल्य भेंट रखी। राजा प्रसन्न हुआ।

किन्तु उसी समय धवल सेठ की दृष्टि राजा के समीप ही बैठे श्रीपाल पर पड़ी और उसे देखकर उसके पैरों तले से धरती खिसक गई। भय के मारे वह काँपने लगा। उसने सोच लिया कि अब तो मौत आ ही गई। यह श्रीपाल अब अवश्य ही सारे तथ्य राजा के समक्ष प्रकट करके उसे फाँसी पर चढ़वा देगा।

धवल सेठ भय के मारे काँप रहा था। राजा ने यह देखा और पूछा—

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

"क्यों श्रेष्ठिवर ! आप अचानक कुछ अस्वस्थ दिखाई पड़ रहे हैं। क्या बात है ? क्या अधिक दिन समुद्र-यात्रा करने के कारण आप अस्वस्थ हो गये हैं ? यदि चिकित्सा की आवश्यकता हो तो मैं अपने राजवैद्य को आपकी समुचित चिकित्सा करने हेतु आदेश दूँ ?"

किन्तु धवल सेठ की बीमारी तो दूसरी थी। वह कनखियों से श्रीपाल की ओर देख रहा था और थर-थर काँप रहा था। श्रीपाल की मधुर मुस्कुराहट उसे अपनी मौत का पैगाम दिखाई दे रही थी।

जैसे-तैसे धवल सेठ ने हाथ जोड़कर राजा से कहा—

"महाराज ! आपकी कृपा से मुझे कोई रोग नहीं है। कभी-कभी अचानक ही अधिक थकान के कारण मुझे अस्वस्थता का अनुभव होने लगता है, लेकिन कुछ विश्राम और साधारण औषध-सेवन से ही मैं ठीक हो जाता हूँ।

"अतः राजन् ! अब मुझे आज्ञा दीजिए। मैं अपने शिविर में लौटकर विश्राम करना चाहता हूँ।"

"जैसी आपकी इच्छा, श्रेष्ठिवर ! यदि मेरे योग्य कोई कार्य हो तो निस्संकोच बताइयेगा। अब आप जा सकते हैं।"

राजा से आज्ञा पाकर धवलसेठ राजसभा से जल्दी-जल्दी विदा हो गया। वह सोच रहा था कि इसके पूर्व कि श्रीपाल उसका भंडाफोड़ करे, किसी तरह यह कोंकण-तट छोड़कर दूर चला जाना चाहिए।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

इधर श्रीपाल ने भी धवल सेठ को पहिचान तो लिया ही था, वह उसके पापकर्म को भी जानता था। किन्तु वह बड़ा ही शान्त विचारक, धैर्यवान तथा क्षमाशील था। वह अपने मन में चाहता था कि धवल सेठ अपने कुकर्म का पश्चात्ताप करे, नैतिक जीवन को अपनाए तथा भविष्य में किसी भी अन्य व्यक्ति के साथ दुष्टता का व्यवहार न करे, निर्धनों का शोषण न करे।

यह सोचकर वह राजसभा में मौन ही रहा। किसी से उसने कुछ भी नहीं कहा। केवल एक राज गुप्तचर को सावधान करके आदेश दिया कि वह समुद्रतट पर धवल सेठ के शिविर पर कड़ी दृष्टि रखे, उसे यात्रा पर आगे रवाना न होने दे तथा दोनों रानियों के कुशल-समाचार उसे लाकर दे।

राजसभा से निकलकर धवलसेठ जब अपने शिविर की ओर जा रहा था तब संयोगवश उसे मार्ग में एक भाँड़ों की मंडली मिली। इन भाँड़ों की आजीविका तरह-तरह के स्वाँग रचाकर, भिन्न-भिन्न प्रकार के आकर्षक खेल दिखाकर प्रजा का मनोरंजन करना ही था।

उस मंडली को देखकर धवल सेठ के मस्तिष्क में एक नया ही कुटिल विचार उत्पन्न हुआ। उसने उस भाँड़-मंडली के नेता को अपने पास बुलाकर कहा—

"देखो भाई भंडराज! तुम तो बड़े कुशल नट हो। देखते-देखते लोगों को चकित कर सकते हो। है न ऐसी ही बात?।"

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

"हाँ सेठजी ! ऐसी ही बात है। आज्ञा दें तो आपको ऐसे-ऐसे खेल दिखाऊँ जो आपने कभी न देखे हों। हम लोग सारे देश में घूमते हैं, अनेकों कलाएँ जानते हैं.....।"

"बस बस, भंडराज ! देखो, मुझे अभी तुम्हारा खेल नहीं देखना है। फिर देखूँगा और तुम्हें मुँहमाँगा पुरस्कार भी दूँगा। मेरा नाम धवल सेठ है। मेरे पास धन-सम्पत्ति की कोई कमी नहीं है। जितना चाहो उतना ही धन तुम्हें दूंगा। किन्तु तुम्हें मेरा एक कार्य करना पड़ेगा। बोलो, करोगे ?"

"अरे सेठ, इधर आपने काम बताया नहीं और उधर हमने उसे पूरा किया नहीं। कहें तो रातोंरात राजकुमारी को गायब कर दें ?"—कहकर चतुर भांड़ ने अपनी बायीं आँख की एक कोर दबाकर अपनी दृष्टि धवल सेठ के चेहरे पर गड़ा दी।

"नहीं नहीं, भंडराज ! ऐसा कोई काम नहीं करना है। तुम्हें जो काम करना है वह यह है कि राजसभा में राजा के पास एक बहुत ही सुन्दर, बड़ा ही प्रदीप्त पुरुष उनकी दाहिनी ओर बैठता है। उसका नाम है श्रीपाल.... ....।"

"समझ गया, सेठ ! समझ गया। उस श्रीपाल को एकदम गायब कर देना है न ?"

"अरे नहीं भाई ! गायब नहीं करना है। और उसे गायब कर देना कोई हँसी-खेल भी नहीं है। कौन जाने

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

वह कितने पुण्य एकत्रित करके आया है कि जहाँ भी वह जाता है उसे ऋद्धि-सिद्धि ही प्राप्त होती है और उसका बाल भी बाँका नहीं होता। मैं तो स्वयं ही प्रयत्न कर-करके हार गया हूँ।"

"तो फिर उस श्रीपाल का आप क्या करना चाहते हैं सेठ? जो कुछ भी करना हो सो बता दीजिए। हमें तो अपने पुरस्कार से मतलब है।"

"देखो भंडराज! तुम ऐसा करो कि कल गाते-बजाते राजसभा में जाओ और राजा को अपने सुन्दर और आश्चर्यजनक खेल से प्रसन्न करो। और फिर ऐसा नाटक करो कि जैसे तुम्हारी दृष्टि अचानक ही श्रीपाल पर पड़ गई हो और तुमने उसे पहिचान लिया हो। उसे तुम अपना बेटा बना लेना, कोई उसे भाई, कोई चाचा और जो जी में आये बना लेना। किन्तु इतनी सहजता और सफाई से यह काम होना चाहिए कि किसी को कोई संदेह न हो। राजा भी यही सोचे कि वह वास्तव में तुम्हारा ही बेटा है, अर्थात् एक भाँड़ है। तम अपने उस बेटे को अपने साथ ले जाने की आज्ञा राजा से मांगना।

"बस, भंडराज! मेरा इतना ही काम है। आगे मैं देख लूँगा। यह कार्य यदि तुम कुशलता और सफलतापूर्वक कर दोगे तो मैं तुम्हें एक लाख स्वर्णमुद्राएँ दूँगा, समझे? पूरी एक लाख!"

भंडराज के मुँह में पानी भर आया। एक लाख स्वर्ण-

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

मुद्राएँ उसने कभी स्वप्न में भी नहीं देखी थीं। उसने हर्ष से विभोर होकर कहा—

"सेठ ! यह काम कल अवश्य हो जायगा। तुम देखना कि हम लोग ऐसा सफल नाटक करेंगे कि लोग देखते ही रह जाँयगे।"

"ठीक है, तो अभी ता मैं चलता हूँ। कल राजसभा में अवश्य पहुँच जाना। भूलना नहीं भला। एक लाख स्वर्ण-मुद्राएँ तुम्हें मिल ही गई समझ लेना।"

भंडराज अपनी मंडली सहित नाचता-गाता एक ओर चला गया। धवल सेठ भी अपने शिविर की ओर अन्य-मनस्क सा लौट आया।

× × ×

राजसभा भरी हुई थी। राजा वसुपाल अपने आसन पर शोभित हो रहे थे। दाहिनी ओर किसी देवपुरुष की भाँति देदीप्यमान श्रीपाल बैठा हुआ था। मंत्री, अमात्य, सेनापति तथा अन्य अधिकारीगण भी अपने-अपने नियत स्थान पर खड़े अथवा बैठे हुए थे। नगर के अनेक प्रमुख जन भी सभा में उपस्थित थे।

उसी समय सभाभवन के बाहर कुछ शोर-गुल सुनाई पड़ा। नाना प्रकार के वाद्यों की ध्वनि आ रही थी। यह शोर-गुल क्यों हो रहा है इसका पता लगाने के लिए राजा ने अपने कंचुकी को कहा ही था कि तभी द्वारपाल 'महा-

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

राज वसुपाल की जय' पुकारता हुआ भीतर आया और बोला—

"महाराज की जय हो! कोई भंडराज अपनी मंडली सहित द्वार पर उपस्थित हुआ है। उसका कहना है कि वह इतने विचित्र प्रकार के स्वाँग और खेल दिखा सकता है कि कभी किसी ने नहीं देखे हों। महाराज की क्या आज्ञा है ?"

कौतूहल मनुष्य-स्वभाव का एक अंग है। उस दिन राजसभा में कोई विशेष कार्य भी नहीं था। सब तरफ सुख-शान्ति थी। अतः राजा वसुपाल ने भी कौतूहल से प्रेरित होकर कहा—

"इस भाँड़मण्डली को भीतर भेज दो। देखें, ये लोग क्या-क्या तमाशा दिखाते हैं ?"

"जो आज्ञा महाराज !"—कहकर द्वारपाल उल्टे पैर पीछे लौट गया।

अनेक प्रकार के रंगों के विचित्र-विचित्र वेश पहिने हुए तथा सिर से पैर तक नकली, चमकदार आभूषण धारण किये हुए उस भाँड़-मंडली के सदस्य छमछमाहट करते हुए राजसभा के बीच के संगमरमर के चौक में आकर खड़े हो गये। जमीन तक झुक-झुककर उन्होंने राजा को सलाम और नमस्कार किया तथा फिर राजा की आज्ञा से उन्होंने अनेक प्रकार के खेल दिखाने आरम्भ किये। उस

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

मंडली में स्त्रियाँ और बालक भी थे। वे भी सभी बड़े चपल और चतुर थे।

इसी प्रकार कोई एक खेल चल रहा था कि अचानक उस मंडली का सरदार वह भंडराज अपनी नाट्य-क्रिया के बीच में स्तम्भित सा होकर ठहर गया और श्रीपाल को आँख गड़ा-गड़ाकर देखने लगा।

कुछ पल वह इसी प्रकार श्रीपाल को देखता रहा। सभा में उपस्थित सभी लोगों को आश्चर्य हुआ कि यह भंडराज अचानक खेल दिखाते हुए रुक क्यों गया और वह इस प्रकार श्रीपाल को आँख गड़ा-गड़ाकर क्यों देख रहा है। कोई कुछ समझ नहीं सका। इतने में ही वह भंडराज दौड़कर श्रीपाल की ओर गया और उससे चिपट गया। कहने लगा—

"अरे बेटा ! अरे मेरे प्यारे बेटे ! तू यहाँ छिपा बैठा है ? हाय, हम तो तुझे ढूँढ़ते-ढूँढ़ते देश-विदेश में मारे-मारे फिरते रहे। पैरों में छाले पड़ गये, अनेक बार भूख-प्यास से अधमरे भी हो गये और तू यहाँ सुख से छिपा बैठा है। देख तो सही, यह तेरी माता तेरे वियोग में कैसी अधमरी, कितनी बूढ़ी हो गई है, अरे मेरे प्यारे बेटे.....।"

षड्यन्त्र तो पहले ही रच लिया गया था। भंडराज की पत्नी भी अब दौड़कर श्रीपाल को अपना 'बेटा-बेटा' कहकर अँसुवा ढारने लगी।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

इसी प्रकार कोई उसे अपना भतीजा बताने लगा और उसके मिल जाने पर हर्ष के आँसू बहाने लगा।

राजा वसुपाल की राजसभा में हंगामा-सा मच गया। राजा पहले तो आश्चर्य में पड़ा, फिर धीरे-धीरे जब उसे यह विश्वास होने लगा कि यह अनजान युवक श्रीपाल सच, मुच ही भाँड़ है, इतनी नीच जाति का है तो उसे एक ओर तो यह दुख हुआ कि उसने बिना पूर्ण विचार और देखभाल किये अपनी प्यारी बेटी का विवाह उसके क्यों कर दिया और दूसरी ओर उसे श्रीपाल पर क्रोध आया कि उसने सत्य बात प्रकट क्यों न की ? उसे धोखा क्यों दिया ?

जिस समय यह तमाशा हो रहा था उस समय राज-सभा के एक दूर कोने में खड़ा धवल सेठ मन ही मन प्रसन्न हो रहा था कि अब राजा श्रीपाल को अवश्य मृत्युदण्ड दे देगा और उसके सारे संकट दूर हो जायेंगे। श्रीपाल की सम्पत्ति भी उसे मिल जायगी तथा उसकी युवती पत्नियाँ भी उसे प्राप्त हो ही जायेंगी।

अन्त में राजा से रहा न गया। उसका चेहरा क्रोध और परिताप से लाल हो रहा था। वह क्रोध से बोला—

"भंडराज ! तुम सब लोग एक तरफ खड़े हो जाओ। और अब बोलो कि तुम लोग यह सब क्या बकवास कर रहे हो ? ये महाराज श्रीपाल हमारे दामाद हैं। वीर क्षत्रिय हैं। तुम लोग यह क्या पागलपन कर रहे हो ? क्या तुम लोगों की मौत सिर पर नाच रही है ? सच-सच बोलो,

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

यदि कुछ भी झूठ कहा तो तुम सबको, एक-एक को, शूली पर चढ़ा दूँगा।"

राजा की यह भीषण डाँट खाकर भी भंडराज घबराया नहीं। वह घुटा हुआ नट था। घाट-घाट का पानी पिये हुए था। उसने बड़े ही सहज भाव से उत्तर दिया—

"महाराज! यह मेरा बेटा चाँगला है। पता नहीं अब इसने अपना क्या नाम रख लिया है और कैसे यह आपके पास पहुँच गया और कैसे इसने आपको धोखा देकर राजकुमारीजी से ब्याह भी कर लिया। किन्तु हमारे—माँ-बाप के दिल से पूछिए, इसके बिछुड़ने से हम कितने दुःखी हुए हैं। और अब जब आज यह हमें मिल गया है तो हमें पहिचानता ही नहीं। हे भगवान! तेरी लीला भी विचित्र है।" —कहता हुआ भंडराज फिर मगरमच्छ के आँसू बहाने लगा।

राजा बड़ा दुखी था। सोच रहा था कि यदि यह बात सत्य है तो उसने अपनी प्यारी बेटी का विवाह एक नीच कुलीन भाँड़ से कर दिया। अब बेटी का भविष्य क्या होगा?

यही सोचते हुए उसने श्रीपाल से कहा—

"महाभाग! मैं यह क्या देख रहा हूँ? क्या सुन रहा हूँ। आप कुछ बोल नहीं रहे हैं, तो क्या यह बात सत्य है? क्या आपने हमें इतना बड़ा धोखा दिया है? सच-सच बताइये।"

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

राजा ने श्रीपाल से यह प्रश्न किया और इससे पूर्व कि वह कुछ उत्तर देता, राजा को अचानक उस नैमित्तिक की याद आई जिसने भविष्यवाणी की थी कि अमुक प्रकार से राजकुमारी का विवाह एक उत्तम पुरुष से होगा। उसकी याद आते ही राजा ने नैमित्तिक को तत्काल राज-सभा में बुलवाया और उसे डाँटते हुए कहा—

"क्यों जी, क्या तुम्हारा निमित्त-ज्ञान यही है ? तुमने मेरी इकलौती बेटी का विवाह एक भाँड़ से करा दिया ? तुम्हें इसी समय शूली पर चढ़ाने की आज्ञा देता हूँ।"

किन्तु वह नैमित्तिक तनिक भी विचलित नहीं हुआ। उसने शान्तिपूर्वक कहा—

"महाराज ! आप शान्त हों, मुझे इस सारे काण्ड में किसी भयंकर षड्यन्त्र की गन्ध आ रही है। मेरा निमित्त-शास्त्र झूठा नहीं है और मेरा निमित्तज्ञान भी अधूरा नहीं है। मैं विश्वासपूर्वक कहता हूँ कि महाभाग श्रीपाल परम उत्तम कुल के हैं तथा इनके जैसा पुण्यवान पुरुष आपको इस समय सारे आर्यावर्त में भी ढूंढ़े नहीं मिलेगा।

"महाराज ! ये लोग तो भाँड़ हैं। मसखरी करना तथा झूठे-झूठे नाटक रचना इनका पेशा है। इनकी बात क्या भरोसा ? आप स्वयं श्रीपाल महाराज से ही सत्य बात पूछिए।"

"हाँ, श्रीपालजी ! कहिए कि यह सब क्या तमाशा

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

है ? आप किस कुल के हैं ? आपका वास्तविक परिचय क्या है ?" राजा ने श्रीपाल की ओर देखकर पूछा।

श्रीपाल तो तटस्थ भाव से मुस्कुरा रहा था। उसने कहा—

"राजन् ! मैं आपके प्रश्न का क्या उत्तर दूं ? सभ्य और संस्कारी मनुष्य स्वयं अपने मुख से अपनी प्रशंसा नहीं किया करते। हाँ, यदि आप मेरी परीक्षा लेना चाहते हों तो ले लीजिए, अपनी समस्त सेना को शस्त्रास्त्रों से सुसज्जित करके एक ओर खड़ी कर दीजिए। दूसरी ओर मैं अकेला केवल एक खड्ग लेकर ही रहूँगा। इस युद्ध के परिणाम से आपको स्वयं ही ज्ञात हो जायगा कि मैं किस कुल से उत्पन्न हूँ।

"किन्तु राजन् ! इसमें व्यर्थ ही बहुत सा रक्तपात हो जायगा। मैं नहीं चाहता कि मेरे हाथ से आपके अनेक सैनिक मारे जायँ और उनके परिवार के लोग दुखी हों। अतः मैं आपको एक अन्य मार्ग बताता हूँ— इस धवल सेठ के शिविर में मेरी दो पत्नियाँ हैं—मदनसेना और मदन-मंजूषा। उन्हें यहाँ बुला लीजिए। वे आपको आदि से अन्त तक सारी सत्य बात बता देंगी।"

राजा वसुपाल को यह बात ठीक लगी। उसने तुरन्त अपने सैनिकों को बुलाकर उन्हें समुद्र तट पर जाकर सुन्दर पालकियों में उन दोनों रानियों को ले आने का आदेश दिया।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

जब ये दोनों रानियाँ राजसभा में उपस्थित हुईं तो वहाँ अपने पति श्रीपाल को देखकर वे अत्यन्त प्रसन्न हो गईं। सबसे पहले उन्होंने जाकर अपने पतिदेव के चरण छुए और कहा—

"स्वामी ! आपको सकुशल देखकर हमारे प्राण लौट आये हैं। भगवान ने हमारी प्रार्थना सुन ली। ईश्वर बड़ा कृपालु है।"

इसके बाद राजा वसुपाल ने जब उन रानियों से सारा सच्चा हाल बताने को कहा तब उन्होंने जो कुछ भी घटित हुआ था वह सब कुछ स्पष्ट रूप से बता दिया। किस प्रकार धवल सेठ ने उन्हें फुसलाने का प्रयत्न किया, यह भी उन्होंने बताया। श्रीपाल का पूर्ण परिचय भी दिया।

अब तो सारी बात साफ हो गई थी। सभी लोग यह भी समझ गये थे कि इस पापी धवल सेठ ने ही श्रीपाल को धोखे से समुद्र में धकेल दिया था और वे अपने पुण्यों के प्रभाव से ही सुरक्षित किनारे पर आ लगे थे।

जब रानियाँ यह घटना राजा वसुपाल को बता रही थीं, तब धवल सेठ अपनी सारी पोल खुल जाने तथा राजा के द्वारा कठोर दण्ड दिये जाने के भय से अधमरा-सा हो रहा था और लोगों की दृष्टि बचाकर धीरे-धीरे सभा-भवन से बाहर खिसकने का उपक्रम कर रहा था। किन्तु राजा की दृष्टि तीव्र थी। उसने सैनिकों को आदेश दिया

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

कि इस धवल सेठ को बन्दी बना लिया जाय। सैनिकों ने राजा के आदेश का तत्क्षण पालन किया।

उसके बाद उस लालची और धूर्त्त भण्डराज की बारी आई। राजा ने उससे कहा—

"सच-सच बोल भण्डराज के बच्चे! तूने यह नाटक किसलिए और किसके कहने से किया?"

बेचारा गरीब भंडराज बेहद घबरा गया था। उसके मुँह से अब बोल भी बड़ी कठिनाई से फूट रहे थे। जैसे-तैसे उसने उत्तर दिया—

"महाराज! आप दयालु हैं, ज्ञानी हैं। हम पर दया कीजिए। हम तो गरीब आदमी हैं। रोज कुआ खोदते हैं और रोज पानी पीते हैं। हम लोग अपने खेल दिखाकर आपको प्रसन्न करके आपसे कुछ पुरस्कार प्राप्त करने की इच्छा से यहाँ आये थे। रास्ते में ये धवल सेठ हमें मिले। इन्हीं ने हमें यह कुबुद्धि दी कि हम झूठा नाटक रचकर श्रीपाल महाराज को अपना सम्बन्धी सिद्ध करें। इसके बदले में उन्होंने हमें एक लाख स्वर्णमुद्राएँ देने का वचन दिया था। बस माई-बाप! सच्ची बात तो यही है। अब आगे आप मालिक हैं। मारें चाहे तारें।"

सब बात जान लेने पर राजा को धवल सेठ पर बहुत क्रोध आया। भरी सभा में उसने राज-जामाता को अपमानित करने का प्रयत्न किया था। समुद्र में धकेलकर उसके प्राण लेने का षड्यन्त्र रचा था और उसकी विवा-

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

हिता पत्नियों को फुसलाकर उनका शीलभंग करने का भी घोर पाप करने का यत्न किया था।

अतः राजा ने उसी क्षण आदेश दिया—

"इस नीच धवलसेठ की सारी सम्पत्ति जब्त कर ली जाय। उसमें से एक लाख स्वर्ण-मुद्राएं इन गरीब भाँड़ों को दे दी जायँ और इस पापी सेठ को तुरन्त शूली पर चढ़ा दिया जाय।"

राजा का यह आदेश सुनकर धवल सेठ भूमि पर साष्टांग गिरकर गिड़गिड़ाने लगा। दया की भीख माँगने लगा। किन्तु राजा ने उस दुष्ट की एक न सुनी। सैनिक उसे घसीटकर वधस्थल की ओर ले जाने लगे।

उसी समय श्रीपाल ने अपना मुख खोला। जैसे कहीं से अचानक अमृत की वर्षा होने लगी हो, ऐसे मधुर वचन उसने कहे—

"महाराज वसुपाल! मैं आपसे एक प्रार्थना करना चाहता हूँ। यह धवल सेठ अज्ञानी है। अपने अज्ञान में ही इसने ये सब कुकर्म किये हैं। मुझे आशा है कि अब इसे अपने किये का पश्चात्ताप अवश्य हो रहा होगा और भविष्य में यह ऐसा कोई पापकर्म नहीं करेगा। अतः आप कृपया इसे इस बार क्षमा कर दीजिये।"

राजा सहित सारी सभा श्रीपाल की महानता से विस्मित होकर उसे एकटक देखती ही रह गई। सभी सोच रहे थे कि क्या इस संसार में ऐसे भी महान, इतने

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

भी उदार महापुरुष होते हैं ? जिस नीच व्यक्ति ने उनके साथ इतने-इतने अत्याचार किए, उसी व्यक्ति को ये क्षमा-दान दिलाना चाहते हैं ? धन्य हैं ऐसे महापुरुष !

श्रीपाल ने पुनः राजा से कहा—

"महाराज ! मेरी प्रार्थना स्वीकार कर लीजिये। इस धवल सेठ के अधिक न सही तो कुछ उपकार तो मुझ पर भी हैं ही। ये समुद्र यात्रा पर मुझे अपने साथ लाये थे। भले ही ये मेरे उपकारों को भूल गये हैं किन्तु मैं कैसे इनके उपकार को भूलूँ ? छोटे से छोटे उपकार को भी भूलना कृतघ्नता कहलाती है।

"अतः राजन् ! आप अपने स्वच्छ और पवित्र हाथ इस को प्राण-दण्ड देकर कलुषित न कीजिए। इसे क्षमा कर दीजिए।"

राजा ने श्रीपाल की बात सुनी, कुछ सोचा और अन्त में उसने उसकी बात मान ही ली। आदेश दिया—

"नीच धवल सेठ ! सत्य तो यह है कि तुम इस पृथ्वी पर रेंगने वाले असंख्य लघु कीटों से भी तुच्छ हो। तुम जैसे स्वार्थी, कृतघ्न और कामान्ध लोगों को इस पृथ्वी पर रहकर उसका भार व्यर्थ ही बढ़ाने का कोई अधिकार नहीं है। तुम्हारे लिए मृत्युदण्ड ही उचित है। किन्तु मैं इस महापुरुष, अपने जामाता श्रीपाल महाभाग की बात को टाल भी नहीं सकता हूँ, अतः तुम्हें क्षमा करता हूँ। जाओ, कल सूर्योदय होने से पूर्व मेरे राज्य,

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

इस कोंकण प्रदेश का तट छोड़कर दूर चले जाओ। यदि कल सूर्योदय के पश्चात् तुम यहाँ दिखाई पड़े तो अपनी मृत्यु निश्चित जानना।"

राजा की आज्ञा सुनकर सैनिकों ने धवल सेठ के बन्धन खोल दिये। मुँह लटकाए, लज्जित होकर वह राजसभा से निकल गया।

× × × ×

रात्रि निस्तब्ध थी, काली थी। चन्द्रोदय हुआ नहीं था। किन्तु राजमहल असंख्य दीपकों से जगमगा रहा था। इसी भव्य राजप्रासाद के किसी विशाल खण्ड में श्रीपाल अपनी तीनों प्रिय रानियों से अतीत की सारी बातें करते हुए धीरे-धीरे निद्रा देवी की गोद में चला गया था। मध्यरात्रि का गजर बज चुका था। ऐसा प्रतीत होता था कि सारी सृष्टि दिन भर की थकान के बाद अब विश्राम कर रही है। केवल राजमहल तथा नगर के पहरेदार ही जाग रहे थे और बीच-बीच में 'जागते रहो' अथवा 'सावधान' के शब्द जोरों से पुकार उठते थे। उसके बाद पुनः शान्ति व्याप्त हो जाती थी।

सारी नगरी चैन से सो रही थी, किन्तु उस पापी धवल सेठ की आँखों में नींद नहीं थी। उसका मस्तिष्क भी शान्त नहीं था और उसमें षड्यन्त्र की कड़ियाँ एक दूसरी से जुड़ रही थीं। श्रीपाल के समस्त उपकारों को भुलाकर, उसकी महानता को भुलाकर वह श्रीपाल से

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

बदला लेने, यहाँ तक कि उसे मौत के घाट उतार देने के लिए बेचैन हो रहा था। सच ही कहा गया है कि "नल बल जल ऊँचो चढ़े, अन्त नीच को नीच"—धवल सेठ स्वभाव से ही नीच था और वह नीचता उसकी रग-रग में समाई हुई थी।

साँझ को ही नगरी में इधर-उधर घूमकर उसने किसी अपने जैसे ही व्यक्ति को खोजकर उससे एक गोह खरीद ली थी। लम्बी, रेशमी डोर भी उसने जुटा ली थी।

बस, अब उसका इरादा स्पष्ट था—रात्रि की निस्तब्धता में, अन्धेरे में, वह श्रीपाल के आवास के नीचे तक चुपचाप पहुँचेगा। वहाँ से वह रस्सी से बँधी उस गोह को आवास की छत पर फेंक देगा, सधी-सधाई गोह छत से चिपक जायगी और फिर वह धवल सेठ रस्सी के सहारे ऊपर चढ़ जायेगा।

बस, फिर तो जरा-सी सावधानी और साहस का ही काम है—पैनी छुरी उसने अपनी कमर में खोंस ही रखी है। द्वाररक्षक की दृष्टि बचाकर एक-दो क्षण के लिए श्रीपाल के कक्ष में घुस पड़ना है और उसकी शय्या तक पहुँचकर 'धप्प' से छुरिका उसके पेट में घुसेड़ देनी है.....।

यही सारी योजना अपने मस्तिष्क में दुहराता हुआ, धवल सेठ अर्धरात्रि को अपने शिविर से निकल पड़ा। उसने काले वस्त्र धारण कर रखे थे ताकि वे प्रगाढ़ अन्ध-

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

कार के साथ एकमेक हो जायँ और कोई उसे देख न पाये।

चाल उसकी बिल्ली जैसी हो गई थी। वह चौकन्ना चलता चला जाता था, किन्तु शब्द तनिक भी नहीं होता था।

यद्यपि उसका हृदय धड़क रहा था, उसे भी लग रहा था कि यदि पकड़ा गया तो क्या होगा। किन्तु वैर और लोभ का प्रभाव उसके हृदय में इतना तीव्र था कि वह आगे बढ़ता ही गया, अपनी जान पर खेल जाने का दृढ़ निश्चय करके।

संयोगवश वह जब तक श्रीपाल के प्रकोष्ठ के नीचे तक पहुँचा तब तक मार्ग में उसे किसी ने नहीं टोका, किसी पहरेदार या नागरिक से उसकी भेंट नहीं हुई। किन्तु उसने देखा कि श्रीपाल के महल के नीचे एक सशस्त्र पहरेदार चारों ओर सजग दृष्टि से देखता हुआ घूम रहा था। वास्तविक संकट की घड़ी तो अब आई थी। यदि प्रहरी की दृष्टि में धवल सेठ आ गया तो उसी क्षण उसकी मृत्यु निश्चित थी।

धवल सेठ एक सघन वृक्ष की ओट में, अंधेरे में, चीते की तरह दुबक कर बैठ गया और साँस रोककर अवसर की तलाश करने लगा।

उसने उस प्रहरी की गति-विधि का अध्ययन करना आरम्भ किया—उस प्रहरी को उस महल का एक चक्कर

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

लगाकर आने में कम से कम पाँच-दस मिनट तो लगते ही थे। धवल सेठ ने सोचा—यह प्रहरी एक बार जब महल के पीछे की ओर जायेगा तब वह शीघ्रता से गोह को छत पर फेंक देगा, गोह वहीं चिपक जायगी और वह रस्सी को अंधेरे में दीवार के सहारे लटकने देगा। इतने में ही पहरेदार लौटेगा, तब तक वह पुनः उसी वृक्ष की आड़ में छिपा रहेगा और जब पहरेदार फिर से चक्कर लगाता हुआ दूसरी तरफ जायगा तब वह जल्दी-जल्दी रस्सी पकड़कर उस पर चढ़कर छत पर पहुँच जायगा। बस, फिर तो गढ़ जीत ही लिया समझो। एक ही वार में वह अपनी कमर में लटकती हुई तीक्ष्ण छुरिका से श्रीपाल का पेट फाड़कर अन्धकार में विलीन हो जायगा। किसी को पता भी नहीं चलेगा कि यह हत्या किसने और किस प्रकार कर दी।

धवल सेठ तो उस समय तक समुद्रतट छोड़कर अथाह सागर में दूर चला गया होगा।

यह थी धवल सेठ की योजना।

इस योजना का पहला चरण सफल हो भी गया। धवल सेठ ने गोह को छत पर चिपका दिया और वह पहरेदार के दूसरे चक्कर के समय तेजी से मजबूत रेशमी डोर के सहारे छत की ओर सरकने लगा।

किन्तु मनुष्य लाख प्रयत्न करे, विधि का लेख तो अटल ही रहता है। दूसरों के लिए खाई खोदने वाला व्यक्ति कभी न कभी स्वयं ही उस खाई में जा गिरता है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

धवल सेठ के साथ भी यही घटित हुआ। अपने मोटे भारी-भरकम शरीर के साथ वह हाँफता-हाँफता आधे रास्ते तक ही चढ़ पाया था कि उसके हाथ-पैरों ने जवाब दे दिया। हाथ काँपने लगे, पैर थरथराने लगे और रस्सी अब छूटी तब छूटी जैसी स्थिति हो गई। धवल सेठ भय और आसन्न मृत्यु की आशंका से पसीने से तरबतर हो गया और उसी हताशा के क्षण में उसके हाथ से रस्सी छूट गई.....।

'धपाक' की एक मोटी ध्वनि के साथ धवल सेठ काफी ऊँचाई से जमीन पर आ गिरा। उसकी कमर में लटकी हुई तीक्ष्ण छुरिका गिरते समय उसी के मोटे पेट में ठेठ मूठ तक घुस गई। एक भयानक चीत्कार के साथ नाना प्रकार के कुकर्मों की पोट अपने सिर पर रखे धवल सेठ परलोक का यात्री बन गया। उसकी सारी सम्पत्ति, उसका सारा वैभव, उसकी सारी लालसाएँ और स्वप्न यहीं रह गये।

किसी भारी वस्तु के गिरने की आवाज तथा चीत्कार की ध्वनि सुनकर सजग पहरेदार दौड़ता हुआ उस स्थान पर आया। एक स्थान से जलती हुई मशाल वह उठा लाया और उसके प्रकाश में उसने मृत धवल सेठ के शव को वहाँ निश्चेष्ट पड़ा हुआ पाया। मशाल की रोशनी में उसने छत की दीवार के सहारे लटकती हुई रेशमी डोरी को भी देखा और क्षण-मात्र में वह सारी घटना को समझ गया। आवाज

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

लगाकर उसने अपने दूसरे साथियों को बुलाया और धवल सेठ के शव को रात्रिभर के लिए एक कोठरी में रख दिया।

प्रातःकाल होने पर तो इस घटना ने सारी नगरी में तहलका-सा मचा दिया। लोग टोली बाँध-बाँधकर नीच धवल सेठ की अन्तिम गति को देखने आने लगे। यह क्रम बहुत देर तक चलता रहा और लोग उस पापी को धिक्कारते रहे।

एक कहता—"इस नीच को नगरी से बाहर चील-कौवों का आहार बनने के लिए फेंक देना चाहिए।

दूसरा कहता—"इसके पापी शरीर के टुकड़े-टुकड़े करके कुत्तों को खिला देना चाहिए।"

तीसरा कहता—"इसका मुँह काला करके, गधे पर लादकर उसे श्मशान में पटक देना चाहिए ताकि यह भूत बनकर भव-भव तक भटकता रहे।"

जितने मुख उतनी ही बातें हो रही थीं। एक भी ऐसा व्यक्ति नहीं था जिसे उस पापी धवल सेठ से तनिक भी सहानुभूति हो।

किन्तु श्रीपाल तो महानुभाव था। वह जानता था कि व्यक्ति स्वयं में पापी अथवा बुरा नहीं होता। संस्कार, परिस्थितियाँ, संयोग ही उसे भिन्न-भिन्न मार्गों पर धकेल देते हैं। उसका अज्ञान ही उसे उल्टे रास्तों पर चलाता है।

अतः श्रीपाल ने उदारता प्रदर्शित करते हुए राजा से

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

आज्ञा लेकर धवल सेठ का अन्तिम संस्कार विधिवत् सम्पन्न किया। उसके पाँच सौ यान तथा उनका सारा माल उसने धवल सेठ के उन तीनों मित्रों में बाँट दिया जो उसे सदैव सच्ची और अच्छी सलाह दिया करते थे।

इस प्रकार धवल सेठ के अनैतिक जीवन के नाटक का पटाक्षेप हो गया।

श्रीपाल की जीवन-यात्रा का भी एक पड़ाव पीछे छूट गया। □

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

उस सुन्दर, श्यामल कोंकण प्रदेश में श्वसुर वसुपाल तथा तीनों रानियों की स्नेह छाया में श्रीपाल के बहुत दिन सुखपूर्वक व्यतीत हो गये।

किन्तु श्रीपाल को अपनी माता तथा मैनासुन्दरी से बिछुड़े अब बहुत समय हो गया था। उसका मन अब अपने देश को लौट जाने का होने लगा था।

उसी समय एक दिन वन-भ्रमण करते हुए श्रीपाल को बनजारों का एक दल दिखाई पड़ा। सहज रूप से श्रीपाल ने बनजारों के सरदार से पूछ लिया—

"भाई! आप लोग तो साधुओं की तरह निरन्तर भ्रमण करते रहते हैं। अनेक देश आपने देखे होंगे। आपको संसार और उसकी विचित्रता का बड़ा अनुभव होगा। अतः कृपया बताइये कि क्या आपने कहीं कोई अद्भुत बात देखी है?"

सरदार ने हाथ जोड़कर उत्तर दिया—

'हाँ, श्रीमान्! हम बनजारे हैं, इधर-उधर भटकते ही

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

रहते हैं। सन्त-साधुओं की बराबरी तो हम कैसे कर सकते हैं? हम तो अपना और अपने परिवार का पेट-पालन करने के लिए ही इधर-उधर रखड़ते हैं, जबकि साधु पुरुष तो लोक कल्याण के लिए विचरण करते हैं। वे लोग जहाँ भी जाते हैं, वहाँ का वातावरण पवित्र हो जाता है। वे लोग पूज्य हैं। हम तो गरीब बनजारे हैं।"

"अरे भाई! धनवान अथवा निर्धन होना इतने महत्त्व की बात नहीं है। मनुष्य को अपने गुणों और चरित्र को ही सम्पन्न करना चाहिए। अच्छा, तो तुम बताओ कि तुमने क्या आश्चर्य की बात देखी?" श्रीपाल ने कहा।

तब उस बनजारे सरदार ने बताना आरम्भ किया—

"श्रीमान्! हम लोग अभी कुण्डलपुर से आ रहे हैं। यह नगरी यहाँ से कोई तीन-चार सौ कोस की दूरी पर होगी। वहाँ के राजा का नाम मकरकेतु तथा उनकी रानी का नाम कर्पूरतिलका है। उनके दो राजकुमार और एक राजकुमारी है। राजकुमारी का नाम है गुणसुन्दरी। श्रीमान्! अब मैं आपसे क्या बताऊँ कि वह राजकुमारी कैसी है। बस, यही समझ लीजिए कि वह यथानाम तथा-गुण ही है। यह गुणवान भी है और सुन्दरी है। वीणा तो वह इतनी मधुर बजाती है कि सुनने वाले सुनते ही रह जायँ। उस राजकुमारी ने यह प्रतिज्ञा कर रखी है कि जो भी व्यक्ति उससे अधिक मधुर वीणा बजाएगा वही उसका पति होगा। राजकुमारी की इस प्रतिज्ञा के कारण, श्रीमान! सारे

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

कुण्डलपुर में तथा आस-पास दिन-रात वीणा की झंकार ही सुनाई देती रहती है। जिसे देखो वही वीणा-वादन का अभ्यास करता दिखाई देता है। प्रत्येक वीणावादक यही सोचता है कि किसी प्रकार राजकुमारी का विवाह उसके साथ हो जाय। जिसके सिर पर देखो, बस यही धुन सवार है।"

इतना कहकर सरदार चुप हो गया। श्रीपाल ने कुछ क्षण विचार किया और फिर उस बनजारे को पर्याप्त पुरस्कार देकर विदा कर दिया।

घूमता-फिरता श्रीपाल राजमहल में लौट आया। किन्तु विश्राम के समय भी उसके मन में कुण्डलपुर की उस विचित्र राजकुमारी का ही विचार उठ रहा था। उसने निश्चय किया—कुण्डलपुर जाना चाहिए, और ऐसी गुणवती राजकुमारी को ब्याह कर लाना ही चाहिए।

किन्तु वीणावादन? उसने तो अब तक कभी वीणा-वादन का अभ्यास किया ही नहीं। तब इस समस्या का समाधान कैसे हो?

विचार करते-करते उसे नवपद के माहात्म्य तथा उसकी सिद्धि का ध्यान आया। उसने सोचा कि सिद्धचक्र की आराधना और उसके प्रभाव से तो सभी दुष्कर कार्य सहज हो जाते हैं, असंभव भी संभव बन जाता है। यह विचार आते ही उसने सिद्धचक्र की आराधना आरम्भ कर दी। शीघ्र ही विमलेश्वर नामक एक देव प्रकट हुए। वे सौन्दर्य लोक के निवासी थे। सिद्धचक्र के अधिष्ठाता थे।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

उन्होंने एक सुन्दर मणिमाला श्रीपाल को प्रदान करते हुए कहा—

"इस माला को धारण करने वाला पुरुष आकाशमार्ग से चाहे जहाँ जा सकता है, चाहे जैसा स्वरूप लोगों को दिखा सकता है, विष के प्रभाव से मुक्त रहता है। आपको जब भी अन्य कोई आवश्यकता हो तो नवपद का ध्यान कीजिए, मैं तत्काल आपकी सेवा में उपस्थित हो जाऊंगा।"

इतना कहकर देव अन्तर्धान हो गये। श्रीपाल निश्चिन्त होकर सो गया।

प्रातःकाल उठकर दैनिक कार्यों से निवृत्त होकर श्रीपाल ने कुण्डलपुर जाने की इच्छा की। उसी क्षण वह मणिमाला के अद्भुत प्रभाव से कुण्डलपुर के नगरद्वार के बाहर जा पहुँचा। उसने देखा—द्वारपाल भी वीणावादन में तल्लीन है। चरवाहे अपने पशुओं को चरागाहों की ओर ले जा रहे हैं और मस्ती से वीणा बजाते जा रहे हैं। चारों दिशाओं से वीणा की झंकार ही सुनाई दे रही है।

वह बनजारा सरदार झूठ नहीं कहता था, कुछ आनन्द तो यहाँ अवश्य आयेगा—यह सोचकर श्रीपाल ने नगर द्वार में प्रवेश किया।

किन्तु इसी के साथ उसने एक बात और भी की। उसने अपना रूप एकदम विद्रूप बना लिया—काली, डरावनी-सी शक्ल, बड़े-बड़े दाँत बाहर निकले हुए, छोटे-छोटे

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

हाथ, पीठ पर बड़ा-सा कूबड़—कुल मिलाकर बड़ा ही हास्यास्पद स्वरूप।

इस रूप को लेकर श्रीपाल राजपथ पर आगे बढ़ा। बड़े-बड़े श्रेष्ठी अपनी-अपनी रत्न-माणिक्यों की दूकानों पर ठाठ से बैठे वीणा बजा रहे थे। ग्राहक की किसी को कोई चिन्ता नहीं थी। यह देखकर श्रीपाल को मन ही मन बड़ी हँसी आई।

किन्तु हँसने वाला वह अकेला ही नहीं था। स्वयं उसके उस विद्रूप वामन रूप को देख-देखकर वहाँ के नागरिक भी जी भरकर हँस रहे थे। एक आध मसखरे ने पूछ भी लिया—

"कहिए वामनावतार जी! किस देश से पदार्पण हुआ? किस उद्देश्य से इस नगरी पर कृपा की?"

श्रीपाल मन ही मन मगन था। उत्तर दे दिया—

"भाई! बड़ी दूर से राजकुमारीजी की प्रशंसा सुनकर आये हैं। किसी गायनाचार्य से वीणा बजाना सीखेंगे और फिर राजकुमारी जी को ब्याह कर घर बसायेंगे।"

यह उत्तर सुनकर सुनने वालों की हँसी क्या फूटी कि थमने का नाम ही न ले। हँसने वाले पेट पकड़-पकड़कर हँसे। श्रीपाल ने उनके हास्य का कुछ भी बुरा न माना। बड़े भोलेपन से किसी से पूछा—

"भैया! यहाँ इस नगरी में सबसे बड़े गायनाचार्य

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

कौन है ? जरा उनका अता-पता हमें आप बता देते तो बड़ी कृपा होती। हमें जरा जल्दी है..... ।"

"हाँ, हाँ, वामनावतारजी ! जल्दी का तो काम ही है। राजकुमारीजी की उम्र चाँद-सी बढ़ती जा रही है और कोई सुयोग्य वीणावादक पहुँच नहीं रहा है। किन्तु अब चिन्ता नहीं। आपका पदार्पण हो गया है। पधारो पधारो—वह देखो, उस मोड़ पर जो आकाश को छूती हवेली दीख रही है न, वह लाल वाली, बस, वही है गायनाचार्यजी की हवेली। पधारो प्रभु, शीघ्र पधारो !"

इकट्ठी हो गई भीड़ में से एक उन्मुक्त अट्टहास उठा।

लोगों को पागलों की तरह हँसते छोड़कर श्रीपाल उस लाल हवेली की ओर चल पड़ा।

सच्चे कलाकारों के द्वार कभी किसी के लिए बन्द नहीं होते। श्रीपाल को भी, उसके इस विचित्र रूप को देखकर भी, किसी सेवक ने रोका-टोका नहीं। वह सीधा धड़धड़ाता हुआ उस विशाल कक्ष में जा पहुँचा जहाँ मखमली गलीचे पर आसीन गायनाचार्यजी सैकड़ों वीणाप्रेमी युवकों को वीणावादन की शिक्षा प्रदान कर रहे थे।

श्रीपाल ने गायनाचार्यजी को साष्टांग दंडवत प्रणाम किया। एक अति मूल्यवान रत्नहार उन्हें भेंट किया। आचार्य ने आशीष दी—

"आयुष्मान भव ! कहो वत्स, कैसे आना हुआ ?

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

क्या तुम भी इन लोगों की भांति मुझसे शिक्षा ग्रहण करने आए हो ?"

"धन्य हैं आप आचार्यवर ! आप तो त्रिकालज्ञ प्रतीत होते हैं। आपने मेरे मन की बात बिना कहे ही जान ली। जी हाँ, प्रभु ! आपकी कृपा हो तो मैं भी आपसे वीणावादन सीखना चाहता हूँ।"

श्रीपाल ने यह उत्तर दिया और इस उत्तर को सुन कर आचार्य प्रसन्न हो गए। कितना भी बड़ा आदमी हो, अपनी प्रशंसा अन्य के मुख से सुनकर उसे प्रसन्नता अवश्य होती है। फिर वह हार भी तो मूल्यवान था। अस्तु, आचार्य ने कहा—

"ठीक है ! वत्स, शुभ घड़ी है उस कोने में रखी वह वीणा उठा लाओ।"

श्रीपाल ने आचार्य द्वारा संकेतित वीणा उठाई और आसन बाँधकर उनके सामने जा डटा। आचार्य के निर्देशानुसार उसने एक दो तारों को छेड़ा ही था कि वे तार 'टन्न' की ध्वनि करते हुए टूट गये। यह देखकर वहाँ उपस्थित सभी युवक जो कि श्रीपाल को देखते ही, तथा उसकी बातें और उसका रूप देखकर आचार्य के भय से धीरे-धीरे मुस्कुरा रहे थे, अब खिलखिलाकर हँस पड़े।

किन्त स्वयं आचार्य गम्भीर ही रहे। उन्होंने एक कड़ी दृष्टि अपने सभी शिष्यों पर चारों ओर डाली। कक्ष में एक-दो क्षण के लिए सन्नाटा खिंच गया और फिर अनेक वीणाओं की झंकार पूर्ववत आने लगी।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सभी शिष्य अपने-अपने अभ्यास में मग्न हो गये। फिर भी बीच-बीच में वे कनखियों से श्रीपाल की ओर देखते जाते थे और मन ही मन हँसते जाते थे।

किन्तु श्रीपाल को उनकी हँसी की कोई चिन्ता नहीं थी। वह दत्तचित्त होकर वीणावादन का अभ्यास कर रहा था।

किन्तु पाठक समझ सकते हैं कि यह मात्र दिखावा ही था, सिद्धचक्र की कृपा से श्रीपाल को सहज ही वीणा-वादन की कला सिद्ध हो चुकी थी। वह केवल काल-यापन कर रहा था।

अभ्यास-क्रम इसी प्रकार चलता रहा।

और अन्त में एक दिन राजसभा जुड़ी। उस सभा में राजकुमारी से विवाह करने के इच्छुक अनेक धुरंधर वीणावादक अपनी-अपनी कला का प्रदर्शन करने वाले थे। निर्णायकों के रूप में उस समय आर्यावर्त्त में विद्य-मान श्रेष्ठतम आचार्य भी उपस्थित थे। दर्शकों और श्रोताओं की भीड़ भवन में समाती नहीं थी। सभी को यह जानने की जिज्ञासा थी कि इतनी गुणवती और रूपवती राजकुमारी किस भाग्यवान को प्राप्त होती है।

राजा मकरकेतु और रानी कर्पूरतिलका सिंहासन पर बैठे थे। राजकुमारी स्वयं भी अपनी वीणा सहित सभा में उपस्थित थी। एक सुन्दर पुष्पहार उसके समीप ही एक चन्दन की रत्नजड़ित चौकी पर स्वर्ण-थाल में रखा

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

हुआ था, जिसकी मन्द-मधुर सुगन्धि सारे सभा भवन में फैल रही थी।

श्रीपाल भी सभाभवन के द्वार पर जा पहुँचा। किन्तु आड़े-टेढ़े, ऊटपटांग विद्रूप वामनरूप को देखकर द्वारपाल ने उसे दूर से ही झिड़क दिया—

"रुको, रुको, वामनदेव ! इस समय भाग जाओ यहाँ से। यह कोई भिक्षा माँगने का अवसर नहीं है। जानते नहीं.....।"

द्वारपाल इतने शब्द ही बोल पाया था कि श्रीपाल ने उसके हाथ में एक जगमगाता हुआ हीरा रख दिया। उस हीरे का प्रभाव चामत्कारिक हुआ। द्वारपाल की भ्रष्ट बुद्धि क्षणमात्र में निर्मल हो गई और उसे इस सत्य के दर्शन हो गये कि मानव-मानव में भेद नहीं करना चाहिए। रूप तो अस्थिर है। स्थायी तो गुण ही हैं। और यह वामन चाहे असुन्दर दीखता हो किन्तु है गुणवान। अतः इसे प्रवेश देना चाहिये। यह विवेक ज्यों ही उस द्वारपाल की आत्मा में उस मूल्यवान हीरे के प्रभाव से जागृत हुआ कि उसने कहा—

"पधारो, पधारो, वामनदेव ! बाहर ही क्यों रुक गये ? भीतर पधारो। आज तो सभी नागरिकों को इस कला-प्रतियोगिता में खुला आमंत्रण है, पधारो।"

मन ही मन मुस्कुराता हुआ श्रीपाल सभाभवन में प्रविष्ट हुआ। ज्यों-ज्यों उपस्थित जन-समुदाय की दृष्टि उस

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पर पड़ती गई त्यों-त्यों हँसी की हिलोरें सभाभवन में उठने लगीं। किन्तु राजा के भय से, उनके सम्मान का विचार करके लोग मुक्त-रूप से हँस नहीं सके। बस, मुँह छिपा-छिपाकर मुस्कुराते रहे।

राजकुमारी गुणसुन्दरी की दृष्टि भी श्रीपाल पर पड़ी।

किन्तु विद्या के प्रभाव से श्रीपाल ने राजकुमारी को अपना वास्तविक रूप ही दिखाया—इतना भव्य, इतना सुन्दर, कि कामदेव भी उस रूप रूप को देखकर एक बार तो विस्मित रह जाय।

राजकुमारी उस रूप को देखकर मुग्ध हो गई। टक-टकी बाँधकर कुछ क्षण वह अपलक दृष्टि से श्रीपाल को देखती ही रह गई। मन ही मन वह प्रार्थना भी करने लगी कि यही, बस यही युवक उसके योग्य है। काश, वह भी वीणावादन करे और ऐसी वीणा बजाये कि उस वीणा के नैसर्गिक राग जीवन-पर्यन्त उसकी आत्मा में बजते रहें—बजते ही रहें।

एक तरफ उपस्थित जन-समुदाय श्रीपाल के प्रकट असुन्दर रूप को देख-देखकर हँस रहा था, अपनी हँसी रोक नहीं पा रहा था, और दूसरी ओर राजकुमारी उसके वास्तविक अनुपम रूप को देखकर अपनी सुध-बुध ही बिसार रही थी।

विचित्र संयोग और स्थिति थी।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

प्रतियोगिता आरम्भ हुई। अनेकों उत्साही, गुणी, आशावादी युवकों ने वीणावादन किया। बहुत अच्छी वीणा बजाई गई उस दिन राजा मकरकेतु की उस राज-सभा में। एक से एक बढ़कर राग-रागनियाँ छिड़ीं। वातावरण संगीत के प्रभाव से आनन्दमय हो गया। श्रोता मुग्ध हो गये। 'धन्य-धन्य' की ध्वनि बार-बार उठकर सभाभवन और आकशमण्डल को गुंजारित करने लगी।

परम विमोहन तथा चरम आनन्द के ऐसे दुर्लभ क्षण शताब्दियों में कभी-कभी ही आते हैं।

किन्तु इस परम-चरम आनन्द की भी उत्तमोत्तम, शीर्ष घड़ी तो अभी आनी बाकी ही थी।

श्रीपाल का वीणावादन अभी शेष था।

अन्त में वह घड़ी भी आई।

चूंकि प्रत्येक व्यक्ति को अपनी कला प्रदर्शित करने का खुला अवसर राजा मकरकेतु की ओर से प्रदान किया गया था, अतः श्रीपाल के उस छद्म रूप को, जो कि अत्यन्त असुन्दर था, देखते हुए भी उसे रोका तो जा नहीं सकता था। अतः उसे भी वादन करने हेत एक वीणा प्रदान की गई।

श्रीपाल ने वह वीणा अपने हाथ में ली, उस पर एक दृष्टि डाली और मुस्कुराते हुए कहा—

"उपस्थित निर्णायक आचार्यगण ! यह वीणा अशुद्ध है। देखिये, इसकी तूंबी में दोष है।"

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

निर्णायकों ने, अन्य आचार्यों ने पहिले तो उपेक्षापूर्वक श्रीपाल को तथा उस वीणा को देखा और फिर वे स्तम्भित रह गये। श्रीपाल का कथन सही था। बड़े-बड़े कलाकारों—आचार्यों की दृष्टि की पकड़ में भी जो सूक्ष्म दोष नहीं आ सका था, उसे श्रीपाल ने एक सरसरी दृष्टि से ही पकड़ लिया था।

अब किसी व्यक्ति का साहस नहीं था कि श्रीपाल के उस असुन्दर रूप को देखकर हँसने की धृष्टता कर सके। व्यक्ति के गुणों के सामने उसके शरीर की असुन्दरता महत्त्वहीन हो जाया करती है।

श्रीपाल को तत्काल दूसरी वीणा प्रदान की गई। वह वीणा शुद्ध थी। श्रीपाल ने आसन जमाया, आँख मूँदकर एकाग्र चित्त से नवपद का ध्यान किया और वीणा के तार छेड़ दिये.....।

और फिर उन तारों से जो स्वर्गीय झंकार निकाली उसे सुनकर वहाँ उपस्थित जन-समुदाय तो आत्मविभोर हो ही गया, स्वर्ग के देवता भी मुग्ध होकर उस अद्‌भुत संगीत को सुनने लगे।

श्रीपाल की वीणा बजती रही, वातावरण में सत्, चित्त और आनन्द की वर्षा होती रही तथा समय व्यतीत होता रहा।

कितना काल बीता, किसी को होश नहीं रहा।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अन्त में अत्यन्त मधुर मींड़ों तथा एक अन्तिम सूक्ष्म झनकार के साथ श्रीपाल ने वादन समाप्त किया।

उपस्थित मानव-मेदिनी को धीरे-धीरे होश लौटा।

निर्णायकों का कार्य सरल हो गया। अथवा यह भी कहा जाय तो गलत नहीं होगा कि निर्णायकों को कोई निर्णय देना ही नहीं पड़ा। संज्ञा लौटने पर जन-समुदाय एक स्वर में 'धन्य-धन्य' पुकार उठा। 'अद्भुत', 'स्वर्गीय', 'अतुलनीय', 'अनुपम' शब्दों से सभाभवन गूंज उठा।

और फिर अपने आसन से उठी राजकुमारी गुण-सुन्दरी। उसने वह पुष्पहार अपने कमल जैसे सुन्दर और कोमल हाथों में लिया, हंस जैसी मन्द गति से वह आगे बढ़ी और सकुचाते, शरमाते, किन्तु आत्मिक आनन्द से परिपूर्ण हृदय से वह पुष्पहार—वह वरमाला—उसने श्रीपाल के गले में पहना दी। गुणसुन्दरी श्रीपाल के वास्तविक रूप को निहार रही थी और अपने सौभाग्य के सुख में डूबी हुई थी।

किन्तु शेष उपस्थित व्यक्ति श्रीपाल के अद्भुत वीणावादन से तो परम प्रसन्न और संतुष्ट थे, जिनमें स्वयं राजा मकरकेतु तथा रानी कर्पूरतिलका भी सम्मिलित थीं, लेकिन श्रीपाल के उस रूप को देख-देखकर उन सभी के मन में एक विषाद भी छाया हुआ था—हाय! ऐसी अद्भुत कला और.....और यह रूप!

अब श्रीपाल ने लोगों को अधिक विस्मय तथा दुःख में

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

डाले रखना उचित नहीं समझा। रूप की तुलना में गुण की श्रेष्ठता सिद्ध हो ही चुकी थी। अतः वह क्षणमात्र में अपने वास्तविक परम शोभन रूप में आ गया। उसके इस देवोपम सच्चे रूप को देखकर और वास्तविकता को जान कर सभी लोगों के चित्त प्रसन्न हो गये। राजकुमारी के भाग्य पर जो विषाद की छाया उन लोगों के मन में घिरी हुई थी वह धुल गई और चारों ओर आनन्द का सागर लहराने लगा।

राजा मकरकेतु ने उठकर—नहीं, दौड़कर, श्रीपाल को अपने आलिंगन में बाँध लिया। □

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

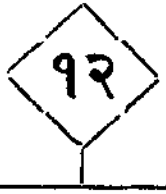

कुण्डलपुर के नागरिकों ने श्रीपाल जैसा महापुरुष कभी देखा ही नहीं था। वह उसे एक देवता के समान मानने लगे थे। श्रीपाल भी यदा-कदा नगर-भ्रमण के लिए निकाला करता था। इस प्रकार अपने निश्चय के विरुद्ध उसे कुण्डलपुरवासियों के स्नेह तथा आग्रह से विवश होकर कुछ अधिक समय ही वहाँ व्यतीत करना पड़ा। सज्जन पुरुष किसी के प्रेम को ठुकराया नहीं करते।

एक दिन घूमते-घामते श्रीपाल को एक यात्री ने बताया—

"यहाँ से लगभग तीन सौ योजन की दूरी पर कंचनपुर नामक नगरी है। वहाँ के राजा का नाम वज्रसेन तथा उसकी रानी का नाम कंचनमाला है। उनकी एक पुत्री, जिसका नाम त्रैलोक्यसुन्दरी है, वह अब विवाह के योग्य है तथा अपने नाम के अनुरूप वह त्रिलोकसुन्दरी ही है। श्रीमन्! मैंने उस राजकुमारी को स्वयं देखा है और अब आपको देखकर मेरा मन कहता है कि वह राजकुमारी आपके ही योग्य है।"

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

यात्री की बात सुनकर श्रीपाल हँस पड़ा और बोला—"क्यों भाई ! मुझ में ऐसी क्या विशेष बात तुमने देखी ? इस देश में अनेकों राजा और राजकुमार हैं। एक से बढ़कर एक विद्वान और वीर भी उनमें होंगे ही। किसी न किसी का विवाह उस राजकुमारी से हो ही जायगा।"

"सो तो जो जिसके भाग्य में होगा, वही होगा महोदय !"—यात्री ने कुछ निराश होते हुए कहा—"किन्तु आप दोनों को देखने के बाद मेरा मन कहता है कि आप दोनों की जोड़ी यदि बन सकती तो ऐसी जोड़ी बनती कि बस। किन्तु मैं भूल गया, अब तो समय भी नहीं है।"

श्रीपाल ने पूछा—"समय ? समय क्यों नहीं है ?"

"राजा वज्रसेन ने राजकुमारी का स्वयंवार रचा है। इसके लिए शुभ दिन निश्चित किया है अषाढ़ शुक्ला पंचमी का। और यह पंचमी तो कल ही है। नगरी बहुत दूर है।"

यह जानने के बाद श्रीपाल ने उस यात्री से कुछ और इधर-उधर की बातें कीं। उसे पुरस्कार दिया और कुछ सोचता हुआ वह राजमहल को लौट आया।

जाने क्यों उसे रात में बहुत देर तक नींद नहीं आई। बार-बार दिन में मिले उस यात्री की और उसकी कही बातों की याद उसे आती रही। उसका मन अन्त में यही कह उठा कि उसे कंचनपुर के स्वयंवर में जाना तो चाहिए ही। कुछ कौतुक ही रहेगा। अनेक राजाओं और राजकुमारों से एक ही स्थान पर भेंट हो जायगी।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

यह विचार निश्चित कर श्रीपाल चैन से सो गया।

प्रातःकाल होने पर उसने अपनी नववधू गुणसुन्दरी से कहा—

"प्रिये ! तुमसे दूर जाने का मन तो नहीं होता, किन्तु कुछ समय के लिए मैं कंचनपुर जा रहा हूँ।"

"नाथ ! आपकी इच्छा ही मेरी इच्छा है। किन्तु अचानक ही कंचनपुर जाने का क्या प्रयोजन आ गया ? क्या कंचनपुर की किसी कामिनी ने निमंत्रित किया है आपको ?"—हँसते हुए गुणसुन्दरी ने पूछा।

श्रीपाल ने भी हँसते हुए ही उत्तर दिया—

"कुछ-कुछ ऐसा ही समझ लो। वहाँ की राजकुमारी का स्वयंवर है आज। सोचा, जरा धूमधाम देख ही आऊँ। अनेक राजा-राजकुमार वहाँ पहुँचे ही होंगे। उनसे मिलना हो जायगा। देश की वर्तमान राजनैतिक स्थिति का कुछ अनुमान इससे लग सकेगा। आखिर मुझे भी अब अपने प्रदेश लौटना है, अपने राज्य को प्राप्त करना है और अपनी प्रजा के कष्टों को दूर करना है।"

"ठीक है नाथ ! आप जैसा उचित समझें वैसा ही करें। किन्तु अपनी इस दासी को भूल न जायँ.....।"

"कैसी बातें करती हो ? क्या श्रीपाल कभी ऐसा कर सकता है ? अपने आत्मीयजन को बिसरा देना तो मैं पाप ही समझता हूँ। तुम निश्चिन्त रहो। मैं शीघ्र ही

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

लौटूँगा, अथवा तुम्हें ही वहाँ बुलवा लूँगा—जैसी भी परिस्थिति हो। अच्छा, अब मुझे विदा करो।"

गुणसुन्दरी ने श्रीपाल के भाल पर प्रेमपूर्वक मंगल-तिलक लगा दिया और उसे प्रेमभीनी विदा दी।

देवप्रदत्त उस मणिमाला के प्रभाव से श्रीपाल कुछ पलों में ही कंचनपुर पहुँच गया। नगरी की शोभा देखते हुए वह धीरे-धीरे स्वयंवर-स्थल पर जा पहुँचा। वह स्थल बड़े परिश्रम तथा सावधानी से सजाया-संवारा गया था। वातावरण में पवित्रता का आभास होता था। अनेकों नरेश अथवा राजकुमार वहाँ पहुँच चुके थे तथा एक-एक आसन पर वे विराजमान थे। उन आसनों के ऊपर सुन्दर छाया करने के लिए स्वर्ण तथा रजत के तारों से कढ़े हुए छत्र थे। वे छत्र सुदृढ स्वर्ण स्तम्भों के सहारे टिके थे। उन स्तम्भों पर एक-एक रत्नजटित सुशोभन पुतली भी बनी हुई थी।

धूमधाम मची हुई थी। अनेक सेवक उपस्थित अतिथियों के स्वागत-सत्कार में लगे हुए थे। स्वयंवर समारोह आरम्भ होने ही वाला था।

श्रीपाल ठीक समय पर पहुँच गया था। उसने समारोह स्थल में धीर गति से प्रवेश किया और एक खाली आसन पर वह भी जा बैठा। आसपास बैठे राजाओं ने श्रीपाल की ओर देखा, उसके मुख-कमल से प्रस्फुटित होती

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

हुई अद्भुत कान्ति को देखा और उनके हृदय कुछ बैठ गये। वे सोचने लगे—ऐसे सुन्दर और शरीर से बलिष्ठ प्रतीत होते हुए इस व्यक्ति को छोड़कर क्या राजकुमारी उनमें से किसी को भी वरण कर सकेगी? कौन है यह युवक? कहाँ से आ टपका? आसपास के क्षेत्रों में कभी किसी ने इसे देखा नहीं, कोई चर्चा इसकी कभी सुनी नहीं गई। इसके नाम तक का किसी को पता नहीं—आखिर देवताओं के भी रूप को निस्तेज कर देने वाला यह विचित्र पुरुष आ कहाँ से गया? क्या कोई आकाशी देव ही मनुष्य का रूप धारण करके यहाँ आ गया है?

इसी प्रकार की खुसर-पुसर उन राजाओं में होने लगी जिनकी दृष्टि श्रीपाल पर पड़ गई थी। और कुछ ही देर बाद तो यह चर्चा सारे स्वयंवर-मंडप में धीमे-धीमे स्वरों में होने लगी—कौन है, कौन है—कौन हो सकता है यह तेजस्वी युवक? कहाँ का राजकुमार है? किसी ने उसके विषय से कछ सुना है? किसी ने इसे कभी देखा है?

यह धीमी-धीमी चर्चा मंडप में हो रही थी। सभी विस्मित थे और कछ-कुछ निराश हो चले थे। किन्तु श्रीपाल मौन, मन्द-मन्द मुस्कुराता हुआ शान्त बैठा था, जैसे उसे किसी बात से कोई प्रयोजन ही नहीं हो और वह किसी तमाशे को देखने के लिए ही वहाँ आ बैठा हो तथा तमाशा प्रारम्भ होने की प्रतीक्षा कर रहा हो।

उसके सुन्दर रूप और बलिष्ठ देह को देख-देखकर

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अन्य राजाओं के कलेजे बैठे जा रहे थे, हृदय पर साँप लोट रहे थे, किन्तु श्रीपाल इसमें क्या करें? वह तो निश्चिन्त, मगन मन बैठा-बैठा सुसज्जित स्वयंवर-मंडप की शोभा को निहार रहा था।

उसी समय शंखनाद हुआ। स्वयंवर मंडप में शान्ति छा गई। यह शंखनाद राजकुमारी के मंडप में पदार्पण का संकेत था।

राजद्वार में से निकलकर राजकुमारी अपनी सखी-सहेलियों तथा दासियों के साथ मंडप में इस प्रकार प्रविष्ट हुई मानो किसी घने बादल के बीच से अचानक चाँद निकल आया हो। राजकुमारी के हाथों में सुगंधित कमल-पुष्पों की सुन्दर वरमाला सुशोभित थी। यही वह माला थी जो किसी को जीवनभर के लिए भाग्यवान बना देने वाली थी—किन्तु किसको?

सभी राजा-महाराजा उद्ग्रीव होकर प्रतीक्षा करने लगे। सभी की एकटक दृष्टि राजकुमारी के चन्द्रमुख पर गड़ी हुई थी। उनके मन में आशा-निराशा का द्वंद्व चल रहा था। स्वयं को सर्वश्रेष्ठ सिद्ध करने के लिए सभी राजा ऊँचे-नीचे हो रहे थे। कोई अपने सुनहरे वस्त्रों को ठीक कर रहा था, कोई अपने केश सँवार रहा था और कोई मूँछें मरोड़ रहा था।

केवल श्रीपाल मगन-मन शान्त बैठा हुआ था। उसने एक बार राजकुमारी को मंडप में प्रविष्ट होते हुए देखा

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

और फिर वह बड़ा आनन्द लेता हुआ उन सभी राजाओं की भिन्न-भिन्न चेष्टाओं और मुद्राओं को देखने में लगा था। राजकुमारी की ओर से उसका ध्यान हट गया था।

किन्तु राजकुमारी त्रैलोक्यसुन्दरी ने जब मंडप में प्रवेश किया था तब उसने एक ही क्षण में एक ही सरसरी दृष्टि में वहाँ उपस्थित सभी नरेशों का मूल्यांकन अपने मन में कर लिया था और उसकी चपल दृष्टि श्रीपाल के मुख पर कुछ पलों के लिए स्थिर हो गई थी।

फिर उसने अपने नेत्र झुका लिये।

उसकी सखियों ने उसे आगे बढ़ने के लिए संकेत किया। वह धीमी-धीमी गज-गति से आगे बढ़ी। एक-एक नरेश के समीप से वह निकलती गई। जिस नरेश के सामने वह पहुँचती उस नरेश का परिचय तथा गुणगान उस नरेश के साथ आये पण्डित द्वारा किया जाता। राजकुमारी बेमन से उसे सुनती और आगे बढ़ जाती।

इस प्रकार यह क्रम चलता रहा, राजकुमारी आगे बढ़ती रही।

जिन-जिन राजाओं को छोड़कर राजकुमारी आगे बढ़ती जाती थी, उनके मुख एकदम निस्तेज हो जाते थे, जैसे कोई प्रदीप्त दीपक एकाएक बुझ जाय। निराशा का गहन, काला अंधकार उनके मुखमंडल पर छा जाता था —स्याही पुत जाती थी।

जिस नरेश के सामने राजकुमारी पहुँचती, वह अपने

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

मन में आशा सँजाए अकड़कर बैठ जाता और अपनी प्रशस्ति का आनन्द स्वयं लेने लगता किन्तु अन्त वही होता—निराशा।

इस प्रकार चलते-चलते अन्त में राजकुमारी श्रीपाल के सामने जा पहुँची। कमल-पत्रों के समान कोमल अपनी पलकें उठाकर उसने श्रीपाल की ओर देखा। चार नेत्र एक-दूसरे से पलभर मूक सम्भाषण में मग्न हुए और फिर कुछ लजाकर राजकुमारी ने अपनी पलकें झुका लीं। वह वहीं पर स्थिर खड़ी रहकर श्रीपाल की प्रशस्ति सुनाये जाने की प्रतीक्षा करने लगी।

किन्तु श्रीपाल की प्रशस्ति करता कौन ? वह मनमौजी महापुरुष तो वहाँ अकेला ही चला आया था।

राजकुमारी प्रतीक्षा कर ही रही थी कि श्रीपाल के सिर के ऊपर लगे हुए सुवर्ण छत्र के दण्ड में स्थिर पुतली बोल उठी—

"राजकुमारी त्रैलोक्यसुन्दरी ! तुम्हारा परम सौभाग्य तुम्हारे सम्मुख बैठा है। झिझको नहीं। देव तुमसे प्रसन्न हैं। वरमाला श्रीपाल के गले में डालकर अपने सौभाग्य को अमर बना लो।'

उस स्वर्ण-पुतली द्वारा कहे गये इन शब्दों को सुनकर सारी सभा स्तम्भित रह गई। राजकुमारी ने भी चौंककर एक बार उस पुतली को देखा, दूसरे पल श्रीपाल को पुनः देखा और वरमाला उसने श्रीपाल के कंठ में पहना दी।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अब तो उस राजसभा में भूचाल-सा आ गया। बड़ी-बड़ी मूँछों वाले अनेक राजा एक युवक के सामने परास्त हो गये थे। वे स्वयं को अपमानित अनुभव कर रहे थे कि राजकुमारी ने उन सब बड़े-बड़े, यशस्वी राजाओं को छोड़कर एक अज्ञात कुल-शील वाले युवक को अपना लिया था।

क्रोध और अपमान के दंश से दग्ध उन राजाओं ने भरी सभा में अपनी-अपनी तलवारें खींच लीं। वे श्रीपाल को घेरकर चिल्लाने-चीखने लगे—

"यह हमारा घोर अपमान है। इसे सहन नहीं किया जा सकता। हम राजकुमारी का विवाह इस अनजान युवक के साथ नहीं होने देंगे। युवक! तुम अपनी तलवार निकालो और हम से युद्ध करो।"

श्रीपाल आनन्द से अपने आसन पर बैठा हुआ था और मुस्कुरा रहा था। जब शोरगुल अधिक बढ़ गया और उसके प्रतिद्वन्द्वी राजा उसके अधिक समीप आकर अपनी तलवारें चमकाने लगे, तब वह उठा, उसने अपनी तलवार म्यान से बाहर निकाली और कहा—

"उपस्थित नरेशो! मैं समझता हूँ कि आप लोग अनधिकार चेष्टा कर रहे हैं। यह स्वयंवर है। राजकुमारी ने अपनी इच्छा से मुझे अपना वर चुना है। अब उसके सम्मान की रक्षा करना मेरा कर्त्तव्य है। अतः मैं एक बार आप सबसे अनुरोध करता हूँ कि आप लोग शान्त होकर

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

वस्तुस्थिति को स्वीकारें और अपने-अपने घर पधारें। अन्यथा.....।"

"अन्यथा तुम क्या कर लोगे ? जरा कहो तो ? अभी तुम्हारे दूध के दाँत भी नहीं गिरे। क्या तुम हम लोगों से युद्ध करोगे ?"—बहुत से नरेश एक साथ कह उठे।

श्रीपाल ने पुनः शान्तिपूर्वक ही कहा—

"निरर्थक युद्ध में मुझे विश्वास नहीं है। व्यर्थ ही रक्त-पात होता है। हिंसा होती है। मैं अहिंसक व्यक्ति हूँ। इसीलिए आप सबसे कह रहा हूँ कि आप लोग शान्त हो जायँ।"

"शान्ति-शान्ति चिल्लाने वाले कापुरुष हुआ करते हैं। तुम भी उन्हीं कापुरुषों में से हो क्या ? युद्ध करते हुए भय लगता है क्या ?"—एक राजा कुछ आगे बढ़कर बोला।

तब श्रीपाल ने अन्तिम चेतावनी देते हुए कहा—

"श्रीपाल को कापुरुष कहने वाले व्यक्ति का सिर उसके धड़ पर अधिक समय तक नहीं टिकता। मैं आप सबको चेतावनी देता हूँ.....।"

"अरे बड़ा आया है हमें चेतावनी देने वाला" कहते हुए कुछ नरेश श्रीपाल पर तलवारों का वार करने के लिए टूट पड़े।

सावधान श्रीपाल ने उन लोगों के उस प्रचण्ड वार को बड़ी कुशलता और फुर्ती से बचा लिया और विवश होकर

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अपनी भयंकर तलवार इतनी तीव्र गति से चलाई कि एक ही झपाटे में दो-चार नरेश आहत होकर भूमि पर लोट लगाने लगे।

श्रीपाल के इस प्रताप को देखकर शेष जो भी नरेश कुढ़ रहे थे और भीपाल से लड़ने के लिए कुलबुला रहे थे वे एक-एक करके सभामंडप के द्वार की ओर पीछे हटने लगे। ऐसा लगने लगा कि जैसे मंडप छोड़कर और श्रीपाल की तलवार की छाया से बचकर निकल जाने की उनमें होड़ जैसी लग गई हो।

देखते-देखते ही वह स्वयंवर-स्थल सभी आगन्तुक नरेशों से खाली हो गया। अपनी-अपनी तलवार म्यानों में करके, हाथ मलते हुए वे सभी वहाँ से खिसक चुके थे।

राजा वज्रसेन अब अपने सेवकों के साथ आगे बढ़े। उन्होंने श्रीपाल का सत्कार किया और प्रेमपूर्वक उसके कन्धे पर हाथ रखकर वे उसे राजमहल में ले गये।

राजकुमारी त्रैलोक्यसुन्दरी भी अपनी प्रिय सहेलियों से घिरी धीरे-धीरे, श्रीपाल के पीछे-पीछे ही राजमहल में चली गई।

शुभ घड़ी में विवाह सानन्द सम्पन्न हुआ और श्रीपाल सुखपूर्वक कुछ समय के लिए कंचनपुर में ही ठहर गया।

उस समय श्रीपाल और त्रैलोक्यसुन्दरी के दिन कंचन के और रातें चाँदी की बन गई थीं। □

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

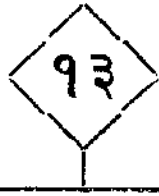

पूर्वजन्मों में किये हुए पुण्यकर्मों के प्रभाव से अभी श्रीपाल को अपनी जीवन-संगिनियों के रूप में कुछ और ऐसे श्रेष्ठ नारी-रत्न प्राप्त होने थे जोकि उसके जीवन में अमृत का सिंचन कर सकें।

संयोग स्वत: ही जुड़ते चले जा रहे थे।

एक दिन श्रीपाल की एक प्रवासी से अचानक भेंट हो गई। सदा विचरण करते रहने वाले उस प्रवासी ने श्रीपाल को बताया—

"यहाँ से कुछ ही दूरी पर दलपत्तन नामक एक नगर है। वह नगर तो दर्शनीय है ही, वहाँ की राजकुमारी भी अपनी शोभा और सौन्दर्य में निराली है। शोभा और सौन्दर्य ही नहीं, गुणों में भी वह किसी से कम नहीं है।"

इतना सुनकर श्रीपाल ने उस प्रवासी से पूछा—

"यह सब ठीक होगा, किन्तु तुम किस उद्देश्य से मुझे यह बता रहे हो?"

"श्रीमान्! मैं प्रवासी ठहरा। नये-नये स्थानों पर

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

भ्रमण करना और इस अद्भुत सृष्टि के सौन्दर्य को निहार कर आनन्द लेना ही मेरा उद्देश्य है। आपको मैंने दल-पत्तन की राजकुमारी के विषय में जो बताया, उसमें मेरा अपना क्या उद्देश्य हो सकता है ? मैंने तो यह बात आपको इसी दृष्टिकोण से कही है कि उस गुणवती और सुन्दरी राजकुमारी को यदि आपके समान गुणवान और प्रतापी पति प्राप्त हो जाय तो स्वर्ण और सुहागे का संयोग हो जाय।"

"लेकिन उस राजकुमारी के माता-पिता क्या कर रहे हैं ? अपनी पुत्री के लिए वे किसी उपयुक्त वर की खोज क्या कर नहीं रहे हैं ?"

"कर तो क्यों नहीं रहे हैं, श्रीमान् ! अवश्य कर रहे हैं। आकाश-पाताल एक कर रहे हैं, किन्तु राजकुमारी शृंगारसुन्दरी तथा उसकी पाँच सखियाँ जिनधर्म की आराधना करती हैं। वे विदुषी हैं। उन्होंने अपनी-अपनी समस्याएँ रच रखी हैं तथा यह निश्चय कर रखा है कि जो विद्वान व्यक्ति उन समस्याओं का सत्य उत्तर प्रदान करेगा उसे ही वे अपने पति के रूप में स्वीकार करेंगी, किसी अन्य को नहीं; चाहे वह कितना भी बड़ा राजा या सम्राट् हो।"—प्रवासी ने बताया।

"अच्छा तो ऐसी बात है। किन्तु महाशय यह तो कहो कि क्या कोई भी व्यक्ति अब तक राजकुमारी की समस्या का सही उत्तर नहीं दे पाया ?"—श्रीपाल ने पूछा।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

"यही तो रोना है श्रीमान् ! प्रतिदिन अनेक राजा-महाराजा चले आते हैं—किसी को अपने धन का, किसी को अपनी वीरता का, किसी को अपने विशाल राज्य का और किसी-किसी को अपने पांडित्य का भी गर्व होता है, किन्तु राजकुमारी तथा उसकी सखियों की समस्या का उत्तर किसी के पास नहीं होता। बस, इसी प्रकार दिन बीतते जा रहे हैं और राजकुमारी की आयु भी चन्द्रकला की भाँति बढ़ती जा रही है।"

इतना कहकर वह भावुक प्रवासी बोलते-बोलते रुक गया। ऐसा प्रतीत होता था जैसे वह स्वयं उस राजकुमारी का सगा हो और उसके विवाह की चिन्ता से दुखी हो।

श्रीपाल ने कुछ क्षण विचार किया और फिर कहा—

"महाशय ! आपने मुझे दुविधा में डाल दिया है। मुझे अपना देश छोड़कर प्रवास करते हुए काफी अधिक समय हो गया है, और अब मैं शीघ्र लौट जाना चाहता हूँ....।"

"लौटना तो होगा ही श्रीमान्!"--प्रवासी ने कुछ उदास स्वर में कहा—"किन्तु जाने क्यों मेरा मन कहता है कि उस अनुपम राजकुमारी का भविष्य आपके साथ जुड़ा हुआ है। मुझे आकाश के नक्षत्र बताते हैं कि आपका और राजकुमारी शृंगारसुन्दरी का शुभमिलन बड़ा मंगलमय होगा। बस, यदि आप थो। कष्ट उठा सकते.....।"

"अरे भाई ! कष्ट की तो कोई बात नहीं है। सोचता

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

था.....खैर, यह स्वर्ण-मुद्रिका तुम अपने पास रखो, प्रवासी हो, कभी काम आयेगी। अच्छा, अब मैं चलता हूँ, संयोग हुआ तो फिर कभी मिलेंगे।"

इतना कहकर और मूल्यवान मुद्रिका उस प्रवासी को देकर श्रीपाल कुछ सोचने-विचारते अपने महल की ओर लौट पड़ा।

वह प्रवासी भी प्रसन्न होकर दूसरी दिशा में चल पड़ा। उसके मन में आशा जागी थी कि श्रीपाल जैसा महापुरुष अवश्य ही राजकुमारी शृंगारसुन्दरी का उद्धार करेगा।

\+ \+ \+

श्रीपाल पर उस अज्ञात प्रवासी की भावभरी बातों का प्रभाव पड़ा था। उस प्रभाव ने धीरे-धीरे निश्चय का रूप ले लिया और दूसरे ही दिन श्रीपाल दलपत्तन के लिए अश्वारूढ़ होकर चल पड़ा।

दिन भर उसने अपने अश्व पर यात्रा की। बीच-बीच में किसी नद-निर्झर के किनारे उसने स्वयं भी विश्राम किया और अपने अश्व को भी विश्राम दिया। साँझ ढलते-ढलते उसे पश्चिम दिशा की ओर दलपत्तन नगर के ऊँचे-ऊँचे आवासों के शिखर दिखाई पड़ने लगे जो डूबते हुए सूर्य की किरणों में स्वर्णिम प्रतीत हो रहे थे।

श्रीपाल ने सोचा—नगर में प्रवेश करते-करते रात हो जायगी। रात को कहाँ ठहरा जायगा? किसी अनजाने

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

गृहस्थ को कष्ट देने की बजाय यदि यह रात्रि नगर से बाहर किसी मन्दिर या पान्थशाला में ही व्यतीत कर दे तो कैसा रहे ? यही ठीक होगा। ऐसा सोचकर श्रीपाल ने इधर-उधर दृष्टि दौड़ाई। कुछ ही आगे चलने पर उसे एक छोटी-सी पान्थशाला दिखाई दी।

श्रीपाल को वह छोटी-सी पान्थशाला जँच गई। वहाँ जाकर उसने अपने अश्व को एक वृक्ष से बाँध दिया और इधर-उधर देखने लगा कि कोई व्यक्ति वहाँ है अथवा नहीं। किन्तु उसे खोजना नहीं पड़ा। पान्थशाला की दक्षिण दिशा में एक छोटी-सी कोठरी थी। श्रीपाल ने देखा कि उस कोठरी में से निकलकर एक वृद्ध पुरुष लाठी के सहारे उसी की ओर आ रहा है।

समीप आ जाने पर उस वृद्ध ने कहा—

"महाभाग ! पधारिए। स्वागत है। आप तो कोई राजपुरुष प्रतीत होते हैं। नगर में नहीं पधारे ?"

वृद्ध की मीठी वाणी से श्रीपाल बहुत प्रसन्न हुआ। उसने उत्तर दिया—

"बाबा ! रात हो चुकी है। नगर-द्वार बन्द हो गये होंगे। मुझे कोई जल्दी तो है नहीं, अतः सोचा कि आज रैन-बसेरा इस सुन्दर, शान्त पान्थशाला में ही कर लूँ। क्या आप ही यहाँ की व्यवस्था देखते हैं ?"

'हाँ श्रीमान् ! पीढ़ियों से मेरे परिवार में यही काम चल रहा है। राजा की कृपा से दो जून की रोटियों

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

का जुगाड़ हो ही जाता है। किन्तु आप थके हुए होंगे। आपका अश्व भी थका होगा। आइये, पान्थशाला में भीतर पधारिए, विश्राम कीजिए। तब तक मैं आपके अश्व को दाना-पानी दिये देता हूं। आप भीतर इस बड़े कमरे में पधारिए। वहाँ सब व्यवस्था है। हवा भी वहाँ अच्छी आती है।"

इतना कहकर वृद्ध सेवक श्रीपाल के अश्व की देख-रेख में लग गया और श्रीपाल पान्थशाला के भीतर जाकर उस कमरे के वातायन में से बाहर के सुरम्य वातावरण को देखने लगा।

उसी समय श्रीपाल को दूर क्षितिज पर कुछ धूल उड़ती हुई दिखाई दी। उसने सोचा—कोई अन्य यात्री भी रात भर के आश्रय की खोज में इधर ही आ रहा है। थोड़ा ही देर में दौड़ते हुए अश्व की टापों की आवाज भी सुनाई पड़ने लगी और उसके कुछ ही पलों बाद एक अश्वारोही भी श्रीपाल के दृष्टि पथ में आ गया।

अश्वारोही का चेहरा अन्धकार के झुटपुटे के कारण ठीक दिखाई नहीं दे रहा था। किन्तु उसके तीव्रगामी अश्व की गति बताती थी कि वह बड़ी शीघ्रता से आ रहा था। देखते ही देखते वह उस पान्थशाला के द्वार तक आ पहुँचा, कूदकर अश्व से नीचे उतरा और कुछ सोचता-सा क्षणभर खड़ा रह गया।

श्रीपाल उत्सुकतावश अपने कमरे से बाहर निकल आया और उस नवागन्तुक अश्वारोही के समीप जा पहुँचा और बोला—

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

"क्या आप भी मेरे ही समान रैनबसेरा खोज रहे हैं ?"

यह सुनना था कि वह नवागन्तुक दौड़कर श्रीपाल से लिपट गया। क्षण-भर के लिए तो श्रीपाल चौंका, किन्तु फिर दूसरे ही क्षण प्रसन्नता के आवेग बोल पड़ा—

"अरे, तू है क्या शशांक ! भले आदमी, तू यहाँ कहाँ से आ टपका ? माताजी कैसी हैं ? स्वस्थ हैं न ? और मैना.....लेकिन तू यहाँ कैसे आया ? उन्हें अकेला छोड़कर आ गया ?"

आगन्तुक अश्वारोही शशांक था। श्रीपाल उसे अचानक वहाँ पाकर एकदम प्रसन्न और विस्मित हो गया था। उसने एक साथ ही अनेक प्रश्न उससे पूछ डाले थे।

शशांक ने अब उत्तर दिया—

"माताजी स्वस्थ एवं प्रसन्न हैं। भाभी भी सकुशल हैं। सब ठीक हैं और अब तुम्हारी प्रतीक्षा तीव्रता से कर रही हैं। तुम्हें खोजकर पकड़ लाने के लिए ही मुझे उन्होंने भेजा है, समझे ? बहुत भटक लिए। बहुत नारी-रत्न इकट्ठे कर लिए तुमने। अब चलो, अपने घर लौट चलो।"

"हाँ हाँ, शशांक ! अब तो घर लौटना ही है। अब तक शायद मैं वहाँ पहुँच भी गया होता और पूज्य माताजी के चरणों में शीश नवा चुका होता, किन्तु यह एक

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

उलझन और यहाँ खड़ी हो गई है। कल इससे निपट लें तो चलें।"

"अब फिर कौनसी नई उलझन खड़ी हो गई है ? क्या कोई सुन्दरी यहाँ भी श्रीपाल महाशय के नाम की माला जपती बैठी है।"

"हाँ ऽ ऽ ऽ ठीक-ठीक ऐसा ही तो नहीं, किन्तु बहुत कुछ ऐसा ही समझ लो। किन्तु पहले भीतर चलकर विश्राम कर। आ, अब तो बातें करने के लिए सारी रात शेष पड़ी है।"

वृद्ध चौकीदार ने श्रीपाल तथा शशांक के भोजनादि का सब प्रबन्ध कर दिया। अश्वों की देख-रेख भी कर ली और फिर वह सो गया। एक बूढ़े चौकीदार को जितनी निद्रा आ सकती है उतनी निद्रा का सुख उसने लिया ही होगा।

श्रीपाल और शशांक रात बहुत देर तक बातें करते रहे। श्रीपाल ने अपनी लम्बी यात्रा और उस यात्रा में घटित घटनाओं तथा अपने अनुभवों का खूब विस्तार से वर्णन किया तथा शशांक ने भी महारानी कमलप्रभा तथा मैनासुन्दरी के सभी कुशल-समाचार उसे बताये। अन्त में श्रीपाल ने कहा—

"शशांक ! मैं भी भटकता-भटकता अब खूब थक गया हूँ। माताजी के दर्शन करने के लिए जी अकुला रहा

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

है। बस, अब कल इस राजकुमारी की समस्या का समाधान और हो जाय तो फिर चल पड़ें।"

"चाहता तो मैं भी यही हूँ कि अब तनिक भी विलम्ब न हो। किन्तु ऐसा प्रतीत होता है कि आपको अभी एक छोटी-सी यात्रा और करनी पड़ेगी।"

"क्या मतलब? अब और कौनसी मुसीबत तू अपने साथ ले आया है?"

"मैं तो कोई मुसीबत आपके लिए क्यों लाने लगा? किन्तु आते समय रास्ते में मैंने जो कुछ सुना है, उसे सुन कर मेरा विचार है कि एक यात्रा आपको और करनी ही पड़ेगी।"

"अरे साफ-साफ बता क्या बात है?"

"मैंने सुना है कि इस कंचनपुर की उत्तर दिशा में कोल्लागपुर नामक एक नगर है। वहाँ पुरन्दर राजा की पुत्री जयसुन्दरी हठ ठाने बैठी है कि जो वीर पुरुष 'राधा-वेध' करेगा, उसी से वह विवाह करेगी अन्यथा वह आजन्म कुमारी ही रह जायगी।"

"तो इसमें मुझे क्या करना है? मैं तो अब तेरे साथ घर लौटना चाहता हूँ। शीघ्र से शीघ्र। कल ही। राजकुमारी जयसुन्दरी को राजावेध करके विजित करने वाले अनेक वीर मिल जायेंगे.....।"

"नहीं मिल रहे हैं, यही तो रोना है। अनेकों अहंकारी

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

और उत्साही वीरवर प्रयत्न कर चुके और निराश होकर लौट गये। राधा-वेध किसी से हुआ नहीं और राजकुमारी कुमारी ही बैठी है। कोल्लागपुर यहाँ से अधिक दूर भी नहीं है....।"

"दूर-पास का प्रश्न नहीं है शशांक! अब मैं जल्दी माताजी के पास पहुँचना चाहता हूँ।"

"सो तो चलना ही है। किन्तु किसी भी सच्चे वीर पुरुष के लिए किसी भी कुमारी को प्रतीक्षा करते छोड़ जाना भी अनुचित है। इससे पुरुष का पुरुषार्थ लज्जित होता है। मैं तो स्वयं आपको लेने आया ही हूँ। किन्तु हम लोग अब राजकुमारी जयसुन्दरी को भी अपने साथ लेकर ही चलेंगे।"

"ओ हो! तू तो ऐसे कह रहा है जैसे राधा-वेध कोई बच्चों का खेल हो.....।"

"बच्चों का खेल ही होता तो अब तक राजकुमारी कुमारी नहीं बैठी रहती। किन्तु श्रीपाल जिस महापुरुष का नाम है, उसके लिए अवश्य यह एक सामान्य कार्य है, ऐसा मुझे विश्वास है।"

"अच्छा, अच्छा; अब रहने दे चापलूसी और चुपचाप सो जा। रात कितनी बीत चुकी है।"

थके हुए दोनों मित्र गाढ़ी नींद में सो गये।

× × ×

दूसरे दिन श्रीपाल राजमहल की ओर गया। उस

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

समय संयोगवश राजकुमारी शृंगारसुन्दरी अपनी पाँच सखियों—पंडिता, विचक्षणा, सुलक्षणा, निपुणा तथा दक्षा के साथ राजउद्यान में ही क्रीड़ा कर रही थी। ये पाँचों सखी-कुमारियाँ भी राजकुमारी के समान ही जैनधर्म की ज्ञाता थीं तथा उसी के समान जिन प्रभु में प्रगाढ़ श्रद्धा रखती थीं। उन सबका एक ही निश्चय था—जो भी व्यक्ति राजकुमारी से विवाह करेगा, वही व्यक्ति उन पाँचों सखियों का भी पति होगा।

श्रीपाल ने जब उद्यान में प्रवेश किया तब उसे देखकर राजकुमारी तथा उसकी सखियाँ चकित रह गईं। श्रीपाल के दिव्य स्वरूप को देखकर वे अपने नेत्रों के सौभाग्य को सराहने लगीं। कुछ संकुचित होते हुए भी उनमें से एक ने आगे बढ़कर श्रीपाल का स्वागत किया और उसके आगमन का प्रयोजन पूछा।

श्रीपाल ने मुस्कुराते हुए कहा—

"मुझे घूमने-फिरने का बहुत शौक है। घूमता-घामता इधर भी आ निकला। रास्ते में सुना कि आप लोगों की कुछ समस्याएं हैं। वे किसी प्रकार हल नहीं हो रहीं। यद्यपि मैं कोई बहुत बड़ा विद्वान् व्यक्ति तो नहीं हूँ, फिर भी सोचा कि शायद आप लोगों की समस्या का समाधान मैं जिनप्रभु की कृपा से कर सकूं। मुझे जैनधर्म तथा नवपद में अटूट श्रद्धा है।"

उसका यह विनम्र तथा साथ ही दृढ़ उत्तर सुनकर

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

राजकुमारी तथा सखियाँ मन ही मन बड़ी प्रसन्न हुईं तथा उनके मन में सहज ही यह विश्वास जाग आया कि हो न हो यह महापुरुष ही हमारा भावी पति होने वाला है तथा हमारी कठिन समस्याओं का समाधान यह अवश्य कर देगा।

"अरी, श्रीमान को आसन तो दे।"

"उसकी कोई आवश्यकता नहीं"—श्रीपाल ने कहा—"स्फटिक शिलाओं से बने ये झूले इन सघन कुंजों में बड़े सुन्दर हैं। इन्हीं पर हम लोग बैठ जायेंगे तथा शंका-समाधान प्राप्त कर लेंगे।"

यह कहकर हँसता हुआ श्रीपाल एक झूले पर जा बैठा। राजकुमारी तथा पाँचों सखियाँ भी उसके सामने के एक-दो झूलों पर बैठ गईं।

अब कुछ क्षण के लिए वहाँ मौन छा गया, जो कि स्वाभाविक संकोचवश था। केवल रंग-बिरंगे, सुन्दर पक्षियों की मीठी-मीठी, प्यारी-प्यारी बोलियाँ ही सुनाई दे रही थीं।

किन्तु संकोच से काम कब तक चले ?

श्रीपाल ने ही पहल करते हुए कहा—

"कहिए, आपकी क्या समस्या है ?"

'तू बता—तू बता री—अरे तू ही बता दे ना !'—करते-करते अन्त में पण्डिता ने ही समस्या प्रस्तुत की।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

श्रीपाल ने समस्या ध्यानपूर्वक सुनी। उसका समाधान उसके मन में क्षण मात्र में ही आ गया। किन्तु वह कुछ कौतुक प्रिय भी था। अतः उसने सीधे अपने मुख से ही उसका उत्तर न देकर समीप ही पड़ी हुई रत्नजटित एक पुतली उठाई और उसी के मुख से उन कुमारियों की समस्या का समाधान कहलवा दिया।

यह देखकर वे सभी चपला-चंचला कुमारियाँ चकित रह गईं।

वे लजा भी गईं। उनके बड़े-बड़े नेत्रों की लम्बी-लम्बी पलकें सहज ही भूमि की ओर झुक गईं। क्योंकि अब निश्चित हो चुका था कि यह जो महापुरुष उनके सामने झूले पर बैठा था वह अब उनका पति था—भावी पति था, विधिवत् विवाह संस्कार होने तक।

उन्हें इस प्रकार मौन और लजाया हुआ देखकर श्रीपाल ने उन्हें थोड़ा सा छेड़ा—

"मैं तो बहुत पढ़ा-लिखा व्यक्ति नहीं हूँ। हो सकता है कि मैं आपकी समस्या का समाधान नहीं कर सका। अतः क्षमा चाहता हुआ आज्ञा चाहता हूँ।"

इतना कहकर श्रीपाल झूले से उतरकर उद्यान के द्वार की ओर चलने लगा। यह देखकर राजकुमारी और उसकी सखियाँ एकदम घबरा गईं। संकोच त्यागकर राजकुमारी शृंगारसुन्दरी ही झट से बोल पड़ी—

"अरे महोदय.....ठहरिए। हमारी समस्याओं का

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

समाधान हो गया है। आप तो.....अरी पण्डिता ! तू कुछ बोलती क्यों नहीं, वे चले जा रहे हैं..... ।"

अब पण्डिता मुस्कराते हुए आगे बढ़ी और उसने श्रीपाल का रास्ता रोककर शरारतपूर्ण स्वरों में कहा—

"श्रीमानजी ! अब आपको इतनी सरलता से छुट्टी नहीं मिलने वाली। उधर नहीं, इधर पधारिए, राजमहल की ओर। महाराज आपसे मिलकर बहुत प्रसन्न होंगे। पधारिए।"

श्रीपाल ने यह प्रेमपूर्ण आग्रह स्वीकार कर लिया।

महाराज धरापाल तथा महारानी गुणमाला को जब यह सूचना मिली कि राजकुमारी तथा उसकी सखियों की समस्याओं का समाधान किसी विद्वान तथा वीर पुरुष ने कर दिया है तब उनकी प्रसन्नता का कोई अन्त नहीं रहा। उनकी चिन्ता दूर हो गई। सिर से बोझ उतर गया। वे बड़े प्रेम और भक्तिपूर्वक श्रीपाल से मिले।

उसी दिन शुभ मुहूर्त में राजकुमारी तथा उसकी पाँचों सखियों का विवाह श्रीपाल के साथ धूमधाम से कर दिया गया।

श्रीपाल को जब विवाह समारोह से फुरसत मिली तब उसने शशांक से कहा—

"शशांक अब यहाँ से चलना चाहिए। तुमने यह राधा-वेध की झंझट और खड़ी कर दी है, अन्यथा हम लोग

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सीधे ही अब माताजी से मिलने चल पड़ते। किन्तु अब जब कोल्लागपुर जाना ही है तो मैं वहाँ जाता हूँ। तब तक तुम अनुचरों को विभिन्न स्थानों पर तीव्र गति से भेजकर मेरी शेष सभी रानियों को, सैनिक को और सेवकों को बुला लो और जल्दी से जल्दी कोल्लागपुर आ पहुँचो। तुम्हारे आते ही हम लोग सदल-बल चल पड़ेंगे।"

शशांक उत्साहपूर्वक अपने काम में लग गया।

श्रीपाल भी महाराज धरापाल से आज्ञा लेकर तथा अपनी पत्नियों को शशांक के साथ आने का निर्देश देकर तथा उनसे विदा लेकर कोल्लागपुर के लिए रवाना हो गया। □

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

कोल्लागपुर की राजकुमारी जयसुन्दरी अत्यन्त रूपवती, गुणवती तथा अस्त्र-शस्त्र संचालन में भी निष्णात थी। जिस समय वह विद्याध्ययन कर रही थी, उस समय उसे उसके शिक्षा-गुरु ने 'राधा-वेध' के विषय में बताया था। राजकुमारी को इस अद्भुत विद्या के विषय में विशेष कौतूहल हुआ था। उसने पूछा था—

"गुरुदेव ! यह 'राधावेध' क्या होता है ? इसे किस प्रकार सम्पन्न किया जाता है ?

शिक्षागुरु ने उसे समझाया था—

"बेटी ! 'राधावेध' धनुर्विद्या का ही एक अंग है, और यह बड़ा कठिन कार्य है। इसे तो अर्जुन जैसे कोई-कोई महा धनुर्धर ही सम्पन्न कर सकते हैं। होता यह है कि किसी मण्डप में एक स्तम्भ गाड़ा जाता है। उस स्तम्भ पर आठ चक्र लगाये जाते हैं। उनमें से चार चक्र एक तथा शेष चार चक्र दूसरी दिशा में निरन्तर घूमते रहते हैं। इन चक्रों से भी ऊपर एक पुतली बैठा दी जाती है।

"अब उस स्तम्भ के नीचे तेल से भरा हुआ एक बड़ा

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

कड़ाह रख दिया जाता है। जो भी व्यक्ति राधावेध करना चाहता है उसे उस कड़ाह में देखकर ऊपर दोनों ओर घूमते चक्रों के दाँतों के बीच में से क्षण-क्षण दीखने वाली इस पुतली की बायीं आँख को अपने तीर से छेदना होता है। उसी पुतली को राधा कहा जाता है और उसकी आँख का वेधन ही 'राधावेध' कहलाता है।"

"गुरुदेव ! यह तो बड़ा ही कठिन कार्य प्रतीत होता है।"

"हाँ, बेटी ! यह विद्या सामान्य धनुर्धरों को प्राप्त नहीं होती। जैसा कि मैंने कहा, अर्जुन जैसे महान धनुर्धर ही इस विकट कार्य को कर सकते हैं। इस विद्या को सिद्ध करने के लिए बड़े मनोयोग, धैर्य तथा कौशल की आवश्यकता होती है।"

गुरुदेव की बात को जयसुन्दरी ने बड़े ध्यान से सुना। कुछ क्षण विचार किया तथा फिर उसने अपने मन में एक दृढ़ निश्चय कर लिया। निश्चय कर लेने के बाद उसने अपने गुरुदेव से कहा—

"गुरुदेव मैंने एक निश्चय किया है। आज्ञा हो तो कहूँ ?"

"कहो बेटी ! निस्संकोच होकर बोलो। क्या निश्चय किया है तुमने ? मुझे विश्वास है कि मेरी शिष्या, मेरी बेटी, जो भी निश्चय करेगी वह शुभ ही होगा।"

कुछ सकुचाते हुए जयसुन्दरी ने कहा—

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

"गुरुदेव ! मैंने निश्चय किया है कि जो वीरपुरुष राधावेध करेगा, वही.....।"

जयसुन्दरी अपना वाक्य पूरा नहीं कर सकी, सहज संकोचवश। किन्तु गुरुदेव उसके मन की बात को समझ गये। वे ही बोले—

"बेटी ! तुम संकोच कर रही हो। स्वाभाविक ही है। कुमारी बालिकाएँ अपने मुख से अपने विवाह अथवा अपने भावी पति के विषय में कुछ नहीं कहतीं। यह उनकी कुलीनता का परिचायक है। किन्तु यदि मैं ठीक समझ रहा हूँ तो शायद तुम यही कहना चाहती हो कि जो वीर पुरुष राधावेध करेगा, तुम उसी के साथ विवाह करोगी, अन्य किसी के साथ नहीं। क्यों, मैंने ठीक समझा न बेटी ?"

अब अपने संकोच का कुछ त्याग कर जयसुन्दरी ने उत्तर दिया—

"हाँ गुरुदेव ! आप ज्ञानी हैं। आपने मेरे मन की बात को ठीक समझ लिया है।"

"लेकिन.....लेकिन बेटी ! तुम्हारा यह निश्चय बड़ा कठोर है। आज के युग में राधावेध कर सकने वाला कोई प्रतापी पुरुष मिलना बहुत कठिन है, लगभग असम्भव ही है। अच्छा होता कि तुम अपने इस दृढ़ निश्चय को बदल सकतीं.....।"

"नहीं, गुरुदेव ! मैं आपकी शिष्या हूँ। एक बार

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

निश्चय कर लेने के बाद उससे फिर कभी डिगना नहीं चाहिए, यह शिक्षा आप ही ने मुझे दी है। और मैं निश्चय कर चुकी हूँ।"

"सो तो ठीक है, बेटी ! किन्तु.....किन्तु जरा विचार तो करो कि इसका परिणाम क्या होगा ? यदि इस आर्यावर्त में इस समय कोई ऐसा महापुरुष न हुआ जो राधावेध कर सके, तब क्या होगा ?"

"तब कुछ नहीं होगा, गुरुदेव ! आपकी यह शिष्या ऐसी परिस्थिति में आजन्म कुमारी ही रहेगी। गुरुदेव ! प्रणाम। आज का अभ्यास पूर्ण हुआ। आज्ञा चाहती हूँ।"

इतना कहकर तथा अपने आचार्य को विनयपूर्वक वन्दन करके राजकुमारी जयसुन्दरी अपने आवास में चली गई।

आचार्य अपने आसन पर कुछ समय तक तो निश्चल, मौन, चिन्तातुर बैठे रहे। फिर 'हे प्रभु, हे वीतराग भगवन्त !' कहते हुए वे धीरे-धीरे उठे और सीधे राजा पुरन्दर के पास पहुँचे।

इस असमय में आचार्य को आया हुआ देखकर राजा को भी आश्चर्य हुआ। उन्होंने आचार्य को प्रणाम करते हुए पूछा—

"कहिए, आचार्यवर ! आज इस समय कैसे पधारना हुआ ? कोई विशेष प्रयोजन है क्या ?"

आचार्य ने एक हल्का-सा निश्श्वास फेंकते हुए अपना आसन ग्रहण किया और कहा—

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

"हाँ राजन् ! किसी विशेष प्रयोजन से ही आया हूँ।"

"आज्ञा कीजिए, आचार्यवर !"

"क्या आज्ञा करूँ राजन् ! चिन्ता में पड़ गया हूँ...."

"चिन्ता ? कैसी चिन्ता आचार्यवर ! आप जैसे ज्ञानी पुरुष को कौनसी चिन्ता सता सकती है ? और फिर स्वयं मैं तथा मेरे राज्य की समस्त शक्ति, समस्त सम्पदा आपके श्रीचरणों में समर्पित है। आपके एक संकेत मात्र का विलम्ब है। सारी चिन्ताएँ कपूर की भाँति उड़ जायँगी।"

"राजन् ! जिस चिन्ता को लेकर आज मुझे आपके समीप आना पड़ा है, उसका समाधान इतना सरल नहीं है। भूल मुझ ही से हो गई कि मैंने राजकुमारी को राधावेध के विषय में आज बताया.....।"

"राधावेध के विषय में आपने राजकुमारी को बताया तो उससे समस्या क्या उत्पन्न हो गई आचार्यवर ! क्या जया बेटी राधावेध का अभ्यास करना चाहती है ? यदि ऐसा है तो उसकी व्यवस्था आज ही कर दी जायगी। इस कारण आप इतने चिन्तित क्यों दिखाई दे रहे हैं ?"

"राजन् ! जैसा आप समझ रहे हैं वैसा नहीं है। राजकुमारी राधावेध का अभ्यास तो नहीं करना चाहती किन्तु.....।"

"किन्तु ? कहिए कहिए, आचार्यवर ! सब बात स्पष्ट कह डालिए।"

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

"राजन्! राधावेध के विषय में जान लेने के बाद बेटी जया ने प्रतिज्ञा कर ली है कि वह उसी वीरपुरुष के साथ विवाह करेगी जो राधावेध कर सकेगा। अन्यथा...."

"ओह, अब मैं समझा। आचार्यवर! अब मैं समझा। बेटी जया ने सचमुच बड़ी कठिन प्रतिज्ञा कर ली है।"

"यही मेरी चिन्ता का विषय है, महाराज! राजकुमारी मेरी शिष्या है। वह अपनी प्रतिज्ञा कभी नहीं तोड़ेगी। भले ही वह आजन्म कुमारी रह जाय।"

"जानता हूँ, आचार्यवर, अच्छी तरह जानता हूँ। वह आपकी आदर्श शिष्या है, और.....और वह मेरी, राजा पुरंदर की बेटी है। निश्चय ही वह अपनी प्रतिज्ञा प्राण देकर भी पालेगी। ओह, अरे कोई है"—राजा पुरन्दर ने पुकार लगाई। द्वारपाल दौड़ता हुआ उपस्थित हुआ—

"आज्ञा महाराज!"

"मन्त्रीवर को तुरन्त यहाँ भेज दो।"

राजा की आज्ञा पाकर द्वारपाल दौड़ता हुआ चला गया। उसके चले जाने पर राजा ने गम्भीर मुद्रा में आचार्य से कहा—

"विचार करना पड़ेगा। कोई समाधान खोजना पड़ेगा। और समाधान क्या—राधावेध का आयोजन ही करना पड़ेगा। आगे बेटी का भाग्य.....।"

× × × ×

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

बड़ी विचित्र वस्तु है यह भाग्य ! इस संसार में प्रतिदिन होने वाली अनेक उथल-पुथलें सब इस भाग्य के ही मत्थे मढ़ दी जाती हैं। भाग्य को कोसते हुए लाखों मनुष्य भूखे पेट ही सो रहते हैं अथवा अधनंगे घूमते रहते हैं, तथा भाग्य की जय-जयकार करते हुए अनेक सामर्थ्यवान व्यक्ति जीवन के समस्त सांसारिक सुखों का भोग करते हैं।

वस्तुतः आज तक किसी ने इस भाग्य को कहीं देखा नहीं, इसे जाना नहीं—कोई इसे पकड़ पाया नहीं।

किन्तु जो कुछ भी हो, राजकुमारी जयसुन्दरी परम सौभाग्यवान थी।

राधावेध का आयोजन राजा पुरन्दर द्वारा कर दिया गया था। अनेक राजा-महाराजा, महत्त्वाकांक्षी वीर युवक, अपने भाग्य को आजमा देखने वाले रूप-लोलुप—ये सब आए; किन्तु राधा की बाँयी आँख तो क्या, कोई उन घूमते चक्रों का भी भेदन न कर सका।

लोग आते गये, अपना भाग्य आजमाते गये और लज्जित तथा निराश होकर लौटते गये।

इसी के साथ-साथ बढ़ती चली जा रही थी राजा-रानी की चिन्ता भी।

और तब राजा पुरन्दर की नगरी में एक दिन एक अति चपल, अति वेगवान, अति सुन्दर अश्व पर सवार होकर एक प्रतापी पुण्यवान महापुरुष आया—श्रीपाल।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

उसे देखते ही राजा पुरन्दर, रानी विजया, आचार्यवर तथा राजकुमारी जया के हृदयों में एक अजीब प्रकार के सन्तोष, विश्वास, शांति और आनन्द का स्फुरण हुआ। उन सबकी आत्मा मानों भीतर ही भीतर बोल पड़ी—तुम्हारी प्रतीक्षा की घड़ियाँ समाप्त हुईं। तुम्हारा सौभाग्य सूर्य आ पहुँचा।

नवकार मन्त्र की एकाग्र, तन्मय भाव से आराधना कर श्रीपाल ने इतनी आसानी से राधावेध कर दिया मानों वह कोई कठिन कार्य हो ही नहीं—बच्चों का खेल मात्र हो।

और इस कार्य के सम्पन्न होते ही राजा पुरन्दर की नगरी हर्ष के हिण्डोले में झूल उठी।

सारी नगरी इस प्रकार उत्सव मनाने में डूब गई कि जैसे उन्हें अपने जीवन की चरम सिद्धि प्राप्त हो गई हो।

राजकुमारी जयसुन्दरी तथा श्रीपाल का विवाह इतनी धूमधाम से हुआ कि लोगों के कानों के परदे फटने लगे। जय-जयकार तथा पवित्र मन्त्रों की ध्वनि ने आकाश को गुँजा दिया।

सुखपूर्वक अपनी नई रानी के साथ समय व्यतीत करता हुआ भी श्रीपाल बेचैनी से शशांक की प्रतीक्षा करने लगा। अब उसकी अपनी माता के दर्शन की लालसा तीव्र हो गई थी। □

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

शशांक की व्यवस्था-कुशलता अद्भुत थी। इधर श्रीपाल और जयसुन्दरी का विवाह सम्पन्न हुआ और उधर स्थान-स्थान से द्रुतगामी रथों में सवार श्रीपाल की अन्य रानियाँ एक-एक कर आ पहुँचीं।

श्रीपाल के सभी सैनिक, सेवक तथा उसकी सारी सम्पत्ति भी शशांक के साथ शीघ्र ही कोल्लागपुर पहुँच गयी।

श्रीपाल की वे सब रानियाँ जब आपस में मिलीं तब ऐसा प्रतीत हुआ मानों कृष्णा-कावेरी-यमुना-शतद्रु इत्यादि विभिन्न सरिताओं का संगम हो रहा हो।

एक मंदाकिनी, मैनासुन्दरी शेष थी, जिसके समीप पहुँचने के लिए श्रीपाल अब पूर्णरूप से प्रस्तुत, बल्कि उत्सुक था।

उचित अवसर देखकर उसने राजा पुरन्दर से विदा माँगी। राजा पुरन्दर ने भी परिस्थिति का विचार करके बड़े ही प्रेमपूर्वक अपनी बेटी के साथ श्रीपाल को आशी-

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

वाद देते हुए विदा किया। सारी नगरी उसे विदा करने के लिए बहुत दूर तक गई और बड़े समझाने-बुझाने के बाद भारी मन से लौटी।

राजा न होते हुए भी एक सम्राट् की भाँति श्रीपाल स्थानपुर की ओर सदलबल चल पड़ा, जहाँ उसके मामा वसुपाल उसकी उत्कंठा से प्रतीक्षा कर रहे थे।

श्रीपाल के स्थानपुर पहुँचने की सूचना तीव्रगामी दूतों से प्राप्त कर राजा वसुपाल को बड़ा हर्ष हुआ। अपने भानजे से मिलने के लिए वे कुछ सैनिकों के साथ नगर से बाहर बहुत दूर तक चले गये।

अन्त में मार्ग में दोनों ओर से आगे बढ़ रहे उन दोनों दलों की भेंट हो ही गई। राजा वसुपाल ने श्रीपाल का वैभव देखा और उनकी छाती फूल उठी। उन्होंने बड़े प्रेम से उसे अपने गले लगा लिया। उसके बाद श्रीपाल की सभी रानियों को आशीर्वाद देकर वे श्रीपाल के साथ-साथ उसकी लम्बी यात्रा का वर्णन विस्तार सहित सुनते हुए नगर की ओर लौट चले।

राजा वसुपाल भाग्यवशात् निस्संतान थे। वे श्रीपाल को बहुत प्यार भी करते थे। श्रीपाल प्रत्येक दृष्टि से सुयोग्य थे। अतः एक दिन उन्होंने श्रीपाल के सामने प्रस्ताव रखा—

"पुत्र श्रीपाल ! मैं तुम्हें अपना पुत्र ही मानता हूँ, अतः इस सम्बोधन से चौंकना नहीं। प्रभ की साक्षी में मैं तुम्हें

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अपना पुत्र स्वीकार कर रहा हूँ। और अब मैं तुमसे एक प्रार्थना करना चाहता हूँ। आशा है तुम मुझे निराश नहीं करोगे।"

यह सुनकर श्रीपाल भाव-विभोर हो गया। उसने कहा—

"बचपन में ही दुर्भाग्यवश मैंने अपने पिताजी को खो दिया था। दैव की इच्छा प्रबल है। किन्तु आपने मुझे सदा ही पुत्रवत् स्नेह दिया है। अतः मैं तो आपको अपना पिता ही मानता हूँ। अतः पिताजी ! आप आज्ञा दीजिए कि मुझे क्या करना है। पिता को पुत्र से प्रार्थना करने की क्या आवश्यकता ? ऐसा कहकर मुझे लज्जित न कीजिए। मैं आपका आदेश सुनने के लिए उत्कण्ठित हूँ।"

"बेटे ! तुम जैसे सुयोग्य, ज्ञानी, वीर तथा धर्मनिष्ठ पले-पलाये पुत्र को प्राप्त करके मैं आज धन्यता का अनुभव कर रहा हूँ। अपुत्री रह जाने का मेरा सारा दुख दूर हो गया है। अब मेरी आयु भी वानप्रस्थ ग्रहण करने योग्य हो गई है। अतः मैं चाहता हूँ कि तुम विधिवत् मेरे इस राज्य को ग्रहण कर लो। तुम यदि यह स्वीकार कर लोगे तो मेरी अन्तिम चिन्ता भी दूर हो जायगी।"

यह प्रस्ताव सुनकर श्रीपाल कुछ विचार में पड़ गया। फिर उसने अनेक प्रकार से राजा वसुपाल से यही आग्रह किया कि वे अभी राज्यत्याग न करें। किन्तु राजा वसुपाल तो निश्चय कर चके थे। उन्होंने यही कहा—

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

"देखो श्रीपाल ! अब तुम इसे मेरी इच्छा समझो अथवा आदेश। किन्तु यह राज्य तो अब तुम्हे ही सम्हालना है। अपनी स्वीकृति दो। मैं आज ही तुम्हारे राजतिलक की घोषणा करा देना चाहता हूँ और शीघ्र ही शुभ मुहूर्त में यह मंगल कार्य सम्पन्न कर देना चाहता हूँ। बोलो, क्या तुम मेरी इतनी सी भी इच्छा को पूरी नहीं होने दोगे ?"

अब श्रीपाल के पास अपनी स्वीकृति देने के सिवाय कोई मार्ग नहीं था। उसने इतना ही कहा—

"पिताजी ! आपका आदेश श्रीपाल अपने मस्तक पर धारण करता है।"

यह सुनकर राजा वसुपाल एकदम प्रसन्न हो गये। उन्होंने तुरन्त अपने आसन के समीप ही लगे हुए स्वर्ण-घंट पर चोट की। द्वारपाल हाथ जोड़कर उपस्थित हुआ।

"अमात्यवर को शीघ्र भेजो।"—राजा ने आदेश दिया।

अमात्य के आने पर राजा ने अपनी हार्दिक प्रसन्नता की खुली अभिव्यक्ति करते हुए कहा—

"नगर में घोषणा करा दीजिए अमात्यवर कि शीघ्र ही शुभ मुहूर्त में श्रीपाल का राजतिलक होगा। जाइये, शीघ्रता कीजिए।"

"जो आज्ञा महाराज !" कहकर अमात्य जब वहाँ से जाने लगे तब राजा वसुपाल ने पुनः कहा—

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

"और देखिए अमात्यवर, राजपुरोहितजी को भी शीघ्र बुलवा लीजिए। शुभ मुहूर्त खोजना होगा न ?"

इस प्रकार घोषणा कर दी गई औरउसे सुनकर नगर-निवासी प्रसन्न हो उठे। श्रीपाल जैसे राजा को पाकर वे स्वयं को भाग्यवान मानने लगे।

शुभ मुहूर्त में राजतिलक भी हो गया।

अब तक वास्तविक राजा न होते हुए भी एक सम्राट् की शोभा धारण करने वाला श्रीपाल अब वास्तविक 'महाराज' हो गया।

अब श्रीपाल केवल श्रीपाल ही नहीं था—अब वे थे महाराज श्रीपाल ! स्थानपुर के राजाधिराज श्रीमान् महाराज !

महाराज श्रीपाल सभी प्रकार से सुखी थे। किन्तु अपनी पूज्या माता तथा प्रिय रानी मैनासुन्दरी से मिलने के लिए वे अब अधीर हो रहे थे। अतः एक दिन महाराज वसुपाल से आज्ञा प्राप्त कर वे अपनी सभी रानियों सहित अपनी माता से मिलने मालव प्रदेश की ओर चल पड़े।

× × ×

महाराज श्रीपाल का विपुल सैन्य धीरे-धीरे मालव-प्रदेश की ओर बढ़ने लगा। जिस मार्ग से वे आगे बढ़ रहे थे, उस मार्ग में पड़ने वाले प्रत्येक राजा ने श्रीपाल की असीम शक्ति तथा असीम औदार्य देखकर उनकी अधीनता

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

स्वीकार की तथा अनेक प्रकार की मूल्यवान भेंटे उन्हें प्रदान कीं।

किन्तु श्रीपाल महामना पुरुष थे। उन्होंने किसी भी राजा को उसके राज्य से वंचित नहीं किया। प्रेमपूर्वक उनकी भेंट स्वीकार करके, अपनी ओर से उन्हें समुचित उपहार देकर उन्हें अपने-अपने राज्य का संचालन पूर्ववत् करते रहने का आदेश दिया। उन राजाओं को श्रीपाल महाराज का यही कथन था—

"आप लोग अपने-अपने राज्य के स्वामी बने रहिए। मेरा तो इतना ही कहना है कि आप लोग कभी आपस में न लड़ें। एक-दूसरे के राज्य की सीमाओं को स्वीकार करें तथा अपनी प्रजा को कभी कोई कष्ट न होने दें। प्रजा का आप पुत्रवत् पालन करें। हाँ, एक बात स्मरण और भी रखें—यदि कभी हमारी इस पवित्र आर्यभूमि पर कोई विदेशी अनार्य आक्रमण करे तो, आप सबको मेरे साथ मिलकर, एक ही ध्वज के नीचे रहकर उस आततायी से युद्ध करना होगा।"

विजयी श्रीपाल महाराज की इस उदारता तथा प्रजा-प्रेम को देखकर अन्य सभी राजा स्वयमेव अपनी ही अन्तः-प्रेरणा से उन्हें अपना अघोषित सम्राट् मानने लगे।

और श्रीपाल महाराज का सैन्य पड़ाव आगे बढ़ता रहा।

चलते-चलते वे सोपारक नामक राज्य में पहुँचे तथा

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

विश्राम हेतु वहाँ कुछ देर के लिए रुके। किन्तु यह देखकर श्रीपाल महाराज को आश्चर्य हुआ कि उस छोटे-से राज्य का राजा भी उनसे भेंट करने उपस्थित नहीं हुआ। उन्होंने अपने मन्त्री से इस विषय में पूछा तो उत्तर मिला –

"महाराज ! इस राज्य का राजा बहुत ही सज्जन और प्रजावत्सल है। आपका स्वागत करने वह अवश्य ही उपस्थित होता, किन्तु दुर्भाग्यवश वह एक विपत्ति में फँस गया है। उसकी एकमात्र कन्या सर्पदंश से मृत हो गई है। महाराज महासेन अपनी उसी कन्या के अन्तिम संस्कार में व्यस्त हैं और बहुत दुखी हैं।

यह सुनकर श्रीपाल महाराज भी उदास हो गये। महाराज महासेन के प्रति उनके हृदय में गहन सहानुभूति उत्पन्न हुई। कुछ समय तक वे चुपचाप कुछ विचार करते रहे, फिर बोले—

"मंत्रिवर ! मुझे उस स्थान पर ले चलिए जहाँ उस कन्या का दाह संस्कार किया जाना है। मैं उसमें सम्मिलित होना चाहता हूँ, और यदि संभव हो, जिनदेव की कृपा हो तो उस कन्या के जीवन को बचा लेने का एक बार प्रयत्न भी करना चाहता हूँ।"

व्यवस्था तत्काल हो गई और श्रीपाल महाराज क्षणमात्र का भी बिलम्ब न करके दाहस्थल पर पहुँच गये।

उन्हें इस प्रकार अचानक वहाँ उपस्थित देखकर महाराज महासेन तथा महारानी तारासुन्दरी की आँखें

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

भर आईं। उदास मन से उन्होंने महाराज श्रीपाल को नमस्कार किया। राजा महासेन किसी प्रकार स्वयं को संयत करके कहने लगे --

"परम पुण्यवान महाराज श्रीपाल महाभाग ! क्षमा चाहता हूँ कि मैं आपकी सेवा में उपस्थित न हो सका.....।"

किन्तु महाराज श्रीपाल ने राजा महासेन के कन्धे पर प्रेमपूर्वक हाथ रखकर कहा—

"मुझे सब कुछ ज्ञात हो गया है। आप धैर्य रखिए। मुझे एक बार प्रयत्न करने दीजिए।"

इतना ही कहकर श्रीपाल सीधे राजकुमारी तिलक-सुन्दरी के शव के समीप जा बैठे। कुछ क्षण उन्होंने आँखें मूँदकर नवकार मंत्र का जाप किया। फिर देवप्रदत्त अपनी मणिमाला को एक जल से भरे हुए पात्र में डुबोकर उस जल के छींटे मृत राजकुमारी के मुरझाए हुए मुख पर डाले।

प्रभु की कृपा अनन्त हैं। वे छींटे किसी सामान्य जल के छींटे न होकर अमृत के छींटे सिद्ध हुए।

पुण्यवान श्रीपाल महाराज के कर-कमलों से राज-कुमारी के मुख पर अमृत का सिंचन हुआ।

और राजकुमारी की पलकें झपकने लगीं।

धीरे-धीरे उसने अपने नेत्र पूरी तरह खोल दिये।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

कुछ ही क्षणों में पूर्णतः सचेत, सजीवन होकर वह उठ बैठी।

यह चमत्कार देखकर वहाँ उपस्थित सारा जन-समुदाय आश्चर्यमुग्ध हो गया और श्रीपाल महाराज की जय-जयकार से गगन को गुँजाने लगा।

उस राज्य के नागरिकों को अपनी प्यारी राजकुमारी वापस मिल गई थी।

एक बाप की बेटी मृत्यु के भयानक मुख से निकलकर उसकी छाती से चिपट गई थी।

सुख ! सुख ! चारों ओर सुख व्याप्त हो गया था।

राजकुमारी स्वयं चकित थी—उसे क्या हो गया था? ये सब लोग उसे घेरे हुए क्यों खड़े हैं? वह राजमहल में न होकर इस जंगल में क्यों पड़ी है? और.....और ये सामने जो एक देवात्मा महापुरुष खड़ा है, वह कौन है? उसे तो उसने कभी देखा भी नहीं.....!

अपनी प्यारी बेटी के इन सभी मौन प्रश्नों को राजा महासेन समझ गये थे। बड़े ही दुलार से बेटी के सिर पर हाथ फेरते हुए उन्होंने कहा—

"बेटी ! तू महाभाग्यवान है और अब सभी संकटों से परे है। चिन्ता न कर। तुझे सर्प ने काट लिया था और तू मृत्यु के मख में चली ही गयी थी। किन्तु ये जो महापुरुष तेरे सामने खड़े हैं, उन्होंने चमत्कार ही दिखाया है और

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

तुझे मृत्यु के मुख से ये वापस लौटा लाये हैं। हम सब इनके कृतज्ञ हैं। तू इन्हें प्रणाम कर।"

राजकुमारी ने अपना अस्त-व्यस्त आँचल ठीक किया, सिर ढका और विनीत भाव से श्रीपाल को प्रणाम किया।

उसे सदा सुखी रहने का आशीर्वाद देकर श्रीपाल ने राजा महासेन से कहा—

"राजन्! अब मैं जाना चाहता हूँ। मैं कुछ जल्दी में हूँ। अपनी माता से मिले हुए मुझे बहुत समय हो गया है। वे मेरी प्रतीक्षा में होंगी। अतः अब मझे आज्ञा दीजिए।"

यह कहकर श्रीपाल महाराज वहाँ से प्रस्थान करने के लिए उद्यत हुए किन्तु राजा महासेन ने उन्हें रोकते हूए आग्रह किया—

"हे महाभाग! मेरी एक विनय सुनते और स्वीकार करते जाइये। आपका शुभ पदार्पण कुछ ऐसी परिस्थितियों में हुआ कि मैं आपका कुछ भी सत्कार नहीं कर सका हूँ। अब तो मेरी यह विनय है कि जब आपने मेरी इस बेटी को जीवनदान दिया है तो इसके भावी जीवन के स्वामी भी आप ही बनिए। मैं एक छोटे-से राज्य का अधिपति हूँ। आपके समक्ष नगण्य हूँ। आपकी कुछ सेवा मैं नहीं कर सकता। किन्तु मेरी यह बेटी तिलक बड़ी ही गुणवती है। मेरे लिए तो यह एक अनमोल रत्न ही है। मैं यह रत्न आपके श्रीचरणों में चढ़ाकर अपने जीवन के ऋण से

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

उऋण होना चाहता हूँ। कृपा कीजिए। मेरी विनती को न ठुकराइये।"

यह सुनकर श्रीपाल ने एक बार तिलकसुन्दरी की ओर देखा। उसके नेत्रों से उसके नेत्र मिले। राजकुमारी के नेत्रों में श्रीपाल ने प्रार्थना, प्रेम, समर्पण, लज्जा—जाने क्या-क्या भाव एक ही क्षण में पढ़ लिये। फिर उसने राजा महासेन से कहा—

"जैसी आपकी और राजकुमारी की इच्छा। किन्तु समय भाग रहा है। मुझे शीघ्र ही मालव देश पहुँच जाना है।"

राजा महासेन श्रीपाल के इस उत्तर को सुनकर इतने प्रसन्न हो गये थे मानों उन्हें जीवन की सम्पूर्ण सिद्धि ही प्राप्त हो गई हो। उल्लसित भाव से बोल उठे—

"आप चिन्ता न करें। विवाह-विधि में अधिक समय नहीं लगेगा। मैं अभी सारी व्यवस्था किये देता हूँ। आप कृपा कर हमारे साथ राजमहल में पधारिए। आइये श्रीमान्! पधारिए।"

राजकुमारी तिलकसुन्दरी के भाग खुल गये। विवाह-विधि शीघ्र, सानन्द सम्पन्न हुई। कहाँ तो वह मृत्यु का ग्रास हो चली थी और कहाँ उसे श्रीपाल महाराज के समान युग के सर्वश्रेष्ठ महापुरुष की अर्धांगिनी बनने का सौभाग्य और गौरव प्राप्त हो गया। वह निहाल हो गई।

विधि की लीला इसे नहीं तो फिर किसे कहते होंगे।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

× × ×

मेवाड़, सौराष्ट्र, लाट, भोट इत्यादि अनेक राज्यों पर अपनी विजय-वैजयन्ती फहराते हुए तथा वहाँ के नरेशों को पुनः उनका राज्य सौंपकर एक सूत्र में बाँधते हुए, उन नरेशों के हृदयों को प्रेम और उदारता से जीतते हुए महाराज श्रीपाल द्रुतगति से, आँधी की तरह उज्जयिनी की ओर बढ़ रहे थे।

मंजिल जब समीप ही आ रही थी तब उज्जयिनी के गुप्तचरों ने घबराहट में अपने राजा प्रजापाल को आधी-अधूरी सूचना दी--

"महाराज ! सावधान हो जाइये। कोई अत्यन्त शक्तिशाली सम्राट् अपनी नगरी पर आक्रमण करने आँधी की तरह आगे बढ़ा चला आ रहा है।"

सूचना सुनकर महाराज प्रजापाल ने अपनी तलवार पर हाथ रखा और कहा—

"किसका साहस है जो महाकाल की इस नगरी उज्जयिनी पर आक्रमण करे ? किसे अपना जीवन प्रिय नहीं रहा जो मुझसे टकराने आ रहा है ? कौन है वह ? शीघ्र कहो।"

"महाराज हम यह तो नहीं जान सके कि वह कौन है, किन्तु इतना निश्चित है कि उसके सैन्य और उसकी शक्ति का कोई पार नहीं है। हम लोग तो यही देखकर

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

भागे-भागे श्रीचरणों में यह सूचना देने उपस्थित हो गये हैं।"

"अच्छा ठीक है, देखा जायगा। लोहे से लोहा टकराने से अग्नि की कैसी भीषण चिनगारियाँ निकलती हैं यह अब प्रकट होगा। जाओ, सेनापति को उपस्थित करो।"

राजाज्ञा प्राप्त होते ही सेनापति उपस्थित हुआ। राजा प्रजापाल ने तुरन्त आदेश दिया—

"नगरी के सभी द्वार बन्द करा दीजिए। एक चिड़िया भी अब मेरी आज्ञा के बिना नगरी में प्रवेश न करे। सैन्य को तैयार करके नगर-प्राचीर पर कदम-कदम पर सन्नद्ध कर दीजिए। गुप्तचरों की सूचना के अनुसार कोई अत्यन्त बलवान राजा हमारी नगरी पर आक्रमण करने आ रहा है, बल्कि आ ही पहुँचा है। किन्तु राजा प्रजापाल के खड्ग की धार उसने अभी देखी नहीं है। छठी का दूध किसे कहते हैं, यह उसे ज्ञात नहीं है। वह अब हो जायगा। जाइये, अपनी तैयारी कीजिए और मंत्रिमंडल को भी मेरे पास भिजवा दीजिए।"

इस प्रकार उज्जयिनीनरेश ने अपनी मोर्चाबन्दी कर ली। वह जनम-जनम का अहंकारी था, यह बात पाठक भूले नहीं होंगे। उसके इस अहंकार के सदा-सदा के लिए विनष्ट हो जाने की घड़ी आ पहुँची थी।

और अपनी विजय-वैजयन्ती फहराते हुए महाराज श्रीपाल ससैन्य उज्जयिनी के आँगन तक आ पहुँचे थे।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

संध्या ढल रही थी। नगर के सभी द्वार बन्द थे। श्रीपाल महाराज को अपनी माता और मैनासुन्दरी से मिलने की आतुरता थी। राजा प्रजापाल की उन्हें कोई चिन्ता नहीं थी। वे उनसे युद्ध करना भी नहीं चाहते थे। हाँ, राजा के अहंकार को वे अवश्य ही नष्ट करना चाहते थे कि फिर भविष्य में वे कभी अहंकार न करें।

अतः उन्होंने अपने सैन्य को नगरी से बाहर ही शान्ति-पूर्वक पड़ाव डालने का आदेश दिया और स्वयं किसी गुप्त मार्ग से अकेले ही नगरी में प्रविष्ट होकर अपने आवास की ओर चल पड़े।

इस समय तक अन्धकार व्याप्त हो चुका था। श्रीपाल महाराज सभी सेवकों की दृष्टि बचाकर चुपचाप उस कक्ष के द्वार तक पहुँच गये जिस कक्ष में दो महिमामयी महिलाएँ बैठी हुई वार्तालाप कर रही थीं।

पाठक सहज ही अनुमान कर सकते हैं कि वे दोनों महिलाएँ कौन हो सकती थीं—एक थी स्वयं महाराज श्रीपाल की ममतामयी माता कमलप्रभा तथा दूसरी थी महाराज की पटरानी मैनासुन्दरी।

श्रीपाल महाराज ने चुपचाप द्वार की सन्धि में से भीतर उन दोनों को देखा। यद्यपि उनकी इच्छा हो रही थी कि वे क्षणमात्र का भी विलम्ब न कर दौड़कर अपनी माता से लिपट जायँ। किन्तु वे धीर पुरुष थे। उन्होंने कुछ क्षण के लिए संयम रखना ही उचित समझा और वे

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

शान्त खड़े रहकर उन दोनों का वार्तालाप सुनने लगे, कान लगाकर।

महारानी कमलप्रभा कुछ घबराये से, कुछ चिन्तित, कुछ अधीर स्वर में कह रही थीं—

"बेटी मैना ! श्रीपाल को यहाँ से गये कितना समय हो गया, अब तक वह लौटा नहीं। यद्यपि उसके कुशल-समाचार हमें समय-समय पर शशांक तथा उसके कुशल गुप्तचरों द्वारा प्राप्त होते रहे हैं, तथा शशांक के संदेश के अनुसार अब श्रीपाल यहाँ पहुँचने ही वाला होगा, किन्तु अब तक वह आया क्यों नहीं ? मुझे चिन्ता हो रही है।"

मैनासुन्दरी ने उत्तर दिया—

"माताजी ! आप व्यर्थ ही चिन्ता करती हैं। मुझे दृढ़ विश्वास है कि वे अब आने ही वाले हैं।"

"किन्तु बेटी ! यह जो किसी शक्तिशाली राजा ने उज्जयिनी को घेर लिया है, उसका क्या होगा ? श्रीपाल आएगा भी तो उसे नगरी में प्रवेश के लिए युद्ध करना होगा। युद्ध का परिणाम.....।"

"माताजी ! मुझे और आपको भी जिनप्रभु की कृपा में दृढ़, अचल आस्था है। आप चिन्ता न कीजिए। मेरा मन तो जाने क्यों और कैसे यह कहता है कि वे आ ही पहुँचे हैं। आज प्रातःकाल से ही जो-जो लक्षण मुझे दिखाई दिये वे सभी यह संकेत करते हैं कि आज उन्हें आना ही चाहिए.....।"

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

बस, इससे अधिक प्रतीक्षा श्रीपाल महाराज न स्वयं कर सके और न अपनी प्यारी माता को ही करा सके। उन्होंने द्वार के पट खोले और दौड़कर माता के चरणों में लोट गये।

बहुत समय से बिछुड़े अपने बेटे को सकुशल, सानन्द, स्वस्थ अपने आँचल की छाया में पाकर माता कमलप्रभा निहाल हो उठी। उसने बार-बार श्रीपाल के मस्तक पर स्नेहपूर्वक हाथ फेरा, उसे चूमा और फिर अन्त में कहा—

"तू आ गया मेरे लाल! प्रभु को लाख-लाख धन्यवाद! तुझे देखने को मेरी आँखें तरस रही थीं। अब मेरा हृदय शीतल हुआ। तू स्वस्थ तो है न?"

श्रीपाल महाराज ने देवोपम मुस्कुराहट के साथ उत्तर दिया—

"माँ! तेरी और वीतराग जिनप्रभु की कृपा से मैं स्वस्थ और सकुशल हूँ। तू तो व्यर्थ ही चिन्ता करती है।"

बेटा सकुशल लौट आया था। माता का हृदय अब शीतल, शान्त हो गया था।

अब रानी कमलप्रभा को ध्यान आया कि बेटे को बहू से भी मिलने का अवसर देना चाहिए। यह ध्यान आते ही वह चटपट यह कहते हुए उठ खड़ी हुई—'अरे, तू भूखा प्यासा होगा। मैं अभी तेरे लिए कुछ खाने-पीने को लेकर आती हूँ।"

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

रानी कमलप्रभा उठकर चलीं तो मैनासुन्दरी तुरन्त उन्हें टोकते हुए बोली—

"माताजी ! आप बैठिए, खाने-पीने के लिए मैं लिए आती हूँ.....।"

"अरे रहने दे, तू तो जनम भर उसे खिलाती-पिलाती रहेगी। आज तो मैं ही खिलाऊँगी।"—कहते-कहते रानी उस कक्ष से बाहर हो गयी।

बरसों के बिछुड़े पति-पत्नी समझ गये कि माता का अभिप्राय क्या था। उन दोनों ने एक-दूसरे की आँखों में गहरे-गहरे झाँका और दोनों हँस पड़े।

"कैसी हो मैना ?"

"कैसे हैं नाथ ?"

इसी प्रकार की कुछ बातें शब्दों में तथा आँखों में ही हुईं और फिर कमलप्रभा लौट आई।

बहुत थोड़ा-सा कुछ खा-पीकर श्रीपाल ने अपनी माता से कहा—

"माँ ! अब मेरे शिविर में चलो। वहीं सब बातें होंगी। ढेर सारी। अपनी बहुओं से भी मिल लो। उज्जयिनी-प्रवेश का विचार कल प्रातःकाल किया जायगा।"

"अरे हाँ, यह तो मैं भूली ही जा रही थी। नगरी के सब द्वार तो बन्द हैं। कड़ा पहरा है। तू आया किस तरह ?"

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

"माँ ! जिस व्यक्ति पर जिन भगवान की कृपा हो उसके मार्ग में कोई बाधा नहीं रहती। प्रभु के प्रति उसके हृदय की सच्ची श्रद्धा उसके मार्ग के सभी अवरोधों को समाप्त कर देती है। यह शिक्षा तूने ही तो मुझे बचपन से ही दी है। भूल गई क्या ?"

"भूलूँगी कैसे ? भला यह भी कोई भूलने की बात है ? प्रभु को भी क्या कभी भुलाया जा सकता है ? किन्तु मैं पूछती हूँ तू आया कैसे ?"

"मेरे साथ चलकर देख ले न माँ ! स्वयं ही जान जायगी। अब चल, उठ।"

जिस गुप्त मार्ग से श्रीपाल महाराज ने नगरी में प्रवेश किया था उसी मार्ग से वे तीनों पुनः अपने शिविर में पहुँच गये।

वहाँ पहुँचते ही रानी कमलप्रभा अपनी नई बहुओं को दुलारने में लग गई और श्रीपाल लम्बे प्रवास की थकान उतारने के लिए आँख बन्द करके शय्या में लेट गया।

× × ×

प्रातःकाल होने पर मैनासुन्दरी ने श्रीपाल से कहा—

"नाथ ! मैं कितनी सौभाग्यशालिनी हूँ कि मुझे इस जन्म में आप पतिदेव के रूप में प्राप्त हुए हैं। जब अपना विवाह हुआ था, तब मेरे अतिरिक्त अन्य सभी व्यक्ति मेरे दुर्भाग्य को कोस रहे थे। किन्तु मुझे जिनधर्म में अटूट

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

श्रद्धा थी। कर्म-परिणाम पर पूरा भरोसा था। अतः मेरे मन में कहीं कोई दुविधा नहीं थी। मैंने अपनी आत्मा की सम्पूर्ण-श्रद्धा तथा भक्तिपूर्वक आपको स्वीकार किया था।

"और आज देखिए न, मेरी धर्म श्रद्धा ने मुझे आज कितना सुखी बना दिया है! मुझे तो लगता है कि इस भारत-भूमि पर आज मुझसे अधिक सौभाग्यशालिनी अन्य कोई स्त्री नहीं होगी। आपके जैसे महापुरुष मेरे सौभाग्य-नाथ हैं। माता कमलप्रभा जैसी ममतामयी सास हैं। और मुझे कभी कोई कष्ट न हो, मुझे अकेलेपन का अनुभव न हो इसीलिए आप अपने साथ मेरी बहुत-सी छोटी बहनों को भी लेते आए हैं।"

यह सुनकर श्रीपाल महाराज को थोड़ी छेड़छाड़ करने की सूझी। यह प्रेमपूर्ण छेड़छाड़ पति-पत्नी के जीवन में अमृत घोल दिया करती है। उन्होंने कहा—

"तुम्हारी इतनी सारी भगिनियाँ मैं ले आया हूँ यह कहकर तुम मुझ पर व्यंग कर रही हो न?"

"नहीं, नहीं, ऐसा स्वप्न में भी विचार न कीजिए। मैं आप पर व्यंग करके पाप की भागी क्यों बनूंगी? और फिर मुझे तो अपनी बहनें मिल गई हैं, जिनके साथ मेरा समय हँसते-खेलते व्यतीत रहेगा। जिस समय आप राज्य-कार्य में व्यस्त रहा करेंगे उस समय हम लोग भी सब मिलकर आनन्द किया करेंगी।

"लेकिन अब इस चर्चा को छोड़िए और यह बताइये

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

कि आपका अब आगे का क्या कार्यक्रम है ? क्या आप सचमुच मेरे पिताजी से युद्ध करना चाहते हैं.....?"

"अरे नहीं, मैना ! श्रीपाल अपने ससुर से युद्ध करेगा ? ऐसी कल्पना भी तुम कैसे कर सकती हो ?"

"तब फिर आपने इस नगरी का घेरा क्यों डाला है ? पिताजी को स्पष्ट सूचना क्यों नहीं भिजवा रहे हैं ?"

"कारण है, मैनासुन्दरी प्रिये ! मैं तुम्हारे पिताजी को अपना भी पिता ही समझता हूँ। उनसे युद्ध करने और व्यर्थ ही रक्तपात करने का मेरा कोई विचार नहीं है। मैं तो केवल उन्हें एक शिक्षा देना चाहता हूँ। ऐसी शिक्षा जो उनके हृदय में उतर जाय और उनकी आत्मा का कल्याण हो।"

मैनासुन्दरी कुछ समझ नहीं सकी। उसने पूछा—

"कैसी शिक्षा आप उन्हें देना चाहते हैं, नाथ !"

"यही, कि मनुष्य को कभी अभिमान नहीं करना चाहिए। और अपने अभिमान में अन्य व्यक्तियों को कष्ट नहीं देना चाहिए। तुम तो जानती ही हो कि उन्होंने अपने अभिमान के वशीभूत होकर ही तुम्हारा विवाह मेरे जैसे दर-दर के भिखारी कोढ़ी के साथ किया था। क्योंकि वे चाहते थे कि तुम उन्हें सर्वशक्तिमान मानो, और तुमने ऐसा मानने से इन्कार कर दिया था। तुमने कहा था कि प्रत्येक मनुष्य अपने कर्मों के ही शुभ अथवा अशुभ परिणाम

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

का भोग करता है। अन्य कोई व्यक्ति उसे सुख या दुख नहीं दे सकता। बस, यही बात तुम्हारे पिताजी को बुरी लगी थी। वे अभिमानी थे। स्वयं को सर्वशक्तिमान मानते थे। कहते थे कि वे जो चाहें सो कर सकते हैं। जिसे चाहे राजा और जिसे चाहे उसे भिखारी बना सकते हैं। याद है न ?"

"हाँ, प्रियतम ! याद है, खूब अच्छी तरह याद है। काश, पिताजी यह अभिमान-भावना त्याग दें !"

"मैं यही प्रयत्न करना चाहता हूँ। इसीलिए मैंने स्वयं को अब तक प्रकट नहीं किया है। तुम्हारे पिताजी को अभी तक यह ज्ञात नहीं होने दिया है कि उनकी नगरी का घेरा किस राजा ने डाला है।"

मैनासुन्दरी ने कुछ सोचते हुए कहा—

"यह तो ठीक है, प्रिय ! किन्तु अब आपकी क्या योजना है ?"

"यह तुम्हीं बताओ कि तुम्हारे पिताजी के अभिमान को कैसे नष्ट किया जाय ? सोचो, सोचकर बताओ।"

मैनासुन्दरी ने कुछ विचार किया और फिर प्रस्ताव किया—

"प्राणनाथ ! बिना रक्तपात के आपकी उद्देश्य-पूर्ति हो जाय इसके लिए मुझे तो यही रास्ता दिखाई देता है कि आप उन्हें यह संदेश भेजें कि वे एकाकी, नंगे पैर,

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

कंधे पर कुल्हाड़ी रखकर एक सामान्य श्रमिक की भाँति आपके शिविर में आकर आपसे मिलें। यदि वे ऐसा करते हैं तो माना जा सकता है कि उन्होंने अपने अभिमान का त्याग कर दिया है।"

सोचकर श्रीपाल ने कहा—"बिलकुल ठीक। मैं ऐसा ही संदेश राजा प्रजापाल से पास भिजवाए देता हूँ। साथ ही प्रभु से प्रार्थना भी करता हूँ कि वे इस बात को स्वीकार कर लें और निरर्थक रक्तपात तथा हिंसा से हम सभी को बचा लें।"

"पूज्य पिताजी को पुण्य के पथ पर अग्रसर कराने वाली इस पवित्र प्रार्थना में मैं भी आपके साथ हूँ।"—मैनासुन्दरी ने कहा।

× × × ×

राजा प्रजापाल अपनी मंत्रिपरिषद् से घिरे बैठे थे। राजा सहित शेष सभी मंत्रियों के चेहरे गम्भीर थे। चिन्ता उनके हृदयों में शूल के समान गड़ी जा रही थी—आक्रमणकारी राजा जो भी हो, परम शक्तिशाली है। उसका सैन्य विशाल है, सुव्यवस्थित है। इतने शक्तिशाली शत्रु से लोहा लेना असम्भव है। अर्थात् युद्ध किया तो जा सकता है, किन्तु सर्वनाश और पराजय निश्चित है। इसका सीधा-सादा अर्थ यही है कि युद्ध निरर्थक है।

तब किया क्या जाय? शत्रु नगरी को घेरे बैठा है। किसी भी क्षण युद्ध के नगाड़े बज पकते हैं। हमारी सेना

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

शत्रु का सामना करने में समर्थ नहीं—ऐसी स्थिति में आखिर किया क्या जाय ?

राज प्रजापाल की मंत्रिपरिषद् इसी चिन्तन में डूबी हुई थी। उसी समय द्वारपाल ने सूचना दी—

"महाराज ! शत्रु का दूत द्वार पर उपस्थित है।"

"उसे आने दो।"—राजा ने बुझे, चिन्तित मन से आज्ञा दी।

श्रीपाल महाराज के दूत ने कक्ष में प्रवेश किया, महाराज प्रजापाल को नमन किया और आज्ञा की प्रतीक्षा में प्रस्तर-मूर्ति की भाँति मौन खड़ा रह गया।

राजा प्रजापाल ने कहा—

"कहो दूत ! तुम अवध्य हो। निस्संकोच अपने राजा का संदेश हमें सुनाओ।"

"महाराज प्रजापाल ! हमारे महाराज ने आप को सन्देश कहलवाया है कि या तो आप अकेले, नंगे पैर, एक कुल्हाड़ी कंधे पर रखकर नगर के बाहर उनके शिविर तक एक सामान्य श्रमिक की भाँति आयें या फिर.....।"

इतना सुनते-सुनते ही महाराज प्रजापाल क्रोध से भर उठे। उनके चेहरे पर रोष छा गया। आँखों से अंगारे झरने लगे। वे गरज उठे—

"या फिर क्या कर लेगा तुम्हारा राजा ?"

दूत ने शान्तिपूर्वक अपनी बात आगे कही—

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

"महाराज ! यह समय क्रोध करने का नहीं है। हमारे महाराज की सैन्य शक्ति अपार है और स्वयं हमारे महाराज भी अपौरुषेय बल धारण करने वाले हैं। अतः जैसा कि मैंने अभी निवेदन किया या तो उनकी शर्त को आप स्वीकार कर लें और फिर सुखपूर्वक अपना राज्य भोगें, या युद्ध के लिए प्रस्तुत हो जायँ। यदि युद्ध करने का ही आप निश्चय करेंगे तो उसका परिणाम इतना भयंकर होगा महाराज कि आपके पास फिर पछताने के अतिरिक्त कुछ शेष नहीं रहेगा। मुझे इतना ही संदेश आपको देना था महाराज !"

"ठीक है तुम्हारा संदेश हमने सुन लिया। अब तुम जा सकते हो।"—महाराज प्रजापाल ने उसी प्रकार क्रोध और खीझ के साथ कहा।

दूत ने महाराज को नमन किया और जाते-जाते इतना और कहा—

"आपके उत्तर की प्रतीक्षा हमारे महाराज मध्याह्न तक करेंगे महाराज ! उसके पश्चात्.....।"

उसके अन्तिम शब्द किसी ने नहीं सुने। मन्त्रिगण तत्परता से विचार-विमर्श में डूब गये। सबकी एक ही राय बन रही थी—शत्रु महाशक्तिशाली है। उसके साथ युद्ध करना सर्वनाश को निमंत्रण देना है। अतः अब वे मौन होकर महाराज प्रजापाल द्वारा ही कुछ कहे जाने की प्रतीक्षा करने लगे।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

राजा स्वयं भी इस स्थिति को जान रहे थे। किन्तु वे आसानी से अपने अभिमान को भी नहीं त्याग पा रहे थे। वे बोले—

"मन्त्रिगण ! कहिए, आप लोगों की क्या राय है ?"

प्रधान अमात्य के माथे ही मन्त्रिमण्डल की राय से राजा को अवगत कराने का दायित्व आ पड़ा था। उसने हाथ जोड़कर निवेदन किया—

"महाराज ! अपराध क्षमा हो। कोई मार्ग हम लोगों को दिखाई नहीं देता..... ।"

"अर्थात् मैं उस आततायी राजा की शर्त को स्वीकार करके एक साधारण श्रमिक की भाँति उसके शिविर तक जाऊँ ? क्या आप लोगों की यही सम्मति है ?"

"प्रभु ! विषाद न करें। समय-समय की बात है। राजनीति भी यही कहती है कि यदि शत्रु प्रबल हो तो समय विशेष के लिए उसके सामने झुक जाना ही श्रेयस्कर है। सर्वनाश से तो यह बेहतर ही है।"

"ठीक है, ठीक है। मैं समझ गया। आज मुझे अपने राजगौरव को ताक पर रखकर उस राजा की शर्त को मानना ही होगा। लाइये, मँगाइये कुल्हाड़ी, जो काम करना ही है उसमें फिर विलम्ब कैसा ?"

उज्जयिनी नगरी ने उस दिन वह अद्‌भुत दृश्य आखिर देखा ही— उनका राजा कन्धे पर कुल्हाड़ी रखे सिर झुकाए अकेला चला जा रहा था।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

इस रूप में जब महाराज प्रजापाल श्रीपाल के शिविर में पहुँचे तब उन्हें देखकर महाराज श्रीपाल तथा मैना-सुन्दरी एकदम आगे बढ़े। उन्होंने प्रणाम किया। श्रीपाल ने कुल्हाड़ी उनके हाथ से लेकर एक ओर रख दी और अत्यन्त विनयपूर्वक कहा—

"महाराज प्रजापाल ! पिताजी ! मेरे इस एक अपराध को क्षमा करें..... ।"

महाराज प्रजापाल ने भी अब श्रीपाल और मैनासुन्दरी को पहचान लिया था। उन्होंने कहा—

"श्रीपाल ! मैनासुन्दरी ! अरे, यह तुम लोग हो ? तब फिर तुम लोगों ने यह क्या नाटक रचा है ? क्यों उज्जयिनी को घेरा और क्यों मुझे इस प्रकार अपमानित करने की योजना की ?"

श्रीपाल ने अत्यन्त विनयपूर्वक उत्तर दिया—

"पिताजी ! समर्थ से समर्थ तथा गुणवान से गुणवान मनुष्य भी अपने अभिमान के कारण पतन के गर्त में जा गिरता है। आप प्रत्येक दृष्टि से पूज्य हैं। किन्तु आपके मन में जो अभिमान घर करके बैठा है वही आपका वास्तविक शत्रु है। हम उस शत्रु का सर्वनाश करना चाहते थे। स्मरण कीजिये, आपने हमारे विवाह से पूर्व मैना से क्या प्रश्न किये थे और जिनधर्म में अटूट श्रद्धा रखने वाली इस मैना ने उन प्रश्नों के क्या उत्तर दिये थे। उसने कहा कहा था कि पिताजी ! आप अभिमान न करें। इस संसार

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

में किसी का भी अभिमान नहीं रहा। प्रत्येक प्राणी स्वयं अपने ही कर्मों के शुभाशुभ परिणामों को भोगता है। कोई किसी को कुछ दे नहीं सकता। कोई किसी का कुछ ले नहीं सकता—स्मरण आता है न आपको ?"

"हाँ बेटा श्रीपाल ! याद है, मुझे वे सब बातें याद हैं। और आज उन्हें याद करके मैं स्वीकार करता हूँ कि मैंने भूल की थी—भयानक भूल की थी। उस समय अपने अभिमान में मैंने स्वप्न में भी नहीं सोचा था कि जिस कोढ़ी के साथ मैं मैना का विवाह कर रहा हूँ वह न केवल कभी रोगमुक्त ही हो जायगा, बल्कि एक दिन राजाओं का भी राजा बनकर सूर्य की भाँति जगमगायेगा..... ।"

"बस कीजिए, पिताजी ! अब हमें अधिक लज्जित न कीजिए और हमने जो अपराध किया है इसके लिए हमें क्षमा कीजिए।"

"तुमने कोई अपराध नहीं किया बेटे श्रीपाल ! बल्कि तुमने मेरा बहुत बड़ा उपकार ही किया है। तुमने मेरी आँखें खोल दी हैं। सदा-सदा के लिए मेरे हृदय से अभिमान के विष को निकाल बाहर किया है । तुम और मैना दोनों धन्य हो, श्रीपाल !"

"यह सब जिनप्रभु की कृपा है, पिताजी ! आइये, अब भीतर शिविर में पधारिए।"

"अरे कौन-सा शिविर ? चलो, चलो, राजमहलों में चलो तुम लोग। तुम्हारे सैनिकों की समुचित व्यवस्था हो जायगी। चिन्ता न करो। चलो महलों में।"

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सुन्दर, सजे हुए रथों में आरूढ़ महाराज प्रजापाल, महाराज श्रीपाल, रानी कमलप्रभा, मैनासुन्दरी तथा श्रीपाल की अन्य सभी रानियाँ जब राजपथ से होकर धीरे-धीरे राजमहलों की ओर बढ़े तब उज्जयिनी नगरी आनन्द की उत्ताल तरंगों में आन्दोलित हो उठी।

× × ×

राजा प्रजापाल का अन्तःपुर तो देवांगनाओं की क्रीड़ा-स्थली ही बन गया। मैनासुन्दरी की माता रूपसुन्दरी की प्रसन्नता का तो कोई पार ही नहीं था। अन्य राजरानियाँ भी उतनी ही प्रसन्न और उल्लसित थीं। महाराज श्रीपाल की अन्य सभी रानियाँ तथा राजा प्रजापाल के अन्तःपुर की अन्य रानियाँ—ये सभी मिलकर दिन-रात एक महोत्सव का-सा वातावरण बनाये हुए थीं। मैनासुन्दरी की विमाता सौभाग्यसुन्दरी का हृदय भी परिवर्तित हो चुका था। उसके हृदय का मिथ्यात्व-कलुष भी दूर हो गया था और वह भी जिन भगवान की पक्की आराधिका बन गई थी।

इस प्रकार राजा प्रजापाल के अन्तःपुर में से उठकर जैनधर्म की जय-जयकार का मंगलघोष समस्त उज्जयिनी नगरी में व्याप्त हो रहा था।

इस आनन्दोत्सव को और भी उल्लासमय बनाने के लिए महाराज श्रीपाल ने एक नाटक खेले जाने का आदेश

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

दिया। उनके साथ जो नाटक-मंडलियाँ थीं, उनमें से एक मंडली ने नाटक की तैयारी तुरन्त कर डाली।

राजमहल के विशाल चौगान में नाटक का आयोजन किया गया। प्रजा उस नाटक को देखने के लिए उमड़ पड़ी। राजा, रानियाँ, मंत्रिगण, सेनानायक, श्रेष्ठिगण तथा अन्य नागरिक सब यथास्थान बैठे थे। सभी के हृदय फूलों के समान खिले हुए थे।

नाटक आरम्भ हुआ।

सुन्दर चित्रों, पुष्पमालाओं, मणि-माणिक्यों से सजे रंगमंच पर विभिन्न वेश-भूषाओं में सजे अभिनेता तथा अभिनेत्रियाँ यथाक्रम आने लगे। उनके श्रेष्ठ अभिनय को समस्त उपस्थित जन-समुदाय एकटक, आनन्दित होकर देख रहा था। बीच-बीच में 'धन्य-धन्य' तथा 'वाह-वाह' की ध्वनि दर्शकों के बीच से उठती थी और अभिनेताओं के उत्साह का वर्धन करती जाती थी। प्रेरित होकर अभिनेता अपनी सम्पूर्ण श्रेष्ठ कला प्रदर्शित कर रहे थे।

उसी समय अचानक रंग में भंग उपस्थित हो गया।

घटना इस प्रकार घटित हुई।

उस नाट्य मंडली की एक प्रमुख नटी थी। जब रंगमंच पर उपस्थित होने का उसका समय हुआ तो वह उपस्थित नहीं हुई। मंडली का नायक घबराया हुआ सज्जा-कक्ष में गया और उस नटी को उदास मुद्रा में बैठा हुआ देखकर बोला—

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

"अरे! अरे!! तुम यहाँ ऐसे क्यों बैठी हो? मंच पर तुम्हारी प्रतीक्षा हो रही है। रंग में भंग हो रहा है। उठो-उठो, जल्दी चलो.....।"

"नहीं, आज मैं अभिनय नहीं कर सकूँगी।"—उस नटी ने उत्तर दिया। उसका स्वर भर्राया हुआ था।

"अभिनय नहीं करोगी? अरे भाग्यवान! यह तुम क्या कह रही हो? ऐसा भी क्या संभव है? नाटक चल रहा है। तुम्हारा प्रसंग है, और तुम कहती हो कि अभिनय नहीं करोगी। तो फिर अब क्या होगा? महाराज श्रीपाल क्या कहेंगे? मेरी तो मौत ही आई समझो। किन्तु आखिर बात क्या है? मैंने तुम्हें अपनी पुत्री के समान प्यार किया है, और तुम आज इस परीक्षा की घड़ी में मुझे धोखा दे रही हो? शुभे! मेरी बात मान लो। इस समय तो मेरी रक्षा करो। समय अधिक नहीं है। चलो, उठो। फिर तुम्हें जो कहना हो वह नाटक समाप्त होने के बाद कह लेना। उठो बेटी!"

इतने प्रेम और आग्रहपूर्वक समझाने पर आखिर वह नटी प्रस्तुत हो गई और रंगमंच पर जा पहुँची। उसके सौन्दर्य की जगमगाहट से रंगस्थल झलक-झलक कर उठा।

घोर विषाद की मुद्रा में वह मंच पर आगे बढ़ी और उसने एक छंद कहा—

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

कहँ मालव कहँ शंखपुर, कहँ बब्बर कहँ नट्ट ।
नाच रही सुरसुन्दरी, विधि अस करत अकाज ।।

नटी के दुखी स्वर में यह दोहा सुनते ही राजा प्रजापाल ने बड़े ध्यान से उसे देखा । वे सोचने लगे—'सुरसुन्दरी ! यह तो मेरी प्यारी बेटी का ही नाम है जिसे मैंने शंखपुर के राजा अरिदमन के साथ ब्याहा था । फिर यह नटी क्या कह रही है ? इसकी सूरत भी बिलकुल मेरी बेटी से ही मिलती है । क्या.....क्या ऐसा भी हो सकता है कि यह नटी मेरी बेटी सुरसुन्दरी ही हो ?'

राजा प्रजापाल यह विचार कर ही रहे थे कि उस नटी से रहा न गया । वह बड़े ही आर्तस्वर में "माँ, माँ" कहती हुई मंच से उतरकर रानी सौभाग्यसुन्दरी के पास गई और उससे लिपटकर सिसक-सिसककर रोने लगी ।

वस्तुतः रंग में भंग हो गया । उपस्थित समस्त समुदाय ने जब राजकुमारी सुरसुन्दरी को पहिचान लिया तो वह दुख के कारण स्तब्ध रह गया ।

राजा प्रजापाल तथा रानी सौभाग्यसुन्दरी के दुख का तो वर्णन ही कैसे किया जा सकता है ? अपनी प्यारी बेटी, एक राजकुमारी को इस प्रकार एक सामान्य नटी की स्थिति में देखकर उनका कलेजा फट गया । हृदय में वेदना के तप्त शूल चुभने लगे । वे किंकर्त्तव्यविमूढ़ अपनी बेटी को दुलारने लगे । उनके मुख से कोई शब्द निकल नहीं सका ।

उस दुखद स्थिति को महाराज श्रीपाल ने सम्हाला ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

उन्होंने तुरन्त नाटक स्थगित किये जाने तथा समस्त उपस्थित समुदाय को क्षमायाचना सहित अपने-अपने घर जाने का आदेश दिया।

जब एकान्त हुआ तब उन्होंने सुरसुन्दरी को आश्वस्त करते हुए कहा--

"तुम्हें जो कुछ भी दुख सहने पड़े हों, अब उनका अन्त आ गया है। जिस किसी भी कारण से तुम्हें जहाँ-जहाँ भी भटकना पड़ा हो, वह भटकन अब समाप्त हो गई है। तुम अपने माता-पिता की गोद में पहुँच गई हो। अब तुम प्रत्येक दृष्टि से सुरक्षित हो। अतः अब तुम अपने मन को शान्त करो, अपने अतीत के कष्टों को भूल जाओ और प्रसन्न हो जाओ।"

श्रीपाल महाराज द्वारा इतना कह दिये जाने पर राजा प्रजापाल भी कुछ संयत और स्थिर हुए। उन्होंने सुरसुन्दरी के सिर पर स्नेहपूर्वक हाथ फेरते हुए पूछा—

"बेटी! तेरी यह स्थिति कैसे हुई? तुझे तो मैंने बड़े समारोहपूर्वक राजा अरिदमन के साथ ब्याहा था?"

सुरसुन्दरी की सिसकियाँ अब थम गई थीं। उसने अपनी करुण कथा इस प्रकार सुनाई—

"हम लोग विवाह के पश्चात् सकुशल शंखपुर पहुँच गये थे। किन्तु उस दिन शुभ मुहूर्त न मिलने के कारण नगर-प्रवेश न कर सके। हम लोगों के साथ के बहुत से

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

लोग अपने स्वजनों से मिलने-जुलने चले गये। हमने इसमें कोई हानि नहीं समझी।

"किन्तु रात्रि को अचानक डाकुओं के एक बड़े सशस्त्र दल ने हम पर आक्रमण कर दिया। वे, आपके दामाद तो अपने प्राण बचाकर न जाने किधर निकल गये, किन्तु मैं उन दुष्ट डाकुओं हाथ में पड़ गई। वे डाकू मुझे नेपाल ले गये और वहाँ किसी व्यक्ति के हाथ बेच दिया। वह व्यक्ति मुझे बब्बरकुल लाया और वहाँ पर उसने मुझे एक वेश्या के हाथ बेच दिया जो नाचने-गाने का धंधा करती थी।

"पिताजी ! मेरी करुण-कथा यहाँ से और भी करुण हो गई। मुझे अपनी इच्छा के विरुद्ध नाचना-गाना सीखना पड़ा और मैं नटी बन गई। वहाँ के राजा महाकाल नाटकों के बड़े शौकीन हैं। मुझे उनकी नाट्य-मण्डली में प्रविष्ट होना पड़ा। और अन्त में जब श्रीपाल महाराज वहाँ पहुँचे तथा राजकुमारी मदनसेना के साथ इन्होंने विवाह किया, तब राजा महाकाल ने एक नाटक-मंडली भी इन्हें उपहार में दी। तभी से मैं इन्हीं के साथ हूँ। किन्तु मैंने अब तक किसी पर यह प्रकट नहीं होने दिया था कि मैं कौन हूँ। स्वयं को राजकुमारी कहकर प्रकट करने पर मुझे जिस लज्जा का अनुभव करना पड़ता उसे मैं सहन नहीं कर सकती थी।

"किन्तु पिताजी ! आज आप लोगों को देखकर, अपने ही

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

घर में, अपने ही माता-पिता और स्वजन-सम्बन्धियों के समक्ष नटी के रूप में मैं कैसे रहती ? अतः आज मैंने स्वयं को प्रकट कर ही दिया।

"पिताजी ! आज मैं अच्छी तरह जान गई हूँ कि मुझे जो कुछ भी दुख भोगने पड़े हैं वे स्वयं मेरे अपने ही कर्मों के कारण। क्योंकि आपने तो अपनी जान में मुझे अच्छी तरह ब्याहा था। किन्तु मेरा मिथ्यावाद और मेरे अशुभ कर्म मुझे इस दुखद स्थिति में ले गये।

"पिताजी ! मैनासुन्दरी वास्तव में हमारे कुल का दीपक है। वह एक कल्पवृक्ष के समान है, जबकि मैं एक विषवृक्ष हूं। जैनधर्म में उसकी श्रद्धा ही उसके सुखी जीवन का सार है, यह बात मैं आज अच्छी तरह समझ गई हूँ और आपने भी यह देख ही लिया है। वास्तव में मैना-सुन्दरी दोनों कुलों को प्रकाशित करने वाली मणि-दीपिका ही है।"

इतना कहकर सुरसुन्दरी ने अपनी कथा समाप्त की। सब लोग उसे समझा-बुझाकर और दुखमय अतीत को भूल जाने के लिए कहकर राजमहलों में ले गये।

राजा प्रजापाल को उनकी खोई हुई बेटी मिल गई।
उन्हें सच्ची सम्यक्त्व दृष्टि भी मिल गई।

वह नाटक किसी अन्य चरण से आरम्भ होकर किसी अन्य ही सुखद चरण पर समाप्त हुआ।

शीघ्र ही शंखपुर के लिए दूत भेजकर राजा अरिदमन

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

को सूचना देकर बुलवाया गया और फिर प्रसन्नतापूर्वक सुरसुन्दरी को उनके साथ विदा किया गया।

श्रीपाल महाराज की बाल्यावस्था में जिन सात सौ कोढ़ियों ने उन्हें शरण दी थी और उनका साथ निभाया था, उन्हें भी श्रीपाल महाराज ने ढूँढ़-ढूँढ़कर बुलवाया और एक सच्चे महान पुरुष की भाँति उन सबको 'राणा' की पदवी से विभूषित करके अपनी सेना में सेनानायकों के पद पर नियुक्त किया।

इस प्रकार श्रीपाल महाराज की महान् जीवन गाथा अपने भव्य अन्त की ओर तेजी से बढ़ रही थी। उसी समय उनके स्वर्गीय पिताजी राजा सिंहरथ के समय का वृद्ध तथा परम स्वामिभक्त मन्त्री मतिसार भी वहाँ आ पहुंचा। मतिसार ने अपने प्राणों की भी परवाह न करके श्रीपाल के जीवन की रक्षा की थी। आज उन्हें देखकर श्रीपाल महाराज के आनन्द की कोई सीमा न रही। उन्हें ऐसा अनुभव हुआ मानों उन्हें अपने पिता ही दूसरे रूप में प्राप्त हो गये हों।

महाराज श्रीपाल ने मतिसार को उनके वृद्धत्व तथा अचल स्वामिभक्ति का सम्मान करते हुए अपना प्रधान अमात्य नियुक्त किया।

सुख के वे दिन एक-एक कर बीतने लगे। □

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

एक दिन मंत्री मतिसार ने उपयुक्त समय देखकर श्रीपाल महाराज से कहा—

"महाराज ! आपने इस जीवन में अनन्त यश तथा ऋद्धि-सिद्ध प्राप्त कर ली है। अनेक राज्य आपके अधीन हैं। कुल-परिवार से भी आप सम्पन्न तथा सानन्द हैं। किन्तु एक कार्य आपके लिए अब भी शेष रह गया है।"

"वह कौनसा कार्य है मंत्रिवर !"

"प्रभु ! आपके पिता के राज्य पर अब भी आततायी अजितसेन आरूढ़ है। आपका पुनीत कर्त्तव्य है कि आप अपने पैतृक राज्य को हस्तगत करें और अपनी प्रजा को सुखी करें, जोकि अजितसेन के शासन में अनेक प्रकार के कष्ट भोग रही है। एक प्रकार से यह आप पर अपने स्वर्गीय पूज्य पिताजी का ऋण है। आपको इस ऋण से भी अब उऋण हो जाना चाहिए।"

मतिसार का यह कथन उचित था। महाराज श्रीपाल ने इसे स्वीकार किया। किन्तु कहा—

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

"मंत्रिवर ! आपका कथन यथार्थ है। लेकिन मैं व्यर्थ के रक्तपात तथा हिंसा से बचना चाहता हूँ। अतः उचित यही होगा कि किसी चतुर दूत को काका अजितसेन के पास चम्पापुरी भेजा जाय और उन्हें समझाया जाय कि वे स्वेच्छा से मेरा राज्य मुझे सौंप दें।"

"प्रभु ! आपका विचार आपके उच्च आदर्शों के अनुकूल ही है। ऐसा प्रयत्न अवश्य किया जा सकता है। किन्तु मुझे सन्देह है कि अहंकारी अजितसेन आपकी इस नीतिसंगत बात को स्वीकार करेगा। मुझे तो युद्ध अनिवार्य दिखाई पड़ता है। विशाल लोकहित के लिए यदि एक बार युद्ध भी करना पड़े तो वह अनुचित नहीं है।"

"ठीक है, यदि काकाजी को सद्बुद्धि नहीं आती है तो फिर युद्ध भी करना ही पड़ेगा। किन्तु पहले एक बार आप किसी दूत को वहाँ भेज दीजिए।"

"जो आज्ञा, महाराज ! चतुर्मुख नामक हमारा दूत बहुत चतुर और नीतिज्ञ है। आज्ञा हो तो उसी को भेज दिया जाय ?"

"हाँ, ठीक है। उसे कहिए कि काकाजी को समझाने का वह पूरा यत्न करे।"

सभी आवश्यक बातें समझा-बुझाकर मंत्री मतिसार ने चतुर्मुख को उसी दिन चम्पापुरी के लिए रवाना कर दिया।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

महाराज अजितसेन की राजसभा में जब वह पहुँचा तो राजा ने उसे उचित आसन दिया और पूछा—

"कहो चतुर्मुख ! कैसे आना हुआ ? क्या संदेश लाये हो ?"

चतुर्मुख ने राजा का पुनः अभिवादन किया और कहा—

"महाराज ! मुझे आपके भतीजे महाराजाधिराज श्रीपाल ने आपकी सेवा में भेजा है। उनका संदेश है कि आपने बाल्यकाल में ही उन्हें अपने पिता के राज्य से वंचित कर दिया था। यह आपका एक बहुत बड़ा अनैतिक कार्य था। यह राजद्रोह भी था और बालद्रोह भी। किन्तु श्रीपाल महाराज का कथन है कि जो कुछ भी हो गया वह हो गया, लेकिन अब भी समय है। आप विचार करें तथा उनका राज्य उन्हें शान्तिपूर्वक सौंप दें।"

"राज्य सौंप दूँ ? और शांतिपूर्वक ?"—कहते-कहते अजितसेन खूब जोर से हँस पड़ा। हँसी रुकने पर उसने आगे कहा—"चतुर्मुख ! तुम बड़े चतुर हो यह मैं जानता हूँ। किंतु मुझे प्रतीत होता है कि तुम भोले भी कम नहीं हो। इसीलिए मुझसे राज्य माँगने आये हो और वह भी शांति-पूर्वक। अरे भाई ! राज्य न तो आसानी से प्राप्त किये जाते हैं और न ही आसानी से किसी को दे दिये जाते हैं। राज्य तलवारों की नोक से लिये जाते हैं और तलवारों की तीक्ष्ण धारों से ही उनकी रक्षा भी की जाती है। कुछ समझे ?"

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

"समझ रहा हूँ महाराज ! आपका आशय शायद यही है कि आप बिना युद्ध किये नहीं मानेंगे ।"

"शायद नहीं, निश्चित । चतमुंख उस लड़के श्रीपाल से कहना कि शेर की गुफा में प्रवेश करने का दुस्साहस न करे ।"

"महाराज ! भूलिए नहीं कि श्रीपाल महाराज ने अपने प्रबल पराक्रम से अनेकों राजाओं को अपने अधीन किया है.....।"

"वे राजा नहीं, मामूली लुटेरे होंगे ! सिंह नहीं, शृगाल होंगे । ऐसे शृगालों के बल पर कूदने वाले श्रीपाल को तुम मेरी बात अच्छी तरह समझा देना कि अजितसेन शृगाल नहीं, सिंह है । उसे वह चुपचाप सोने दे, छेड़कर जगाये नहीं । अन्यथा इस बार उसे जीता नहीं छोड़ूंगा नहीं । समझे ?"

चतुर्मुख ने समझ लिया कि अजितसेन मदान्ध है । यह किसी तरह मानेगा नहीं और अब इसका सर्वनाश निकट ही है । फिर भी उसने अंतिम चेतावनी देना उपयुक्त समझा, कहा—

"यदि आपका यही अन्तिम उत्तर है महाराज अजितसेन ! तो मैं भी आपको अंतिम चेतावनी देने के लिए विवश हूँ । ध्यान देकर सुन लीजिए—श्रीपाल महाराज का खड्ग जब एक बार उठ जायगा तब आकाश में बिज-

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

लियों का नर्तन होगा और वे बिजलियाँ आपके इस अहं-कारी शीष पर गिरकर इसे चूर्ण-चूर्ण कर देंगी।"

अजितसेन हँस पड़ा और बोला—"अब तुम जा सकते हो चतुर्मुख! बातों का तो कहीं अन्त होता नहीं। अतः अब युद्धभूमि में ही शेष बातें होंगी—तलवारों से।"

चतुर्मुख चम्पानगरी से लौट आया। अपने मन में वह निराश इसलिए नहीं था कि वह अजितसेन के अभि-मानी और क्रूर स्वभाव को जानता था। उसे केवल चिन्ता थी—युद्ध होगा, और दुष्ट अजितसेन स्वयं तो नष्ट होगा ही, अपने साथ अन्य हजारों निरपराध प्राणियों का भी संहार करा देगा।

महाराज श्रीपाल तथा मंत्री मतिसार को उसने अजितसेन की राजसभा में जो वार्तालाप हुआ था वह अक्षरशः कह सुनाया। सुनकर राजा और मंत्री दोनों ही कुछ क्षण मौन रहे। अन्त में मंत्री ने ही कहा—

"महाराज! अब तो कोई उपाय नहीं है। युद्ध अनि-वार्य है।"

"यही सोच रहा हूँ। सैन्य सज्जित हो। प्रयाण आरम्भ हो। किन्तु! मंत्रिवर, यथासम्भव रक्तपात कम से कम हो तथा काकाजी को जीवित ही बंधन में डालकर मेरे समक्ष उपस्थित किया जाय। मैं चाहता हूं कि उनका हृदय परिवर्तन हो। प्रयत्न तो करना ही चाहिए।"

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

"जो आज्ञा, महाराज ! कल प्रातःकाल ही कूच के नगाड़े बज उठेंगे ।

× × ×

कौन जाने इस अभागी मानव जाति ने युद्ध की विभीषिका का आविष्कार किस युग में किया था, किन्तु एक बार जब यह अग्नि भड़क उठती है तब फिर उसे शांत करना कठिन हो जाता है । स्वयं आत्मविनाश करता हुआ मानव भी इसे सदा-सदा के लिए तिलांजलि क्यों नहीं दे देता, यह समझ से परे की बात है ।

श्रीपाल महाराज का सैन्य अजितसेन के सैन्य से टकरा रहा था और दिशाएँ 'त्राहि-त्राहि' पुकार रही थीं । पदाति सैनिक पदातियों से भिड़े हुए थे । अश्वारोही सैन्य अश्वारोही सैन्य को खूँदे डाल रहा था । रथी रथियों से मुठभेड़ कर रहे थे । गजदल गजदल से टकरा रहे थे, मानों अनेक विशालकाय पर्वत एक दूसरे से टकरा रहे हों ।

भीषण था वह संग्राम । किन्तु श्रीपाल महाराज का सैन्य इतना सुव्यवस्थित था कि युद्ध का अन्त शीघ्र ही आ गया । अजितसेन के सैन्य में निराशा भर गई और निराशा ने उसमें भगदड़ मचा दी ।

अपनी सेना को मार खाकर जिधर जिसका सींग समाए उधर ही भागता देखकर स्वयं अजितसेन युद्धक्षेत्र में उतर पड़ा । वृद्धावस्था होते हुए भी वह बड़े पराक्रम

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

से लड़ा। किन्तु उसकी शक्ति सीमित थी तथा न्यायपक्ष भी उसके विपरीत था। अतः उसकी एक भी न चली। श्रीपाल महाराज के सात सौ सेनानायकों ने उसे चारों ओर से घेर लिया और फिर उसे बंधन में कस लिया।

बन्दी अजितसेन को जब महाराज श्रीपाल के सामने उपस्थित किया गया तब श्रीपाल ने स्वयं आगे बढ़कर उसके बंधनों को काट दिया और एक सुन्दर आसन पर उन्हें बैठाकर विनम्र शब्दों में कहा—

"पूज्य काकाजी ! जो कुछ भी बीत गया, घटित हो गया, उसे भुला दीजिए। आप इस राज्य को अपने पास ही रखिए। मुझे इसकी आवश्यकता नहीं है। मेरी केवल एक ही प्रार्थना है कि भविष्य में आप कभी भी प्रभु का विस्मरण न करें। प्रजा को पुत्रवत् मानें तथा अहंकार से दूर रहें। आशा है मेरी इतनी-सी विनय को आप स्वीकार करेंगे।"

यह जो कुछ भी हुआ सब कुछ महाराज अजितसेन की कल्पना के विपरीत था। प्रथम तो अपने अभिमान में चूर वे श्रीपाल जैसे नवयुवक के हाथों अपनी पराजय की कल्पना भी नहीं कर सकते थे। उसके बाद जब पराजय हो ही गई और वे बन्धन में पड़ ही गये, तब तो उन्होंने सोचा था कि अब श्रीपाल उनसे भयानक बदला लेगा। उसके प्रति उन्होंने जो अन्याय किया था, वह उन्हें याद था, ज्ञात था। अतः उनका यह विचार करना स्वाभाविक

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

ही था कि श्रीपाल उन्हें कड़ी से कड़ी सजा देगा। उन्हें भीषण रूप से अपमानित करेगा। उन्हें जला-जलाकर, तिल-तिलकर मरने के लिए छोड़ देगा।

अजितसेन की कल्पना का यह रंग था।

किन्तु महामना, महानात्मा श्रीपाल महाराज ने तो ऐसा कुछ भी नहीं किया। उल्टे पूज्यभाव से उनका सत्कार किया तथा राज्य भी लौटा देने का प्रस्ताव किया।

यह देखकर महाराज अजितसेन गहन विचारों के अतल-तल में डूब गये।

और जब वे उस अतल विचार-लोक से उबरकर ऊपर आये तब तक उनके लिए सृष्टि बदल चुकी थी।

वे अब एक छोटे-से बालक का राज्य हड़प लेने वाले लोभी,अत्याचारी, अनाचारी, अहंकारी, क्रूर राजा अजितसेन नहीं थे।

वे अब थे—मुनि अजितसेन!

उस अल्प विचार-काल में ही उन्होंने गहन विचार किया था—अरे, मेरी बुद्धि को क्या हो गया था? मैंने एक बालक के राज्य को हड़प लिया था? हाय! गोत्र-द्रोह करने के कारण मेरी कीर्त्ति का क्षय हुआ। राज-द्रोह करके मैंने नीति का नाश किया। बाल-द्रोह करके मैंने अपनी सद्गति के मार्ग को अवरुद्ध किया। इतने-इतने

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

भीषण पाप मैंने किये हैं। अब तो नरक-गति के सिवाय मेरी अन्य क्या गति हो सकती है? मैं इतना वृद्ध होकर भी राज्यलोभ से चिपटा रहा और यह बालक—मेरे लिए तो बालक ही है—कितना उदार है, कितना महान है, कैसा देवोपम इसका व्यवहार है!

सोचते-सोचते उन्होंने निश्चय किया—पापों की इस गठरी को अपने सिर से उतार फेंकना होगा। पापों से मुक्ति का एक मात्र उपाय जिनराज की प्रव्रज्या ग्रहण करना ही है। आत्मा का कर्म-मल इसी उपाय से दूर हो सकता। यही मुक्ति का एक मात्र प्रशस्त पन्थ है।

महाराज अजितसेन के मन में इस प्रकार के उच्च विचार उत्पन्न हुए और उनकी मोह-मदिरा का नशा काफूर हो गया। अशुभ भावनाएँ नष्ट हो गईं, शुभ भावनाओं का उदय हुआ तथा परिणामतः पाप-स्थिति नष्ट हो गई। कर्म ने सहायता पहुँचाई और तुरन्त ही उन्हें अपने पूर्वजन्म की स्मृति हो आई।

वे महाराज अजितसेन के स्थान पर उसी क्षण महा-मुनि अजितसेन बन गये।

उसी समय श्रीपाल महाराज तथा अन्य उपस्थित जन के समक्ष गार्हस्थ्य का त्याग कर उन्होंने चारित्र अंगी-कार कर लिया।

महामुनि अजितसेन ने महाराज अजितसेन की परा-जय में से विजय का अमृत शोध लिया।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

मनुष्य के जीवन में ऐसे महान् परिवर्तनों के पल कुछ इने-गिने ही आते हैं। जो भव्य-जीव अपनी ज्ञानबुद्धि से उन पलों को पकड़ लेते हैं वे भव-सागर से तर जाते हैं।

मुनि अजितसेन के जीवन में भी वह पल आया और वे पल मात्र में बदल गये।

श्रीपाल महाराज ने यह अद्‌भुत और परम मंगलमय परिवर्तन देखा तो सपरिवार मुनि अजितसेन की तीन बार प्रदक्षिणा—वन्दना करके कहा—

"परमपूज्य ! आप सांसारिक जीवन में मेरे काकाजी होने के कारण से भी पूज्य थे, किन्तु अब तो मुनि-जीवन अंगीकार कर लेने पर आप मेरे ही नहीं, समस्त जीव-जाति के लिए पूज्य हो गये हैं। आप धन्य हैं ! इस रूप में आपके शुभ दर्शन करके हम भी धन्य हो गए हैं। संसार के समस्त राग-द्वेषों का त्याग करके आप सर्वथा निष्पाप तथा निष्काम जीवन के पुण्य-पथ पर अग्रसर हो गये हैं अब आप मुक्ति-मर्ग के महायात्री हैं। हम बारम्बार आपका वन्दन करते हैं।"

मुनि अजितसेन के चेहरे पर अब एक अवर्णनीय शान्ति विराजमान थी। एक अनासक्त आत्मा का तेज उनके मुखमण्डल से विकीर्ण हो रहा था। उनकी दृष्टि जिधर भी उठ जाती थी, उधर ही प्रफुल्लित कुसुमों का सुवास महक ऊठता था।

वे शान्तिपूर्वक अपने आसन से उठे, आशीर्वाद का

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

दाहिना हाथ उन्होंने कुछ ऊँचा किया और फिर एक दिशा की ओर निर्निमेष दृष्टि से देखते हुए वे गज गति से चल पड़े।

× × ×

आज महाराज श्रीपाल ने कुछ खोया था, कुछ पाया भी था। मौन, विचारमग्न उन्होंने हाथी पर बैठकर चम्पानगरी में प्रवेश किया। नागरिक प्रसन्न थे। वे महाराज श्रीपाल पर पुष्प-अक्षत तथा मौक्तिकों की वर्षा कर रहे थे। किन्तु श्रीपाल महाराज मौन ही थे। उन्हें ऐसा अनुभव होता था जैसे उनकी आत्मा किसी अन्य लोक में विचरण करने चली गई हो और केवल उनका शरीर ही उस समय उनके साथ हो।

चम्पानगरी का शासन भार सम्हालने के पश्चात् महाराज ने सबसे प्रथम मुनि अजितसेन के सांसारिक पुत्र राजसेन को बुलाकर कहा—

"भाई ! इस चम्पानगरी को छोड़कर शेष सभी राज्य जो मैंने विजित किए हैं, वे अब तुम्हारे हैं। मैं तुम्हें उनका शासक नियुक्त करता हूँ। जाओ, अपनी प्रजा को अपना ही पुत्र समझकर उसका पालन करना।"

इसके बाद श्रीपाल महाराज ने धवल सेठ के पुत्र की खोज कराई। जब वह आ पहुँचा तब उसे धवल सेठ की सारी सम्पत्ति सौंपते हुए उससे कहा—

"बेटा ! यह सारी सम्पत्ति अब तुम्हारी है। इसका

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सदुपयोग करना। तुम्हारे पिता ने यह सम्पत्ति अर्जित की थी, किन्तु उनकी बुद्धि भ्रष्ट हो गई थी और उसका दुष्परिणाम उन्हें भोगना पड़ा। पुत्र विमल ! तुम्हारा नाम सुन्दर है। अपने इस नाम को सार्थक करना। अपनी बुद्धि को भी सदैव विमल ही रखना। कभी कोई कष्ट हो तो मुझे स्मरण करना। अपने पिता के स्थान पर मुझे ही समझना।

इतना ही नहीं, धवल सेठ के उन तीन मित्रों को भी महाराज श्रीपाल ने बुलाकर अपना मन्त्री नियुक्त किया जिन्होंने धवल सेठ को सन्मार्ग बताने का प्रयत्न किया था। संयोगवश वे अपने कार्य में सफल नहीं हो सके थे, धवल सेठ को सन्मार्ग पर नहीं ला सके थे, किन्तु अपने कर्त्तव्य का निष्ठापूर्वक उन्होंने निर्वाह किया था। इसका उचित पुरस्कार श्रीपाल महाराज ने उन्हें प्रदान किया।

इस प्रकार श्रीपाल महाराज के राज्य में कोई असंतुष्ट नहीं रहा। कोई दीन या दुखी नहीं रहा। उन्होंने याचकों को बुला-बुलाकर उन्हें प्रेमपूर्वक इतना दान दिया कि लोग दानी कर्ण की कीर्त्ति को भी भूल गये।

प्रेम, सहानुभूति, परस्पर आदर भाव तथा शान्तिपूर्वक श्रीपाल महाराज का शासन-काल इसी प्रकार बहुत काल तक चलता रहा। प्रजा बहुत जल्दी यह भी भूल गई कि कभी वह दुखी भी थी। अब चारों ओर जो कुछ भी दिखाई देता था वह था—प्रेम, निस्वार्थ और निस्संग प्रेम ! □

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

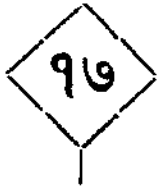

साहित्य में एक शब्द है, अतिशयोक्ति। प्रायः मनुष्य अपने कथन में अतिशयोक्ति का प्रयोग करते हैं। किन्तु यदि अतिशयोक्ति न मानी जाय तो हम कहेंगे कि श्रीपाल महाराज का लम्बा शासन-काल रामराज्य के समान ही था। उनके राज्य में सर्वत्र शान्ति थी, ऋद्धि और सिद्धि थी तथा प्रजा के गरीब से गरीब अथवा छोटे से छोटे व्यक्ति का भी सम्मान था, उसके विचारों का आदर था।

स्वयं श्रीपाल महाराज का हृदय धर्म की भावना से ओत-प्रोत रहता था। उनका अनुकरण करते हुए उनकी रानियाँ, राजपुरुष तथा समस्त प्रजा पूर्णरूप से धर्माचरण में ही लीन रहा करती थी। जैन मुनिराजों का आवागमन चम्पापुरी में प्रायः होता ही रहता था और सारी प्रजा उनके धर्मोपदेशों को श्रद्धापूर्वक श्रवण करती थी तथा निष्ठा-पूर्वक उनके आचरण का अनुगमन भी किया करती थी।

इसी प्रकार एक बार चम्पानगरी में राजर्षि अजितसेन का आगमन हुआ। विचरण करते हुए वे उधर आ निकले थे और नगरी से बाहर एक विशाल और हरे-भरे उद्यान

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

में ठहरे थे। राजा श्रीपाल को जब उनके शुभागमन का शुभ समाचार प्राप्त हुआ तब वे अपनी सभी रानियों तथा अन्य राजपुरुषों सहित उनके दर्शन-वंदन तथा उपदेश श्रवण हेतु उस उद्यान में जा पहुँचे। चम्पानगरी के हजारों नागरिक भी अपने धर्मानुरागी महाराज के साथ थे।

महाराज श्रीपाल तथा अन्य सभी लोगों ने विधिवत राजर्षि को वंदन किया। तत्पश्चात् राजर्षि ने अपनी अमृतवाणी में धर्मोपदेश दिया—

"हे भव्य प्राणियो! तुम अपनी आत्मा का कल्याण चाहते हो तो जिन भगवान के वचनों को श्रवण कर उन्हें अपने हृदय में धारण करो तथा मोह का परित्याग कर दो। मोह का त्याग किये बिना प्राणी को कभी शान्ति नहीं मिल सकती और भवचक्र का आवागमन कभी समाप्त नहीं हो सकता।

"हे भव्य प्राणियो! मनुष्य-जन्म बड़े पुण्यों के प्रभाव से प्राप्त होता है। उसमें ही आर्यभूमि में जन्म पाना तो और भी दुर्लभ है। पुण्यों के प्रभाव से ही मनुष्य-जन्म, आर्यभूमि तथा उत्तम कुल प्राप्त होते हैं। इस सुअवसर का पूरा-पूरा उपयोग आपको कर लेना चाहिए। सद्गुण की शरण खोजनी चाहिए, क्योंकि वह भी दुर्लभ है। पुण्य के प्रभाव से जिसे सद्गुण की शरण प्राप्त हो उसे मन-वचन-काया से धर्म की आराधना करनी चाहिए। अपनी ही बुद्धि को सर्वोपम न मानकर, अभिमान का सर्वथा

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

त्यागकर श्रद्धापूर्वक गुरु के द्वारा बताये हुए मार्ग पर चलना चाहिए। जो लोग इस प्रकार गुरु के द्वारा बताये हुए आगम प्रमाण' एवं अनुमान-प्रमाण से ध्यानपूर्वक गवेषणा करते हैं, उन्हीं को तत्त्वबोध की प्राप्ति होती है।

"अतएव, हे भव्य प्राणियो ! समय रहते प्रमाद का त्याग कर दो और प्रत्येक पल, प्रत्येक घड़ी जिनप्रभु का स्मरण करते हुए धर्म में लीन हो जाओ। इस संसार-सागर से पार उतरने का केवल यही मार्ग है। अरिहन्त, सिद्ध, आचार्य, उपाध्याय, साधु, दर्शन, ज्ञान, चारित्र और तप—यह नवपद ही भक्ति के वास्तविक साधन हैं। इन नवपदों के ध्यान से आत्मरूप प्रकट होता है, और जिसे आत्मदर्शन प्राप्त हो जाता है। उसके लिए संसार स्वयं ही मर्यादित हो जाता है।

"भव्य प्राणियो ! दर्शन शब्द में सम्यक्त्व की प्रधानता तो है ही, उसमें ज्ञान की भी प्रधानता है। एक ज्ञानी प्राणी अर्धक्षण में ही जितने पापों का क्षय कर सकता है, अज्ञानी प्राणी करोड़ों वर्ष पर्यन्त तप करके भी उतने कर्मों का क्षय नहीं कर सकता।

"हे भव्य जनो ! मोक्ष-प्राप्ति में सम्यक्त्व और ज्ञान की जितनी आवश्यकता बतलाई गई है, उतनी ही आवश्यकता शुद्ध चारित्र की भी है। अतः हे भव्य प्राणियो ! सम्यक ज्ञान-दर्शन-चारित्र को आधार बनाकर अपने जीवन को ऊपर उठाओ और मुक्ति के अधिकारी बनो।"

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

इतना कहकर राजर्षि अजितसेन मौन हो गये तब श्रीपाल महाराज ने हाथ जोड़कर उनसे विनय की—

"पूज्य गुरुदेव ! आपकी अमृत वाणी सुनकर हम धन्य हुए। अब यदि आपको असाता न हो तो कृपया यह बताने का कष्ट करें कि बाल्यावस्था में मुझे किस कर्म के उदय के कारण कुष्ठ रोग हुआ, और फिर किस शुभ कर्म के उदय से वह नष्ट हो गया ? किन कर्मों के कारण स्थान-स्थान पर ऋद्धि-सिद्धि की प्राप्ति हुई ? किस कारण से मैं समुद्र में गिरा ? किस कारण से मुझे भांड़ होने का कलंक लगा ? और फिर किस कर्म से मेरी ये सारी विपत्तियाँ दूर हो गईं ? भगवन ! आप दयालु हैं, परोपकारी हैं, त्रिकालज्ञा हैं। कृपया यह रहस्य मुझे बतलाइए, जिससे स्वयं मैं तथा अन्य जन भविष्य में अधिक सावधान रह सकें।"

श्रीपाल महाराज की यह प्रार्थना सुनकर राजर्षि ने क्षणभर अपने कमल-नेत्र बन्द किये और फिर बोले—

"हे श्रीपाल ! प्राणी कभी अपने कर्मों से बच नहीं सकता। इस जन्म के कर्मों का परिणाम उसे दूसरे जन्मों में भोगना पड़ता है। अतः अशुभ कर्मों के विपाक से डरने वाले प्राणी को अशुभ कर्म करने ही नहीं चाहिए। इस संसार में जो भी दुख-सुख प्राप्त होता है, वह सब पूर्व-कृत शुभाशुभ कर्मों का ही परिणाम होता है। राजा हो या रंक कोई भी इस चक्र से बच नहीं सकता। अतः पूर्व-संचित कर्मों को सम्यक् भाव से सहन करना चाहिए तथा नये अशुभ कर्म नहीं करने चाहिए।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

"जहाँ तक तुम्हारे पूर्वजन्म के वृत्तान्त का प्रश्न है उसका वर्णन मैं संक्षेप में करता हूँ, सुनो—

इस भरतक्षेत्र में हिरण्यपुर नामक एक नगरी है। कुछ काल पूर्व वहाँ श्रीकान्त नामक एक राजा राज्य करता था। उसकी रानी का नाम श्रीमती था। वह बड़ी ही गुणवती तथा शीलवती थी। जैनधर्म पर उसे अपार श्रद्धा थी।

राजा श्रीकान्त को शिकार करने का दुर्व्यसन था। उसकी रानी उसे बहुत समझाती थी कि वह इस प्रकार जीवहिंसा न किया करे, किन्तु राजा के हृदय पर इसका कोई प्रभाव नहीं पड़ता। जिस प्रकार पुष्करावर्त्त मेघ के बरसने पर भी मगसलिया पाषाण भीगता नहीं उसी प्रकार पत्नी के किसी उपदेश का कोई प्रभाव उस अज्ञानी राजा पर नहीं पड़ता था।

एक बार वह राजा अपने सात सौ उद्दण्ड कर्मचारियों को लेकर शिकार करने गया। वन में उसे एक मुनि के दर्शन हुए। किन्तु वह मूर्ख बोला—देखो, यह कोई कोढ़ी जा रहा है। राजा द्वारा ऐसे कहने पर उसके कर्मचारियों ने उन मुनिवर को नाना प्रकार के कटु-वचन कहे तथा कष्ट दिये। किन्तु मुनिवर तो शान्त ही रहे। अन्त में राजा और उसके साथी लौट गये।

एक दिन राजा अकेला ही शिकार खेलने गया। किसी मृग का पीछा करते-करते वह एक नदी के किनारे तक

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

जा पहुँचा। मृग तो सघन झुरमुटों में छिप गया किन्तु राजा को वहाँ एक मुनि के दर्शन हुए। उन्हें देखकर उसे फिर शैतानी सूझी। उसने मुनि को कान पकड़कर उठाया और नदी के जल में डबो दिया। कुछ क्षण बाद जब उसे कुछ दया आई तब मुनि को उसने जल से बाहर निकाल दिया और मूर्च्छित अवस्था में ही उन्हें छोड़कर वह घर लौट आया।

घर आकर जब इस घटना का वर्णन उसने अपनी रानी से किया तब रानी ने बड़े दुःख से कहा—"प्राणनाथ! आपने यह बड़ा ही अनुचित कार्य किया है। किसी सामान्य जीव को भी कष्ट नहीं देना चाहिए, किन्तु आपने तो पूज्य मुनिवर को पीड़ा पहुँचाई है। आपको इस पाप का फल न जाने कब तक भोगना पड़ेगा?"

"अब ऐसा नहीं करूँगा," कहकर राजा उस घटना को भूल गये।

एक दिन वह राजा अपने महल के झरोखे में बैठा था कि उसी समय गोचरी के निमित्त से एक मुनि उधर से आ निकले। उन्हें देखते ही राजा पहले की सब बातें भूल गया। क्रोधित होकर उसने अपने सेवकों को आज्ञा दी—"इस भिक्षुक ने सारी नगरी को भ्रष्ट कर डाला है। इसे इसी समय नगर से बाहर निकाल दो।"

अज्ञानी राजा के सेवक भी अज्ञानी ही थे। उन्होंने धक्के दे-देकर मुनि को बाहर निकालना आरम्भ किया। किन्तु

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

उसी समय यह दृश्य रानी ने देख लिया और जब उसे यह पता चला कि यह सब राजा की ही आज्ञा से किया जा रहा है तो वह तुरन्त राजा के पास आई और बोली—"नाथ ! आखिर आपको हो क्या गया है ? अभी उस दिन आपने प्रतिज्ञा की थी कि ऐसा कुकर्म फिर कभी नहीं करेंगे और आज फिर आप इन मुनि के साथ ऐसा दुर्व्यवहार कर रहे हैं ? ठीक है, जब आपको नरक में ही जाना है तो कोई आपको रोक भी कैसे सकता है ?"

रानी द्वारा इस प्रकार राजा की भर्त्सना किये जाने पर उसे अपनी भूल का विचार आया। उसे खेद भी हुआ। उसने तुरन्त अपने सेवकों को भेजकर मुनिवर को आदर-पूर्वक महल में बुलवाया और उनसे क्षमा-याचना की। रानी ने भी मुनिवर से कहा—

"पूज्य मुनिवर ! मेरे पति अज्ञानी हैं। इनसे अपराध हुआ है। इन्हें क्षमा कीजिए तथा साथ ही कुछ ऐसा उपाय बताइये कि इनके पापों का प्रायश्चित्त हो सके।"

मुनिवर शान्त थे। सुख-दुख में समभाव धारण करने वाले थे। प्रत्येक प्राणी पर उनके हृदय में प्रेम तथा दया का सागर लहराता था। उन्होंने शांत स्वर में कहा—

"हे भद्रे ! राजा ने पाप तो भयंकर किया है। इससे छुटकारा सरलता से अथवा एकाएक तो नहीं मिल सकता। किन्तु फिर भी यदि इन्हें पश्चात्ताप है, तो इन्हें नवपद की आराधना करनी चाहिए। आयम्बिल व्रत

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

रखना चाहिए। ऐसा करने से कालान्तर में इन्हें अपने पाप से मुक्ति मिल सकेगी।"

इस प्रकार की आराधना की सम्पूर्ण विधि का निर्देश करके मुनिराज वहाँ से चले गये।

राजा-रानी ने मुनिवर द्वारा बताये गये मार्ग का अनुसरण किया। नवपद की आराधना तथा अन्य प्रकार का तप किया। रानी की आठ सखियों तथा राजा के सात सौ सेवकों ने भी इस तपश्चर्या में भाग लिया। ऐसा करने से उन सभी के हृदय को शान्ति प्राप्त हुई।

कुछ समय और व्यतीत हुआ।

एक बार उस राजा श्रीकान्त ने अपने पड़ौसी राजा सिंह पर अपने सात सौ सेवकों के साथ आक्रमण कर दिया। उसकी नगरी का कुछ भाग लूट लिया तथा गायों के एक समूह पर भी अधिकार कर लिया। यह सूचना मिलते ही राजा सिंह भी शेर की तरह श्रीकान्त राजा पर टूट पड़ा। उसने उसके सात सेवकों को मृत्यु के घाट उतार दिया तथा अपनी सम्पत्ति तथा गायों को पुनः अपने अधिकार में कर लिया। राजा श्रीकान्त किसी प्रकार अपने प्राण बचाकर भाग निकला।

"हे राजन्! इस प्रकार उस राजा श्रीकान्त के वे सात सौ सेवक इस जन्म में क्षत्रिय हुए, किन्तु विगत जन्म में मुनिवर को सताने के कारण वे कोढ़ी हो गये। श्रीकान्त राजा का भी जब शरीरान्त हुआ तब वह अन्य पुण्यों के

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

प्रभाव से तुम्हारे रूप में उत्पन्न हुआ है। अर्थात् विगत जन्म के राजा श्रीकान्त ही आज तुम राजा श्रीपाल हो।

"किन्तु तुमने मुनियों को सताया था इसलिए तुम्हें भी इस जन्म में कोढ़ी बनना पड़ा, समुद्र में गिरना पड़ा और कलंकित भी होना पड़ा। तुमने जो ऋद्धि-सिद्धि प्राप्त की है वह नवपद की आराधना के ही परिणामस्वरूप है।

"श्रीकान्त की रानी की आठ सखियों ने भी नवपद की आराधना तथा अनुमोदना की थी। अतः वे इस जन्म में तुम्हारी छोटी रानियाँ हुई। इनमें से सब से छोटी रानी ने एक बार अपनी सौत से कहा था—'तुझे साँप काट जाय।' अतः उसे इस जन्म में सर्प ने काटा था। उन सात सौ सेवकों ने भी नवपद के माहात्म्य की अत्यन्त प्रशंसा की थी, अतः वे इस जन्म में राणा हुए।

"राजन्! उस सिंह राजा ने सात सौ सुभटों का नाश किया था, अतः उसे इसका बड़ा खेद हुआ था। अन्त में उसने चारित्र ग्रहण कर, एक मास का अनशन धारण कर शरीर त्याग किया था। दूसरे जन्म में वही सिंह राजा मेरे रूप में उत्पन्न हुआ। उस जन्म में तुमने मेरे राज्य पर आक्रमण कर उसे लूटा था, अतः मैंने इस जन्म में बाल्यावस्था में ही तुम्हारे राज्य को छीन लिया था। उस जन्म में सात सौ सुभटों को मैंने नष्ट किया था, अतः उन्होंने बाँधकर मुझे तुम्हारे सामने प्रस्तुत किया।

"राजन्! पूर्वजन्म के सुकृत्यों के कारण मुझे उसी

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

समय जाति-स्मरण ज्ञान हुआ। मैंने स्वयं को सम्हाला और चारित्र ग्रहण किया। क्रमशः मुझे अवधिज्ञान प्राप्त हुआ, अतः मैं तुम्हें उपदेश देने यहाँ आया।

"बस, अन्त में इतना ही कहना है कि तुम यह निश्चय जानो कि प्राणी जो कर्म करता है, उसका फल उसे भोगना पड़ता है। अतः प्राणी को बहुत सावधानीपूर्वक अपनी जीवन-चर्या रखनी चाहिए तथा यथा-सम्भव कर्म-बन्धन से बचना चाहिए।"

राजर्षि अजितसेन इस प्रकार श्रीपाल महाराज के पूर्वजन्म का वृत्तान्त उसे सुनाकर तथा सदुपदेश देकर मौन हो गये।

किन्तु यह कथा सुनकर श्रीपाल के मन में वैराग्य के भाव उदित हुए। उन्होंने कहा—

"पूज्य मुनिवर! आपके सदुपदेश से मेरा बड़ा कल्याण हुआ है। किन्तु इस समय मेरी अवस्था पूर्णरूप से चारित्र ग्रहण करने की नहीं है। अतः मुझे कोई ऐसी धर्मक्रिया बताइये जो मेरे लिए इस अवस्था में उपयुक्त हो और उससे मेरा कल्याण हो।"

राजर्षि ने श्रीपाल की प्रार्थना सुनी और कहा—

"राजन् श्रीपाल! अभी तुझे अनेक कर्मों का फल भोगना शेष है। अतएव इस जन्म में तुझे चारित्र की प्राप्ति होना कठिन है। किन्तु नवपद की आराधना करने से तू नवें देवलोक में देवता होकर उत्पन्न हो सकता है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

वहाँ से च्युत होने पर तुझे पुनः मनुष्य जन्म ग्रहण करना होगा। इसी प्रकार मनुष्य से देवता तथा देवता से मनुष्य होते-होते क्रमशः नवें जन्म में तुझे मोक्ष की प्राप्ति होगी।"

इतना कहकर राजर्षि उठ खड़े हुए और 'धर्म में आगे बढ़ो' यह आशीर्वाद प्रदान कर वे अन्य दिशाओं में विचरण करने चल पड़े।

× × ×

पुण्यात्मा श्रीपाल पर राजर्षि के अमृत-वचनों का गहरा प्रभाव पड़ा था। उनका मन अब संसार से विलग होकर मोक्ष प्राप्ति के लिए छटपटाने लगा था। उन्हें ऐसा प्रतीत होने लगा था कि प्रत्येक पल जो बीता जा रहा है, वह अमूल्य है। एक पल के लिए भी अब प्रमाद करना आत्मघात के समान ही है। अतः उन्होंने मैनासुन्दरी से कहा—

"प्रिये! राजर्षि के वचन तुमने भी सुने हैं। मैं अब पूर्णतः नवपद की आराधना में संलग्न हो जाना चाहता हूँ। तुम्हारा क्या विचार है?"

यह सुनकर मैनासुन्दरी प्रसन्न हो गई। उसने उत्साह में भरकर उत्तर दिया—

"नाथ! मैं तो आपकी चिर-सहचरी हूँ। मैं भी अनुभव करती हूँ कि समय को व्यर्थ नहीं जाने देना चाहिए। इस समय हमारे पास किसी वस्तु का अभाव नहीं है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अतः अब हमें नवपद की आराधना आरम्भ तो कर ही देनी चाहिए, बल्कि यह आराधना अधिक से अधिक समारोहपूर्वक करनी चाहिए ताकि उसका अधिक से अधिक सुफल हमें तथा साथ ही अन्य लोगों को प्राप्त हो।

× × ×

अपने समस्त राज्य का शासन-भार महाराज श्रीपाल ने अपनी ही प्रतिमूर्ति अपने ज्येष्ठ पुत्र त्रिभुवनपाल को सौंप दिया।

चम्पानगरी का समस्त वातावरण बदला हुआ था। सर्वत्र प्रेम और शान्ति की अमृत-वर्षा हो रही थी। महाराज श्रीपाल मैनासुन्दरी सहित पूर्ण समारोह पूर्वक, एक चित्त होकर नवपद की आराधना में संलग्न हो गये थे।

एक पुण्यात्मा महापुरुष का महान् जीवन अपने महानतम लक्ष्य—मोक्षप्राप्ति की ओर अग्रसर हो रहा था। कर्म के बन्धन एक-एककर टूटते जा रहे थे। अब तो देखते-सुनने वाले तथा हम सोचते हैं कि इस पुण्य कथा के पाठक भी विस्मयविमुग्ध तथा आनन्दमग्न सोचते होंगे—अहा! ऐसे पुण्यात्मा परम पुरुष का जन्म इस देवभूमि भारतवर्ष में अब फिर कब होगा? ⊙

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पुण्य - पुरुष

नवपद स्मरण की अद्भुत महिमा
शील, साहस, चातुर्य और परोपकार
की मनोहर कथा,
धारा प्रवाह रोचक भाषा-शैली में :-
पढ़ते-पढ़ते हृदय झूम उठेगा,
श्रद्धा और आचार की ज्योति जग
उठेगी, पढ़िए :-पुण्य-पुरुष
प्रसिद्ध विद्वान, इतिहास और
साहित्य मर्मज्ञ
श्री देवेन्द्र मुनि शास्त्री द्वारा लिखित

□ □

पांच रुपया मात्र

आ० पृ० के मुद्रक : ग्रेल प्रिन्टर्स, माईथान, आगरा-3

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org